गंगा-पुस्तकमाला का १७४वाँ पुष्प

जूनिया

[ग्राम्य जीवन-संबंधी सचित्र उपन्यास]

लेखक और चित्रकार

श्रीगोविंदवल्लभ पंत

(वरमाला, राजमुकुट, अंगूर की बेटी, संध्या-प्रदीप, मदारी, प्रतिमा, एकादशी, कंजूस की खोपड़ी आदि के रचयिता)

मिलने का पता—

गंगा-ग्रंथागार

३०, अमीनाबाद-पार्क

लखनऊ

द्वितीयावृत्ति

जिल्द २)] सं० १९[illegible] वि० [सादी [illegible])

वक्तव्य

हिंदी के प्रसिद्ध नाट्यकार तथा उपन्यास-लेखक श्रीगोविंद-वल्लभजी पंत ने यह उपन्यास लिखकर हिंदी-साहित्य में एक बड़े अभाव की पूर्ति की है। एक किसान को जाति-पाँति के पचड़ों में पड़कर किस प्रकार अपना धर्म-परिवर्तन करना पड़ा है, वह विद्या और शांति की खोज में किस प्रकार अपनी सारी शक्ति लगा देता है, फिर भाग्य-चक्र में पड़कर बड़ी-बड़ी मुसीबतें उठाते हुए किस प्रकार धर्म-प्रचार और सुधार में लग जाता तथा एक साधारण ग्रामीण होते हुए अपने परिश्रम और अध्यवसाय से किस प्रकार उन्नति करता है, इन सब बातों का इस पुस्तक में सुंदर चित्रण किया गया है। इसमें पर्वतीय जीवन और प्राकृतिक दृश्यों का जीता-जागता चित्रण है।

हर्ष का विषय है कि इसका प्रथम संस्करण हाथोंहाथ बिक गया, छ महीने में ही निकल गया, और आज यह दूसरा संस्करण हम हिंदी-संसार के समक्ष उपस्थित कर रहे हैं। आशा है, हमारे प्रेमी पाठक इसे भी प्रथम संस्करण की भाँति अपनाएँगे।

कवि-कुटीर
लखनऊ
१० । १२ । ३८

विषय-सूची

प्रथम खंड—मत-परिवर्तन

द्वितीय खंड—नौकरी

तृतीय खंड—विद्या की खोज

चतुर्थ खंड—भाग्य-चक्र

चित्र-सूची

प्रथम खंड
सत्ता परिवर्तन

पहला परिच्छेद

पटोत्तोलन

जुनिया के पूर्वज न-जाने कहाँ से आकर उस पहाड़ पर बस गए थे, ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता। उन्होंने कभी अक्षर और अर्थ का संग्रह नहीं किया; उन्होंने कभी कुचलनेवाले को हाथ में शस्त्र ले वक्र दृष्टि से नहीं देखा, कदाचित् इसीलिये इतिहासकार उनकी उपेक्षा कर गया।

अंधकार में भी कुछ आलोक है, और उजाले में भी कुछ अँधेरा। धनाभाव के कारण जुनिया के पूर्वज मोटा खाते और पहनते थे। वे प्रकृति के अधिक संसर्ग में थे, यही आशीर्वाद उनके साथ था। जब शिशिर की पहाड़ी वायु धनिकों के रुद्ध कक्ष में बाँज के कोयले धधकाती, और ऊन का अधिक उपयोग कराती, तब खेत में केवल फटा कोट पहने हाली अपने अंग और हवा के बीच में किसी परदे की कमी का अनुभव ही नहीं करता। अभ्यास ही ने हमें परिपूर्ण और सुखी बनाया है।

जुनिया के पूर्वजों की कहीं खेती न थी, घर-द्वार भी नहीं। किसी पहाड़ी ज़मींदार के खेत लेकर उन्हें बोते-काटते और उसके प्रतिदान में बिना कुटा और बिना पिसा अन्न पाते। उनकी स्त्रियाँ और बच्चे भी उन्हें सहायता पहुँचाते थे। खेती के अतिरिक्त वे लकड़ी, पत्थर, ताँबे और लोहे पर भी अपनी कारीगरी दिखाते थे। विवाह आदि उत्सवों को वे अपने गीत-वाद्य से मुखरित करते थे, और ग्राम्य देवतों तथा वीरों को जागरित करने में वे ही ढोल पीटते थे।

वे जिस ज़मींदार के आश्रित होकर रहते, उसे गुसाईं कहते थे।

जूनिया के पिता के गुसाईं व्यवहार-कुशल और सहृदय व्यक्ति थे। जूनिया के पूर्वज गुसाईं के पूर्वजों की लगभग एक सदी से सेवा करते चले आए थे।

चारो ओर चीड़ के पेड़ों से घिरी हुई पर्वत-मालाएँ हैं। उनके पत्तों पर झरते-लहराते अनेक नाले बरसात में अपनी छवि दिखाते हैं। नीचे आकर वे सब उन दो नदियों में मिल गए हैं, जो प्रायः पूरे वर्ष-भर सजल रहकर आस-पास की खेती को सफल करती हैं। दोनो नदियाँ पूरे मील-भर तक प्रायः समतल भूमि पर बहती हैं। उस विस्तार में तीन गाँव हैं। उत्तर की ओर सिरे पर जो गाँव है, वहीं जूनिया के पिता खेतों में हल चलाते थे।

गुसाईंजी ने जूनिया के पिता को जीवन की सभी आवश्यक सुविधाएँ दे रक्खी थीं। खाने-पीने को देते थे, नया-पुराना कपड़ा-लत्ता देते थे, नमक-तेल देते थे। मकान बनाने के लिये जगह दे रक्खी थी, फल-तरकारी उगाने के लिये कुछ ज़मीन भी उसके अधीन कर रक्खी थी।

जूनिया के पिता को कभी किसी अभाव का अनुभव नहीं हुआ। उसे जब कोई आवश्यकता हुई, गुसाईंजी ने ज़रूर उसका बहुत बड़ा हिस्सा पूरा किया।

जूनिया का जन्म हुआ। वह चलने-फिरने लगा। बालक की चपलता जब उसे गुसाईंजी के खेलते हुए बालकों की ओर खींचती, तब जूनिया की माता उसका हाथ खींचकर कहती—"हैं! हैं! वहाँ नहीं बेटा, उधर नहीं जाते।"

बालक जूनिया यदि अधिक ज़िद करता, तो उसकी माता उसे गोद में उठाकर अपने घर चली जाती थी। बालक धीरे-धीरे यह समझ गया कि गुसाईंजी के बालकों के साथ उसे नहीं खेलना चाहिए। क्यों नहीं खेलना चाहिए? इसका ठीक-ठीक उत्तर उसके

माता-पिता, किसी ने भी नहीं दिया। यह भेद उसके मस्तिष्क में पत्थर की लकीर बनकर पक्का हो गया।

वह और भी बड़ा हुआ। माता-पिता के साथ खेतों पर भी काम करने के लिये जाने लगा। एक दिन ग्रीष्म की दोपहर में वह गुसाईंजी के मकान के निकट ही खेतों पर काम कर रहा था। उसे ज़ोर की प्यास लगी। पास ही गुसाईंजी की बावली थी। जूनिया ने इधर-उधर देखा, कोई दिखाई नहीं दिया। वह चुपके से बावली की ओर बढ़ गया, और ज्यों ही एक चुल्लू भरकर पिया, और फिर उधर हाथ बढ़ाया, त्यों ही गुसाईंजी के भाई उधर लोटा लिए छींकते हुए निकल आए। जूनिया को देखते ही उसकी ओर दौड़ते हुए चिल्लाए—"मारो चांडाल को, तमाम बावली जूठी कर दी!"

जूनिया सिर पर पैर रखकर भागा। गुसाईंजी के भाई ने भूमि पर पड़ी हुई एक लकड़ी उठाकर उसे पीटने को उसका पीछा किया। जूनिया भागा हुआ अपने घर पहुँचा।

उसके पहुँचते ही गुसाईंजी के भाई भी आए, और क्रोध से लाल आँखें कर जूनिया के पिता से कहने लगे—"तुम्हारा बेटा हमारी बावली जूठी कर आया है, मैं उसे बिना पीटे नहीं छोड़ूँगा।"

पिता ने जूनिया की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखकर कहा—"क्यों रे, सच है न?"

जूनिया सिटपिटा गया। पिता ने उसके कई झापड़ लगाए।

जूनिया रोने लगा। उसकी माता घर के बाहर निकल आई, और कहने लगी—"क्या हो गया? क्यों उसे इतना पीट रहे हो? ठौर-कुठौर कहीं लग जायगी।"

गुसाईंजी के भाई बड़बड़ाते हुए चले—"इन्हें गाँव में जगह

दे रक्खी है, और हमें इनका जूठा खाना होगा। अंधेर की हद हो गई!"

स्वामी के पीठ फिराते ही पिता ने हाथ रोक लिया, और माता बीच में पड़कर बेटे को मकान के अंदर ले गई, तथा उसे कुछ गुड़ देकर शांत किया।

उस दिन से जूनिया ने गुसाईंजी के मकान की दिशा ही छोड़ दी।

जूनिया के मकान से दो मील ऊपर दो गाड़ी की सड़कें एक दूसरी को काटती हैं। यात्रियों की सुविधा के लिये वहाँ अनेक दूकानें हैं। उस स्थान का नाम चौमुखिया प्रसिद्ध है। चौमुखिया में जूनिया की बिरादरी का एक बढ़ई रहता था। वह चीड़ की नरम लकड़ी को छील-छालकर मकान के चौखटे-दरवाज़े बना लेता था। बैलगाड़ियों के पहिए भी जोड़ता था। वह लोहे का काम भी करता था। बैलों के नाल बनाकर ठोकता और बैलगाड़ियों के पहियों में लोहे का घेरा भी पहनाता था।

जूनिया उस बढ़ई की दूकान तक कभी-कभी हो आता था। जब जूनिया उसे गरम लोहा पीटते देखता, तब वह उड़ती हुई चिन-गारियों में अपने जीवन के स्वप्न निहारने लगता। पिता से पिटकर जब जूनिया के मन में स्वामी का विद्रोह पनपने लगा, तो वह खेती का काम छोड़ रोज़ उस बढ़ई की दूकान पर काम सीखने जाने लगा। शाम को घर आता, और सुबह खा-पीकर दस बजे तक वहाँ पहुँच जाता।

बढ़ई की दूकान पर जाते-जाते उसे छ महीने हो गए, पर मज़दूरी के नाम पर उसने कभी एक पाई भी नहीं पाई थी। बढ़ई उससे यही कहता था—"एक तख्ता सीधा नहीं चीर सकते, एक कील सीधी नहीं ठोक सकते। मेरी दो आरियों के दाँत तोड़

दिए, एक हथौड़ा खो दिया। तुम्हारी क्या मज़दूरी हो सकती है? धौंकनी चलाते हो, तो उससे क्या हुआ? कोई-न-कोई यहाँ तंबाकू पीने आ ही जाता है, और वही बाएँ हाथ से मेरी धौंकनी की डोरी खींचता रहता है। धीरज रक्खो, काम धीरे-धीरे ही आता है। काम के बन जाओगे, तो मज़दूरी बिना माँगे ही मिलेगी।"

जूनिया ने धीरज रक्खा। छ महीने और बीत गए। फिर भी उसे मज़दूरी कुछ न मिली। घर पर पिता उसे मूर्ख सिद्ध करते थे, और चौमुखिया में बढ़ई उसे बेवक़ूफ़ बनाता था। जूनिया के परिश्रमी होने में संदेह नहीं था, पर हाथ में सफ़ाई परिमित परिमाण ही की थी।

समय के अंतर ने जूनिया के मन के घावों पर मरहम-पट्टी कर दी थी। एक दिन उसकी माता ने कहा—"घर का काम देखो बेटा, चौमुखिया में कुछ नहीं रक्खा है। तुम्हें साल-भर वहाँ जाते-जाते हो गया, पर पैसे के नाम पर तुमने कानी कौड़ी भी नहीं दिखाई। तुम अब अवस्था में बढ़ चले, विवाह-योग्य हो गए हो। पिता का कहना मानो, जिससे शत्रुओं को हँसी उड़ाने का अवसर न मिले।"

जूनिया ने ज़रूरत से अधिक नरम पड़कर कहा—"मा, मैंने तुम्हारी और पिताजी की आज्ञा का उल्लंघन ही कहाँ किया। खेत पर काम करने को मैं तैयार हूँ। मिहनत करने से नहीं डरता, परंतु गुसाईं के घर के निकट काम करने नहीं जाऊँगा।"

"तो नदी-किनारे के खेतों पर ही जाया करो। तुम्हारे पिता की अवस्था बढ़ चली, उनसे अधिक परिश्रम नहीं हो सकता।"

जूनिया निर्दोष स्वर में कहने लगा—"मा, बावली में पानी बहता हुआ था। बहता पानी शुद्ध है, उसे कौन जूठा कर सकता है?"

माता—"कुछ भी हो बेटा, वह हमारे स्वामी हैं, उनकी बात माननी ही पड़ेगी, उनके आश्रय में रहना है।"

जूनिया ने उत्तेजित होकर कहा—"मैं उनका आश्रय ही छोड़ दूँगा मा! उनका गाँव त्यागकर कहीं चला जाऊँगा। मज़दूरी करने को हाथों में बल है, तो संसार में बहुत जगह है।"

जूनिया दूसरे दिन से चौमुखिया नहीं गया, घर ही पर खेतों में काम करने लगा। दिन-भर खेतों में हल चलाता, टूटी दीवारें चुनता, काँटे साफ़ करता, सिंचाई के बाँधों को बंद करता और खोलता था। कभी नदी-किनारे की पनचक्की पर पीसने को चला जाता, और कभी लकड़ी-घास के लिये जंगलों में भी धँस जाता।

इस प्रकार आठ वर्ष बीत गए। जूनिया अपने माता-पिता की एक-मात्र संतान थी। घर में एक व्यक्ति का मुख और देखने के लिये जूनिया की माता जूनिया का विवाह कर एक बहू ले आई।

हेमंत बीत चला। नंगे वृक्षों में कोपलें प्रकट होने लगी थीं, और आँगन का तुषार मिट चला था। अंतरिक्ष की आड़ से नवीन वसंत हँसने लगा। केतकी की लताओं में खिले हुए श्वेत पुष्प दसो दिशाओं में सुगंधि प्रसारित करने लगे। रसौंत के कुंज खिलकर उन पर सुवर्ण बिखर गया था। निरक्षर जूनिया में कोई भी भावुक वृत्तियाँ नहीं थीं। फिर भी जब वह कृषि के भार को कुछ हलका कर अपनी पत्नी के सिर पर रखता, तो उससे पूछता था—"भारी तो नहीं हुआ?"

उसकी स्त्री विनत पलकों में उत्तर देती थी—"नहीं।"

स्त्री भार वहन करने चली जाती, और जूनिया उसे देखते ही रहकर सोचता—इतनी सुंदर ऋतु इतनी मधुर होकर संसार में पहले कभी नहीं आई।

जूनिया के विवाह के पाँच वर्ष बाद उसकी माता सुरलोक

लिधारीं। काम का बोझ उस पर तथा उसकी स्त्री पर और भी बढ़ गया। जूनिया गुसाईंजी के मकान के निकट फिर नहीं गया। उसके मन में कुछ मैल नहीं था, पर वह हठी बहुत था, उसकी स्त्री ज़रूर गुसाईंजी के यहाँ काम-धंधा करने जाती थी।

पिता ने एक दिन जूनिया से कहा—"बेटा, गुसाईंजी के यहाँ चलकर उनसे क्षमा माँग लो। मैं बूढ़ा हो चला, मुझे कुछ ही दिन का मेहमान समझो। मेरे मरने पर गुसाईंजी से अदावत रक्खोगे, तो तुम्हारी इस गाँव में कैसे गुज़र होगी? फिर क्या खाओगे? कहाँ रहोगे?"

जूनिया ने सुदृढ़ होकर उत्तर दिया—"पिताजी, मज़दूर का कहीं घर नहीं। जहाँ भी वह चार पत्थर ढोकर दीवारें खड़ी कर लेता है, वहीं वह अपना सिर छिपाने के लिये मकान बना लेता है। जहाँ भी वह हाथ में कुदाल लेकर कपाल में पसीना निकाल लेता है, वहीं उसे तवे पर सेंकने के लिये पाव-भर आटा मिल जाता है। आप मन को व्यर्थ की चिंताओं से कमज़ोर न करें।"

उस वर्ष के अंदर-ही-अंदर जूनिया के पिता का भी शरीरांत हो गया। जूनिया को जहाँ भी अंधकार दिखाई देता, वहीं वह अपनी पत्नी को हाथ में टिमटिमाता हुआ प्रकाश लिए देखता।

जूनिया के पिता की मृत्यु के तीन महीने बाद, उसके गाँव के समीप के जंगल में, एक मनुष्य-भक्षक बाघ ने प्रवेश किया। उसने अनेक नर-नारियों को अपना ग्रास बनाया। आस-पास के समस्त प्रांत में उस हिंसक जीव का आतंक फैल गया। लोगों ने जंगल जाना छोड़ दिया, घरों में भी बड़ी सावधानी से रहने लगे।

नैनीताल के रिटायर्ड कप्तान हॉवर्ड साहब जंगली जानवरों के शिकार में बहुत बड़ी दिलचस्पी रखते थे। आपके शिकारी जीवन

की अनेकों स्मृतियाँ, आलोकचित्रों, खालों, सींगों तथा भुस-भरे जीवों के रूप में, आपके बँगले में सजी हुई थीं। मनुष्य-भक्षी जंतुओं के वध में आपने अनेक बार असम साहस और अद्वितीय वीरता का परिचय दिया था।

मनुष्य-भक्षी बाघ के समाचार हॉवर्ड साहब के कानों तक बिजली की गति से पहुँचे। उन्होंने उसी समय अपने नौकरों को कूच की आज्ञा दे दी। खानसामा ने उसी वक्त साहब की टिन-बोतलें, छुरे-काँटे, प्याले-तश्तरियाँ आदि सावधानी से पैक किए। बैरा ने उनके कपड़े, साबुन, टूथ-ब्रुश, सेफ़्टी रेजर, दर्पण, कंघी और बिस्तरा बाँधा। सईस उनके घोड़े को यात्रा के लिये तैयार करने में लग गया। साहब बंदूक़-बारूद के संग्रह में निरत हुए।

सुबह के आठ बजे होंगे। साहब नाश्ता कर चुके थे। नौकरों-चाकरों ने आध ही घंटे में सब तैयारियाँ कर दीं।

बैरा ने बड़े अदब से साहब के समीप जाकर कहा—"हुज़ूर, सब सामान तैयार है।"

"हमारा शिकारी तंबू भी बाँधा? शायद उसकी भी ज़रूरत पड़े।"

"वह भी शिकारी ने पैक कर लिया है हुज़ूर!"

"क़ुली?"

"चार डोट्याल क़ुली बुला लिए गए हैं।"

"यहाँ से चौमुखिया पगडंडी के रास्ते तेईस मील है?"

"जी हुज़ूर! गाड़ी की सड़क से पंद्रह मील का फेर है।"

"पगडंडी का रास्ता ठीक है न?"

"जी हुज़ूर, घोड़ा बड़े मज़े में जा सकता है।"

"हम भी पगडंडी के रास्ते जायँगे।" कहकर साहब ने शिकारी को बुलाया, और उसे बंदूक़ तथा कारतूस सौंपे।

शिकारी ने बड़े उत्साह के साथ बंदूक़ और कारतूस सँभाले।

साहब ने एक छः चेंबर का रिवॉल्वर निकालकर, शिकारी को देकर कहा—"इसे भी सावधानी से रक्खो।"

शिकारी ने मुसकाकर उसे भी सँभाला।

साहब हँसते हुए बोले—"आज बहुत खुश हो! बहुत दिनों में शिकार मिला है, क्यों? यहाँ बैठे-बैठे सुस्त हो गए थे न? हम पैदल ही उसका शिकार करेंगे, मचान नहीं बनेगा।"

"हुज़ूर के लिये यह नई बात नहीं है। पिछले साल ही तो आपने बनकटिया के जंगल में पैदल ही वह शेरनी मारी थी।" कहकर शिकारी ने बँगले के बरामदे की ओर संकेत किया। वहाँ भुस-भरी शेरनी खड़ी थी।

हॉवर्ड साहब ने कुछ आँखें मूँदकर, किसी अतीत को याद करते हुए, कहा—"वह शेरनी सुंदर थी, उसे जीवित ही पकड़कर पाल लेने की इच्छा होती थी।"

शिकारी ने उनकी हाँ में हाँ मिलाई।

कप्तान साहब ने कहा—"चलो, कूच करें। शाम को मंज़िल पर पहुँचना है।"

कप्तान साहब, उनका खानसामा, बैरा, सईस, शिकारी और माल से लदे हुए चार डोट्याल चले। कप्तान साहब घोड़े पर थे। रास्ते का अधिकांश सहज गम्य था। एक ही बजे चौमुखिया के डाक-बँगले पर पहुँच गए। तीन बजे तक उनके नौकर और पाँच बजे तक उनके डोट्याल भी आ पहुँचे।

चुटकियों में, साहब के तमाम नौकरों ने मिलकर उनका सामान खोल डाक-बँगले में सजा दिया। पर साहब को आराम-कुर्सी पर चैन कहाँ। उनका शिकारी मार्ग से ही मनुष्य-भक्षी के सच्चे और ताज़े समाचार एकत्र कर लाया था।

शिकारी ने साहब के निकट जाकर कहा—"हुज़ूर, बाघ ने अब

तक पचीस नर-नारियों का भोजन किया है। ये पटवारी के पास के अंक हैं, जो शीघ्र ही आपको सलाम करने आपकी सेवा में हाज़िर होगा। यहाँ से तीन मील नीचे एक गाँव है। गाँव के नज़दीक ही एक शिवजी का मंदिर है। कल शाम को, ख़ूब उजाला रहते ही, बाघ मंदिर के अंदर घुस गया, और पुजारी को खींचकर, पास ही जंगल में ले जाकर खा गया। सारे गाँव और उसके आस-पास त्राहि-त्राहि मची हुई है। गाँववाले दिन में भी द्वार बंद कर मकानों के अंदर बैठे हैं। यहीं चौमुखिया में देखिए, कितनी शून्यता है हुज़ूर, कोई भी अकेला नहीं दिखाई देता। लोगों ने इस दिशा को छोड़ दिया। आज हमें रास्ते में ही कितने कम यात्री नज़र आए।"

साहब ने उसी समय शिकार को चलने की उत्तेजना प्रकट की। शिकारी भी पूरे उत्साह से उनका साथ देने को तैयार हो गया। बैरा, खानसामा और चारो डोट्याल क़ुली भी साथ चलने के लिये राज़ी कर लिए गए। उसी समय चार आदमियों और अपनी बंदूक़ को लेकर पटवारी साहब भी आ पहुँचे।

छ उस समय नहीं बजे थे। सूरज डूबने में अभी कुछ देर थी। बाघ के घबराने को तुमुल ध्वनि उत्पन्न करने के लिये कुछ लोगों ने मिट्टी के तेल के ख़ाली कनस्तर गले में लटकाए, हाथों में लाठियाँ लीं। अंधकार में पथ देखने के लिये कुछ लालटेनें भी ले ली गईं।

हॉवर्ड साहब सदल-बल गाँव की ओर चले। वह गाँव जूनिया के गुसाईंजी का और वह मंदिर तथा पुजारी भी उन्हीं के थे। जूनिया का घर पथ के निकट ही था। शिकारियों का शोर सुनकर, वह भी उत्सुकता से प्रेरित हो उनके साथ होने लगा।

पत्नी ने उसका हाथ खींचकर कहा—"नहीं, वहाँ न जाओ।"

जूनिया ने हाथ छुड़ाकर कहा—"जाने दो, इतने आदमी हैं, डर की कोई बात नहीं। अगर उसी बाघ का ग्रास होना है, तो वह मकान के अंदर भी आ सकता है। डरो मत, दरवाज़ा बंद कर लो सानी!"

सानी जूनिया की पत्नी का नाम था।

जूनिया ने तेज़ी के साथ आँगन से अपनी कुल्हाड़ी उठाकर कंधे पर रक्खी, और दौड़कर शिकारियों के दल में जा मिला। सानी ने हाथ जोड़कर भगवान् से प्रार्थना की—"हे परमेश्वर! कुशल करना।"

गुसाईंजी के घर से कुछ फ़ासले पर, जंगल के निकट ही, शिव-मंदिर था। शिकारियों को वहाँ तक पहुँचने में कुछ भी देर नहीं लगी। सूरज अभी-अभी डूबा था।

हॉवर्ड साहब ने मंदिर के निकट पहुँचते ही बाघ के पद-चिह्न और रक्त के छींटे तलाश करने आरंभ किए। पटवारीजी ने उन्हें मंदिर के अंदर न जाने की सलाह दी।

साहब को मंदिर के बाहर ही रक्त-बिंदुओं का सूत मिल गया था। वह उनके सहारे सावधानी से बंदूक सँभाल आगे बढ़े। उनका शिकारी और पटवारीजी भी अपनी-अपनी बंदूकें लिए कुछ फ़ासले पर उनके साथ-साथ चले, और शेष दल उनके पीछे-पीछे हो लिया।

निकट की एक गुफा के द्वार तक सूत बराबर मिलता गया। गुफा से कुछ दूर पर खड़े होकर कप्तान साहब कहने लगे—"मेरा अनुमान है, बाघ इसी गुफा के अंदर है। बहुत सावधानी से काम लेने की ज़रूरत है। ज़रा-सा चूक जाने पर प्राणों से हाथ धोना पड़ेगा।"

जूनिया भय से काँपने लगा। ढोल्यालों ने कनस्तर पीटकर

एक अजीब ध्वनि पैदा की। कुछ-कुछ अँधेरा हो चला था। साहब ने लालटेनें जलाकर बत्ती कम कर लेने की आज्ञा दी।

अचानक साहब को गुफा के अंदर दो चमकते हुए नेत्र दिखाई दिए। उन्होंने शिकारी और पटवारीजी को सावधान किया, तथा शेष दल से दौड़कर दक्खिन का मार्ग रोक लेने को कहा। आज्ञा पाते ही वे तुरंत भागे। जूनिया की धोती एक झाड़ी में अटक गई, और वह वहाँ अकेला ही रह गया।

बाघ गुफा के द्वार पर आया, और जूनिया को अकेला पाकर उसकी ओर ताकने लगा। जूनिया को और कुछ न सूझा, वह मंदिर की तरफ़ भागा। बाघ जूनिया की दिशा में कूदना ही चाहता था कि साहब ने आज्ञा दी—"गोली छोड़ो।"

जूनिया मंदिर में पहुँच गया था। मृत्यु के भय ने उसके पैरों में अद्भुत शक्ति दे दी थी। जूनिया मंदिर के अंदर घुस गया, और द्वार ढक लिए।

"धड़ाम्! धड़ाम्! धड़ाम्!"—तीन गोलियाँ एक साथ छूटीं।

बाघ घायल होकर हवा में कई फ़ीट ऊँचा उठा, और भयानक चीत्कार छोड़कर भूमि पर गिर पड़ा। कप्तान साहब ने फिर गोली छोड़ने का हुक्म दिया, तीन गोलियाँ उस पर और पड़ीं।

बाघ ने भूमि पर छटपटाकर प्राण दे दिए। सबकी जान में जान आई। डोट्यालों ने शोर कर आस-पास के गाँवों को प्रतिध्वनित कर दिया—"बाघ मार डाला गया! बाघ मार डाला गया!"

लालटेनों की बत्तियाँ तेज़ कर दी गईं। मृत बाघ बाँधा गया, और डोट्याल उसे लादकर कनस्तर बजाते, जय पुकारते चौमुखिया की ओर चले। ग्रामवासियों का दल-का-दल बाघ और उसे मारने-वालों के दर्शन के लिये आने लगा। जूनिया भी शोर सुन, मंदिर के द्वार खोल उन लोगों में जा मिला।

अनेक लोग उन्हें चौमुखिया तक पहुँचाने गए। चौमुखिया के डाक-बँगले में रात के बारह बजे तक ख़ूब चहल-पहल रही। साहब ने डोट्यालों की मज़दूरी के सिवा पाँच रुपए इनाम के दिए। डोट्याल एक बकरी खरीद लाए, और उसे मार-पकाकर उत्सव मनाने लगे। खा-पीकर डोट्यालों का गीत-नृत्य हुआ।

जूनिया ने भी घर पहुँचकर सानी से कहा—"ख़ुशी मनाओ, और पूरियाँ पकाओ! आज जूनिया मृत्यु के मुख से निकलकर आया है।"

तीन-चार दिन में ही कप्तान हॉवर्ड साहब का यश दूर-दूर फैल गया। सरकार ने भी उनके गुण गाए, और उन्हें इनाम दिया। इनाम का सारा धन कप्तान साहब ने शिकारी को दे दिया।

दूसरा परिच्छेद

ग्राम-त्याग

दूसरे दिन प्रभात होते ही जब गुसाईंजी बाघ के वध से निडर हो रहे थे, तब किसी ने जाकर उन्हें यह सुनाया कि रात को जूनिया ने शिवजी के मंदिर में घुसकर उसे अपवित्र कर दिया है!

गुसाईंजी नख से शिखा-पर्यंत भड़ककर कहने लगे—"कौन कहता है?"

आगंतुक ने तुरंत ही उत्तर दिया—"मैं कहता हूँ, और कहता कौन है। कल रात ही पटवारीजी ने मुझे सारी कथा सुनाई थी। मंदिर पूजा के योग्य नहीं रहा।"

"हैं! मंदिर पूजा के योग्य नहीं रहा, मेरे सात पुरखों द्वारा प्रतिष्ठित शिवजी का मंदिर चांडाल ने अपने पाप-प्रवेश से कलंकित कर दिया, हा! भगवान्! शूलपाणि! तुम्हारा तीसरा नेत्र नहीं खुला! चांडाल तुम्हें रौंदकर चल दिया, और तुम अपना त्रिशूल खोजते ही रह गए!"

गुसाईंजी के क्रोध का पारावार नहीं रहा। उन्होंने तत्क्षण अपने भाई से पुकारकर कहा—"ले आ, मेरी लाठी ले आ, मैं उस चांडाल के बच्चे को आज जीता न छोड़ूँगा।"

गुसाईंजी को उत्तेजित देखकर भाई उनकी लाठी अंदर छिपाकर बाहर आया, और उन्हें शांत करने के लिये बोला—"जाने दीजिए, जो होना था, हो चुका। आप स्थिर होकर बैठिए, मैं अभी जाकर उसकी ठीक-ठीक मरम्मत कर आता हूँ।"

आगंतुक कहने लगा—"आप भी उसके यहाँ न जाइए। मालूम नहीं, बातों-ही-बातों में नौबत कहाँ तक बढ़ जाय। आपका हाथ चल जाने पर कहीं उसने भी पत्थर उठाया, तो अच्छी बात न होगी।"

गुसाईंजी बोले—"इस बेईमान को हमने खाने-कमाने को खेत दिए, रहने को जगह दी, और इसने हमारा मंदिर अपवित्र कर दिया! मैं उसे अब एक क्षण के लिये भी अपनी भूमि पर खड़ा नहीं देखना चाहता।"

गुसाईंजी क्रोध से काँप रहे थे। आगंतुक और उनके भाई ने उन्हें पकड़कर बिठाया।

गुसाईंजी ने अपने एक सेवक को बुलाकर कहा—"जाओ, उस कमीने को बुलाकर मेरे सामने लाओ।"

सेवक जूनिया के घर की ओर चला।

गुसाईंजी का क्रोध कुछ शांत हो गया था। आगंतुक कहने लगा—"मंदिर का वायु-मंडल हवन और वेद-मंत्रों से शुद्ध कर दिया जायगा। मूर्ति की फिर से प्राण-प्रतिष्ठा कर दी जायगी।"

सेवक ने जूनिया के घर पर जाकर पुकारा—"जूनिया रे! कहाँ घुसा बैठा है? चल, निकल।"

जूनिया ने रात में ही कल्पना कर ली थी कि गुसाईं को उसके मंदिर-प्रवेश की बात ज्ञात हो जाने पर फिर वह उस गाँव में न रह सकेगा। वह उस गाँव को बहुत दिनों से छोड़ देना भी चाहता था।

उस दिन सुबह उठते ही जूनिया ने अपनी स्त्री से कहा—"रानी! इस गाँव से अब हमारा अन्न-जल उठ गया है। मैं चौमुखिया में जाकर नया गुसाईं तलाश करता हूँ। तुम मेरे आने तक लोटा-तवा, नोन-तेल, कपड़ा-कंबल आदि बाँधकर रख लेना।

अनाज का कोई दाना हमारे घर में है नहीं, बैल दोनो गुसाईंजी के ही हैं। एक बूढ़ी बकरी है, उसे हाँक ले चलेंगे। इसके सिवा और हमारे पास है ही क्या? घास और लकड़ी का संग्रह है। उसे ढोकर क्या करेंगे? जंगल ही से न ले आवेंगे।"

जूनिया चौमुखिया चला गया था, और अभी तक वापस नहीं आया था।

सेवक ने कर्कश स्वर में फिर कहा—"तेरे कान बहिरे हैं? सुनता नहीं है रे जूनिया!"

सानी ने बाहर निकलकर, दबे स्वर में कहा—"घर पर नहीं हैं, चौमुखिया की तरफ़ गए हैं।"

"हूँ, घर पर नहीं हैं। गुसाईंजी का मंदिर अपवित्र कर दिया। ऐसा घमंड उसे हो गया। देवता कुपित हुए हैं, और अब जूनिया उनके शाप से बचकर निकल नहीं सकता।"

"ऐसा न कहो, ऐसा न कहो, वह सब जान-बूझकर नहीं किया गया। प्राणों पर आ बनी थी, प्राण किसे प्रिय नहीं? देवता बड़े-छोटे, दोनो ही के हैं।"

"देवता इनके भी हैं! चल चुड़ैल! अभी मालूम हो जायगा, गुसाईंजी बुलाते हैं।"

"चलिए।"

सानी जाकर गुसाईंजी के सामने खड़ी हुई। सानी बहुत परिश्रमी और सीधे-सादे स्वभाव की स्त्री थी। गुसाईंजी ने उसे देखकर कहा—"सानी! तेरे पति ने अक्षम्य अपराध किया है। मैं उसे क्षमा नहीं करूँगा, और कदाचित् देवता भी नहीं। तेरा श्वशुर बड़ा नेक था, मुझे तुझ पर भी दया आती है। मैं उसका मुँह देखना नहीं चाहता। मेरा क्रोध न बढ़े, इसलिये तू जा, और उससे कह दे, मेरा गाँव छोड़कर चला जाय—आज ही चला

जूनिया

सानो ने घर आकर देखा, जूनिया लौटकर एक चोड़ के कटे तने पर बैठा उसकी प्रतीक्षा कर रहा था।

गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस, लखनऊ

जाय। मेरे खेत उसके बिना बिना जुते रह जायँ, मगर मैं उसे अब इस गाँव में आबाद नहीं देख सकता।"

सानी की आँखों में आँसू भर आए।

गुसाईंजी तत्क्षण फिर कहने लगे—"जा, अभी जाकर कह दे।"

सानी ने आदर-पूर्वक पीठ फिराई, और आस-पास के पथों, खेतों और वृक्षों पर आर्द्र दृष्टिनिक्षेप करती हुई चली। उसका मन बिछोह की पीड़ा से बेचैन होने लगा, और वह मन-ही-मन सोचती हुई चली—क्या सचमुच ये सब कुछ मुझे छोड़ देने पड़ेंगे? आज ही!

सानी ने घर आकर देखा, जूनिया लौटकर एक चीड़ के कटे तने पर बैठा उसकी प्रतीक्षा कर रहा था।

सानी ने पति के निकट जाकर बड़े गंभीर स्वर में कहा—"गुसाईंजी बहुत नाराज़ हैं।"

"क्यों?"

"तुमने उनके मंदिर में प्रवेश कर उसे अपवित्र कर दिया।"

"सानी, देव-मंदिर की इमारत मेरे पुरुषाओं ने एक-एक पत्थर ढोकर चिनी है। उसके अंदर की मूर्तियाँ भी उन्होंने ही गढ़ी हैं। वे देवता की पूजा कर वरदान लेनेवाले हो गए, और हम, उनके चरणों की धूल, जब काल हमें निगलने के लिये जबड़ा फैलाता है, तब उसके अंदर जाकर अपनी प्राण-रक्षा भी नहीं कर सकते!"

"वह कहते हैं, आज ही हमारे गाँव से निकल जाओ।"

"जूनिया इन बातों से डरनेवाला नहीं, वह कब का इस गाँव से निकल गया। उदास न होओ प्रिये! चलो, मैं तुम्हें इस संकुचित गड्ढे से निकालकर उदार विस्तार में ले चलूँगा, जहाँ मनुष्य के अधिकार इस तरह आँखें बंद कर पैरों से मसल नहीं दिए जाते। चलो, जूनिया अब एक क्षण इस भूमि पर टिका नहीं रह सकता।"

सानी की आँखों से दो आँसू की बूँदें पृथ्वी पर गिर पड़ीं।

"यह क्या, तुम रोने लगीं! मैं चौमुखिया में मकान ठीक कर आया हूँ, और एक नए गुसाईं तलाश कर आया हूँ। उन्होंने मुझे काम देने का वादा किया है। तुमने बिस्तर-बर्तन बाँध लिए हैं न?"

सानी ने सिर हिलाकर कहा—"हाँ।"

जूनिया—"चलो, सामान ही कितना है, मैं सिर पर लादकर ले चलता हूँ।"

"गुसाईंजी से मिलने नहीं जाओगे?"

"नहीं।"

"क्या कहेंगे?"

"जो चाहें कहें। जूनिया ने कभी उनके साथ बेईमानी नहीं की है, इसीलिये उसे उनका कुछ भी भय नहीं। चलो, अब देर करने की आवश्यकता नहीं।"

जूनिया ने बर्तन-बिस्तर सिर पर रख लिए। एक डलिया में कुछ चीज़ें रख सानी ने अपने मस्तक पर सँभालीं।

दोनो कुछ देर में चौमुखिया जा पहुँचे। जूनिया ने बढ़ई को अपनी कष्टकथा सुनाकर पाँच-सात दिन के लिये रहने को एक कोठरी माँग ली थी।

जूनिया के नए गुसाईं की चौमुखिया के आस-पास पर्याप्त खेती थी, कुछ लेन-देन का काम भी करते थे, और चौमुखिया में उनके दो मकान भी थे। एक मकान किराए पर दिया गया था। दूसरे में नीचे उनकी कपड़े और किराने की दूकान थी, और ऊपर वह रहते थे।

जूनिया चौमुखिया में आते ही उनके निकट गया। वह उस समय दूकान पर बैठे थे। जूनिया बाहर ज़मीन पर बैठ गया।

गुसाईंजी ने कहा—"क्यों रे जुनिया, आ पहुँचा ?"

"जी सरकार, आ पहुँचा। अब आपकी ही शरण हूँ।"

"हमारी शरण क्या है, अपने परिश्रम की शरण हो। परमेश्वर की दया से मेरे पर्याप्त खेती है। कमा-खा, कुछ हमें भी दे।"

"पर सरकार, मैं हल अब नहीं चलाऊँगा।"

"तो क्या कुर्सी पर बैठेगा ?"

"नहीं, कुर्सी पर बैठने की बात नहीं कहता। राज-मज़दूर का काम करूँगा, बढ़ई का काम भी मैंने सीखा है, और कई महीनों तक लोहा भी पीटा है। उधर झरने की बग़ल में जो आपका खेत है, उसमें मुझे एक झोपड़ी खड़ी कर लेने की आज्ञा दीजिए। गाड़ी की सड़क के पास यह ज़मीन आप ही की है। इसमें एक नया मकान बनाने का मुझे ठेका दे दीजिए। देखिए, कैसा सुंदर, बिलकुल नए फ़ैशन का मकान मैं आपके लिये बना देता हूँ।"

गुसाईंजी ने हँसकर कहा—"अच्छा, फिर देखा जायगा, इस समय जा।"

"मकान बना लीजिए सरकार ! बड़े मौक़े की जगह है।"

"अरे, पैसा भी तो मकान बनाने को चाहिए !"

"पैसा क्या चाहिए। लकड़ी-पत्थर से तमाम पहाड़ बने ही हुए हैं। सरकार से इजाज़त लेने-भर की देर है। मिहनत मेरी रही, कुछ कील-छपके देस से मँगा लीजिए। सैकड़ों बैलगाड़ियाँ आती-जाती रहती हैं।"

"देखा जायगा।"

"तब तक मेरे रहने का कुछ ठौर-ठिकाना कर दीजिए। झरने के पास की ज़मीन दे दीजिए। वहाँ आपके लिये तरकारी उगाऊँगा, और एक झोपड़ी बनाकर चौकसी करूँगा।"

"उस ज़मीन के लिये मुझसे कई लोगों ने कह रक्खा है। बोल, साल में उसके लिये क्या देगा?"

"जो उचित रक़म आप निश्चित करेंगे, वह दूँगा, क्यों नहीं दूँगा। इसके सिवा मैं तो आपका हर समय का सेवक ठहरा।"

"पर तू एक बात गड़बड़ कर रहा है।"

"कौन-सी?"

"यही हल न चलाने की बात।"

"गुसाईंजी, हल चलानेवाले तो सैकड़ों घूमते-फिरते हैं, मगर मैं आपको कुछ कारीगरी कर दिखाऊँगा।"

"मैं तेरे परों को गाँव छोड़ नगर की ओर जाते हुए देखकर ही समझ गया था। एक बात तो बता, तूने अपने पुराने गुसाईं को क्यों छोड़ दिया? क्या उन्होंने तुझसे 'चला जा' कह दिया?"

"सारी बात अन्न-जल की है। वह पूरा हो गया। मैं बरसों से उस गाँव में पड़े-पड़े घबरा गया था। पिताजी के कारण अब तक रहा। अब अवसर मिला, और चला आया।"

"आख़िर कारण भी तो कुछ हुआ ही होगा।"

"चोरी-बेईमानी कुछ नहीं की। कल बाघ के शिकार की बात तो आप जानते ही हैं सरकार!"

"हाँ, तू उनके मंदिर में घुस गया था?"

"बस, यही कारण है। नाराज़ होकर मुझसे 'ज़मीन छोड़ चला जा' कह दिया। मैं चला आया। आपकी ही आशा में आया हूँ। झरने के पास वह जगह मुझे दे दीजिए। मैं कल ही से उसमें रहने को झोपड़ी बना लेता हूँ।"

"जूनिया! तेरा पिता बड़ा सीधा पुरुष था, कुछ जानता ही न था। तू बात करने में बड़ा निपुण हो गया है। अच्छा, इस समय जा, कल आना।"

"जो आज्ञा सरकार ! तो मैं कल से पत्थर ढोना शुरू कर देता हूँ। खाने को न भी हो, सिर छिपाने को कुछ हो जाना चाहिए।"

"वह भी हो जायगा।"

"कल अच्छा दिन है, मैं कल ही से वहाँ दीवार खड़ी कर देना शुरू करता हूँ।"

नए गुसाईं ने सिर हिलाते हुए कहा—"हूँऽऽ, हूँऽऽ।"

जूनिया ने सानी के पास जाकर कहा—"सब ठीक कर आया हूँ। झरने के पास की ज़मीन गुसाईंजी ने मुझे दे दी है। वहीं एक कोने में एक झोपड़ी खड़ी कर लेंगे। हमारे कमाने-खाने-भर को बहुत है। निकट ही नगर है। तरकारी उपजाकर वहाँ बेच लाएँगे। जो कुछ पैसा प्राप्त होगा, गुसाईंजी को देंगे। कुछ बच जायगा, तो उससे अपना नोन-कपड़ा चलाएँगे।"

सानी ने चिंतित होकर एक गहरी साँस ली।

जूनिया उसे धीरज देते हुए कहने लगा—"तुम सोच में क्यों पड़ गईं। गुसाईंजी यहाँ एक मकान और बनाने का विचार कर रहे हैं। मुझे उसका ठेका मिलेगा। चिंता छोड़ दो, अब हमारे खाने-पहनने का कष्ट जाता रहेगा। अब जूनिया हल हाथ में नहीं लेगा।"

"तो कैसे दिन पार होंगे!"

"होंगे कैसे नहीं। अगर ज़मीन खोदनी ही पड़ेगी, तो कुदाल से खोदूँगा, मगर हल न छुऊँगा, न छुऊँगा, न छुऊँगा। तुम ख़ूब जानती हो सानी! जूनिया बड़ा बेढब सिड़ी है।"

"मकान कच्चा बनाओगे?"

"कच्चे का क्या काम। झरने के पास ही पर्याप्त पत्थर पड़ा हुआ है। अपने हाथ के काम करनेवाले हैं, चार दीवारें खड़ी करते क्या देर लगती है। दो-चार छोटे-छोटे चीड़ के पेड़ कहीं से

फाट लाऊँगा, उन्हें छत में जमाकर चीड़ की पत्तियों से उसे छा डालेंगे।"

सानी के मुख पर कुछ संतोष की छाया उदित देखकर जूनिया बढ़ई की दूकान की ओर बढ़ा।

दूकान में बैठे हुए बढ़ई ने तंबाकू पीते-पीते कहा—"कहाँ हो आया जूनिया! आ बैठ, तंबाकू पी।"

जूनिया बैठते हुए बोला—"यहीं गुसाईंजी के पास गया था।"

"क्या कहते हैं? कहीं ठौर-जगह देने को राज़ी हैं?"

"हाँ, राज़ी कर आया हूँ।"

जूनिया के मन में जो बढ़ई बन जाने की इच्छा पोषित हो रही थी, उसे उसने प्रकट नहीं किया।

बढ़ई बोला—"काम क्या करेगा?"

जूनिया ने अवसर पाकर कह ही तो दिया—"तुम्हारे चरणों के पास बैठकर कुछ हथौड़ा पीटना सीखा है। उसी से कहीं पत्थर तोड़, लकड़ी फोड़ कमा खाऊँगा, पर हल नहीं चलाऊँगा।"

बढ़ई ने अपनी घबराहट छिपाकर कहा—"कहाँ फेर में पड़ गया है। मेरी ही दूकान पर काम कर। कुछ मज़दूरी भी दूँगा, दूँगा।"

जूनिया कहने लगा—"तुम्हारा भरोसा है। जब तुम्हारे पास काम बढ़ जाय, तब मुझे खबर कर देना, मैं दिन-रात खपकर उसे पूरा कर जाऊँगा। रह गई मज़दूरी की बात, तुम्हें जो पसंद हो, देना। न भी दोगे, तो क्या चिंता है, पेट पालने को कहीं-न-कहीं से मिल ही जायगा।"

जूनिया ने दूसरे दिन प्रभात ही से पत्नी-सहित गुसाईंजी की ज़मीन पर जा अधिकार जमाया, और सात दिन में ही रहने-भर को मकान बना डाला।

समस्त ग्रीष्म-ऋतु उस दंपति ने मकान के चारो ओर दीवारें चुनकर खेत तैयार करने में बिता दी। उन्होंने खेतों में नाना प्रकार की तरकारियाँ बो दीं। जल समीप ही था। उन्होंने भूमि सींचकर अपने मकान के चारो ओर हरियाली उपजा दी।

गुसाईंजी अपना मकान बनवाने को राज़ी नहीं हुए, पर उन्होंने अपने एक ठेकेदार मित्र से जूनिया की सिफ़ारिश कर दी। उन्होंने निकट ही, गाड़ी की सड़क पर, एक नया पुल बनाने का ठेका ले रक्खा था। कुल काम दस हज़ार का था। उन्होंने जूनिया को पाँच आने रोज़ पर पत्थर छीलने में रख लिया।

धीरे-धीरे जूनिया के दिन सुधरते दिखाई देने लगे। उसकी पत्नी कभी-कभी गुसाईंजी के यहाँ छोटा-मोटा काम करने चली जाती, और कुछ खाने को ले आती। तरकारी बेचकर भी जूनिया ने कुछ पैसा कमाया, पर इतना नहीं, जितनी आशा थी।

उस नूतन निवास में जूनिया के दिन बीतने लगे। उसने हल पर हाथ सचमुच फिर नहीं रक्खा।

तीसरा परिच्छेद

पीटरलाल

परभू जूनिया की बिरादरी के रिश्ते में चाचा था। अवस्था में उससे दस वर्ष बड़ा होगा। बचपन में माता-पिता से लड़-झगड़कर खरी मज़दूरी की खोज में ज़िले की राजधानी को भाग गया।

परभू महीनों तक राजधानी में मारा-मारा भटका किया। दिन-भर बोझ ढोता; और जो कुछ पाता, उससे पेट भरकर मिशन स्कूल के बरामदे में, किसी प्रकार करवटें बदलकर, रात काट देता।

उसे उसके इष्ट-मित्र, सुहृद्-परिचित, जो भी मिले, सबने उसे फटकारें बताकर घर लौट जाने का उपदेश दिया। परभू नगर की चकाचौंध, चहल-पहल से ऐसा आकृष्ट हो गया था कि उसका पैर भूलकर भी नीरव और नीरस गाँव की ओर न पड़ता था। उसे एक वक़्त आधे पेट खाकर पेड़ के नीचे की शय्या क़बूल थी, पर सब प्रकार का सुख प्राप्त करने को गाँव में जाना नहीं।

परभू रोज़ रात को पहले स्कूल के बरामदे की फ़र्श पर सोता था, उजाला होने से पहले ही वहाँ से चला जाता। स्कूल के चौकीदार ने उसे कई दिन वहाँ सोने से मना किया। बाद को वह परभू की अनुनय-विनय से पराजित हो गया, और मन में सोचने लगा, जाने भी दो, बेचारे ग़रीब का कहीं घर नहीं है।

चौकीदार ने फिर परभू से कुछ नहीं कहा। तब से परभू बरामदे में पड़ी एक मेज़ पर सोने लगा।

बरसात के अंत में परभू बुख़ार से पीड़ित हो गया। दो रोज़ बुख़ार में ही उठकर मज़दूरी की खोज में गया। तीसरी रात को उसे

बड़ा रौद्र ज्वर चढ़ा, और सुबह जब सूरज आकाश में चढ़ गया था, परभू बरामदे में सोता ही रह गया।

चौकीदार ने उसके पास आकर कहा—"परभू, परभू, तू सोता ही रह गया। देख, कितना दिन उग गया।"

परभू ने कुछ नहीं सुना। वह ज्वर में बेहोश पड़ा था।

चौकीदार ने घबराकर ज्यों ही उसका स्पर्श किया, त्यों ही कहने लगा—"इसे तो बड़ी ज़ोर का बुखार है।"

परभू ने व्यथा-भरी साँस छोड़कर करवट बदली।

चौकीदार ने कहा—"परभू, स्कूल खुलने का समय होनेवाला है, उठो, और कहीं दूसरी जगह जाकर सोओ।"

परभू ने फिर करवट बदलकर कुछ कहने की कोशिश की, पर कृतकार्य न हुआ।

चौकीदार घबरा उठा, और दौड़ा-दौड़ा स्कूल के मैनेजर पादरी स्टेनली साहब के बँगले पर गया, और उनसे सारा हाल बयान किया।

पादरी साहब अपने साधु स्वभाव के लिये समस्त ज़िले-भर में प्रसिद्ध थे। उनकी करुणा की धारा नीच-ऊँच, काले-गोरे, धनी-निर्धन और मत-मतांतरों के भेद से उन्मुक्त होकर सब पर समान भाव से बरसती थी।

चौकीदार की बात सुनकर पादरी साहब ने मीठी वाणी में कहा—"तो जाओ भाई, उस ग़रीब को किसी तरह सुख-पूर्वक अस्पताल में पहुँचाओ, मैं डॉक्टर के लिये पत्र लिख देता हूँ।"

पादरी साहब को उस विदेशी के लिये चिंतित देखकर चौकीदार का भी स्नेह-भाव उमड़ पड़ा। उसने जाकर परभू को अस्पताल में दाखिल करा दिया।

परभू को चलने-फिरने लायक़ होने में सात दिन लग गए।

आठवें दिन जब वह अस्पताल से निकला, तो सीधे पादरी साहब के बँगले पर पहुँचा।

पादरी साहब बाहर, फूलों के बीच में, टहल रहे थे। परभू निडर होकर उनके पास तक चला गया, और उनके पैरों पर सिर रखकर बोला—"हुज़ूर ने मेरी जान बचाई है।"

"कौन हो तुम, मैं तुम्हें नहीं पहचानता। उठो, इतने दीन न बनो, मसीह की शरण लो, जिसने अपनी जान देकर सबके प्राण बचाए हैं।" कहकर पादरी साहब ने परभू के हाथ पकड़कर उसे उठा दिया।

मैले और फटे कपड़े पहने हुए परभू ने साहब के उज्ज्वल स्पर्श में बिजली पाई, उसका रोम-रोम उससे प्रभावित हो उठा। उसने डबडबाई हुई आँखों से हाथ जोड़े, और कहा—"हुज़ूर, आपने चिट्ठी लिखकर मुझे अस्पताल में दाखिल कराया था, मैं अच्छा हो गया, और आपको सलाम करने आया हूँ। आप रक्षा न करते, तो मैं मर-मिट गया होता।"

पादरी साहब ने उसके हाथों को खोलकर उन्हें नीचे गिरा दिया, कहने लगे—"मैंने कुछ नहीं किया। सब उसी के इच्छानुसार होता है। ऊँचे-से-ऊँचा पर्वत उसी का संकेत पाकर आकाश में उठ नक्षत्रों का चुंबन करता है, और छोटे-से-छोटा पत्ता उसी के कटाक्ष पर माथा नवा, पेड़ से विलग हो जाता है। तुम मुझसे उचित परिचित नहीं हो। मैं बहुत बड़ा पापी और अपने मतलब का अंधा हूँ। इसलिये मेरी प्रशंसा पर मिट्टी डालो।"

परभू चकित-चमत्कृत होकर पादरी साहब को देखने लगा।

पादरी साहब अपनी मेम और एक साल-भर के पुत्र को लेकर अमेरिका से चले थे। उन्हें भारतवर्ष में आए पाँच साल हो गए। आरंभ से ही उनकी नियुक्ति पहाड़ पर है। पर्वतीय जल-वायु,

उसके नैसर्गिक दृश्य और सीधी-सादी आबादी को पाकर सहज संतोषशील स्टेनली साहब का मन उसमें बस गया, और उन्होंने अपनी समस्त आयु वहीं बिता देनी निश्चित कर ली थी। इस पाँच साल की अवधि में उन्होंने उस प्रांत का देख, सुन और पढ़कर अच्छा अध्ययन प्राप्त कर लिया था। रात-दिन उन्हीं लोगों में काम करने के कारण वह उनकी भाषा भी ख़ूब अच्छी तरह समझने और बोलने लगे थे।

अपने हृदय और मन के अनुकूल दयावती और विदुषी पत्नी पाकर पादरी साहब कृतकृत्य हुए थे। वह अपने घर के छोटे-बड़े काम का अधिकांश स्वयं करती थीं। खाना पकातीं, कपड़े सीतीं-धोतीं, घर का हिसाब-किताब रखतीं, तथा पति के लिखने-पढ़ने में सहायिका होती थीं।

नौकर पादरी साहब की मेज़ साफ़ कर चल दिया था। फूलदान के नीचे कुछ धूल रह गई थी। उस समय वह फूलदान उठाकर गर्द दूर कर रही थीं कि उन्होंने बाहर पादरी साहब को किसी से बोलते हुए सुना। वह तुरंत ही बरामदे में चली आईं, और साहब की ओर देखने लगीं।

परभू की उस तरफ़ पीठ थी।

स्टेनली साहब ने कहा—"तुम्हारी आकृति, उच्चारण और वेश से पता चलता है, तुम पहाड़ के ही निवासी हो। तुम्हारा नाम क्या है?"

"मेरा नाम परभू है। गाँव का रहनेवाला हूँ। घर पर खाने को मिलता नहीं। मज़दूरी की तलाश में यहाँ चला आया था, पर कहीं कुछ हिसाब ही नहीं लगता।"

"क्या काम कर सकते हो?"

"क़ुली का काम कर सकता हूँ। और क्या कर सकता हूँ

हुज़ूर । न पढ़ना-लिखना ही सीखा, न कोई शिल्प ही प्राप्त किया ।"

पादरी साहब ने अपने हाथ से मस्तक का स्पर्श कर कुछ सोचा, और कहा—"हमारे यहाँ काम करोगे ? परभू !"

बरामदे में खड़ी पादरी साहब की पत्नी अपने मुख पर मधुर मुस्कान प्रकट कर अंदर चली गईं ।

परभू ने प्रसन्न होकर कहा—"क्यों नहीं हुज़ूर, यह तो मेरे सौभाग्य की बात है ।"

"यहाँ हमारा एक अनाथालय है, वहाँ एक स्कूल भी है, और कुछ दस्तकारी सिखाने का भी इंतज़ाम है । मैं उसके मैनेजर के पास तुम्हें भेज देता हूँ । उन्हें एक नौकर की ज़रूरत है । अगर तुम्हारे अंदर उन्नति करने की इच्छा होगी, तो तुम खाली वक़्त में कुछ पढ़ना-लिखना और कोई दस्तकारी भी सीख सकोगे ।"

"हुज़ूर की मेरे ऊपर बड़ी कृपा है ।"

"तुम्हें खाना और रहने की जगह मिलेगी । कुछ थोड़ी-सी तनख्वाह भी मिलेगी ।"

परभू आनंद से उछल पड़ा । पादरी साहब ने उसी दिन अनाथालय में उसकी नियुक्ति करा दी । आरंभ में तीन रुपया महीना उसका वेतन नियत किया गया ।

परभू पाँच साल अनाथालय में रहा, और ख़ूब जी लगाकर अपना काम करता था । वह अपने वेतन का प्रायः समस्त धन, जब तक उसके माता-पिता जीवित रहे, उनके पास भेजता रहा । दस्तकारी में उसका मन नहीं लगा, पर उसने हिंदी पढ़ना-लिखना बख़ूबी सीख लिया था । अपने दस्तख़त करने-भर की अँगरेज़ी की जानकारी भी हासिल कर ली थी ।

पाँच साल बाद परभू अनाथालय से बदलकर हिंदुस्थानी गिरजे

में चौकीदारी के पद पर रख दिया गया। वह इतवार के दिन गिरजे में सुबह-शाम घंटी बजाता, झाड़-पोंछ करता, हाते के फूल-पत्तियों की देख-रेख करता, और चपरासी का काम भी करता था।

गिरजे में नौकर हो जाने के वर्ष ही परभू ईसाई हो गया, और पीटरलाल कहलाया जाने लगा। तब से वह इतवार के दिन घंटी बजा लेने के बाद गिरजे की अंतिम बेंच पर टोपी उतारकर बैठ जाता। सब लोगों के स्वर में स्वर मिलाकर भजन गाता तथा ख़ूब मनोयोग से उपदेश सुनता और आँख बंद कर प्रभु ईसा मसीह के नाम पर प्राणी-मात्र की मुक्ति के लिये प्रार्थना करता था।

गिरजे के पास ही एक छोटा-सा एक मंज़िल का मकान बना हुआ था, उसी में पीटरलाल रहता था। उसने आजन्म विवाह नहीं किया। कारण पूछने पर उत्तर देता—"मैंने गिरजे से विवाह कर लिया है।"

अपने ही हाथ से खाना पकाता। रोज़ सुबह-शाम नियत समय पर प्रार्थना करता, परमेश्वर की दसों आज्ञाओं पर चलने के लिये कमर कसता। खाली समय में नई और पुरानी धर्म-पुस्तकों का पाठ करता।

पादरी साहब पीटरलाल से बहुत प्रसन्न थे। वास्तव में उस पर पादरी साहब के ही चरित्र की बड़ी गहरी छाप पड़ी थी। पादरी साहब सदा उसका उत्साह बढ़ाते रहते थे। धीरे-धीरे वह इतवार के गिरजे में उपदेश भी देने लगा, और सम्मिलित प्रार्थना का नायक भी बना।

पीटरलाल ने कुछ दिन बाद और भी उन्नति की। वह प्रीचर बना दिया गया। उसे रहने के लिये गिरजे के हाते में एक दूसरा

मकान मिला। अब वह नगर और ग्राम में, जलसों और मेलों में प्रभु ईसा मसीह का गुणानुवाद और ईसाई-धर्म का प्रचार करने के लिये जाने लगा।

जूनिया को चौमुखिया में रहते हुए छ महीने हो गए थे। पीटरलाल प्रचार का दौरा करते हुए चौमुखिया में आया। संध्या का समय था, जूनिया हथौड़ा कंधे पर रक्खे अपने काम पर से लौट रहा था। अचानक उसकी परभू से भेंट हो गई।

"परभू चाचा! परभू चाचा!" कहकर हर्षातिरेक से जूनिया ने उसका हाथ पकड़ लिया।

"कौन, जूनिया!"

"हाँ भाई, हम-से ग़रीब लोगों से क्यों बोलोगे? तुम अब बड़े आदमी हो गए हो। जन्मभूमि की ऐसी ममता छोड़ दी, जब से गए, तब से अब आए हो। माता-पिता की बीमारी में भी मुख नहीं दिखाया।"

"हाँ भाई, उसका बहुत बड़ा पश्चात्ताप है। माता-पिता बहुत बड़ी चीज़ हैं। परवश था, उस पर भी राजधानी में मौजूद न था, बाहर काम के लिये गया था।"

"हो तो ख़ूब आनंद में न? क्या काम करते हो?"

"दिन काटता हूँ। नगर और ग्राम में प्रभु के नाम का प्रचार करता हूँ, केवल उसी समय कुछ शांति का अनुभव करता हूँ।"

"वेतन क्या मिलता है?"

"पंद्रह-बीस रुपए मिल जाते हैं। खाने-पहनने-भर को बहुत हैं। जोड़कर करना ही क्या?"

"विवाह नहीं किया?"

"नहीं।"

"कारण?"

"कारण कुछ नहीं बता सकता। नहीं किया।"

"चलो, आज मेरे कुटीर को ही पवित्र करो। मैं भी गाँव छोड़कर यहीं आ बसा हूँ।"

दोनो निवास की ओर चले।

पीटरलाल ने चलते-चलते पूछा—"गाँव क्यों छोड़ दिया?"

जूनिया ने मंदिर-प्रवेश की सारी कथा कह सुनाई।

पीटरलाल ने दीर्घ श्वास लेकर कहा—"प्रभु के राज्य में सब समान हैं। उसका मंदिर जब किसी के प्रवेश से अशुद्ध हो जाता है, तो उसकी सबको पवित्र करने की शक्ति में संशय उत्पन्न होने लगता है।"

जूनिया—"ठीक कहते हो भाई।"

पीटरलाल—"जूनिया, मैं तुझे मार्ग बताऊँगा। मैं तुझे ऐसे स्वामी के निकट ले चलूँगा, जिसके सामने धनी-निर्धन, गोरा-काला, ऊँच-नीच, सब समान हैं। जो सबको सम भाव से अपने प्रकाश में तेजवान् बनाता है। उसकी दया का अंत ही नहीं, उसकी प्रभुता का अनुमान ही नहीं हो सकता, तुम उसी की शरण लो, तुम्हारे सारे दुख-द्वंद्व छूट जायँगे।"

"ऐसे वह कौन हैं?"

"वह परमेश्वर का एकमात्र पुत्र प्रभु ईसा मसीह है। उसने संसार के पापियों के लिये अपना रक्त बहाया है, उस पर जिसने विश्वास किया, वही मुक्त हुआ।"

दोनो घर के निकट पहुँच गए। जूनिया ने सानी के पास जाकर कहा—"परभू चाचा आए हैं, उनके लिये भी खाना बना।"

पीटरलाल को बिठाकर जूनिया ने पूछा—"तंबाकू तो पीते हो न?"

"हाँ, पीता हूँ।"

जूनिया तंबाकू भर लाया, दोनो पीने लगे।

पीटरलाल ने गले से झोला निकालकर भूमि पर रक्खा।

जूनिया ने पूछा—"इसमें क्या है?"

"कुछ धर्म-पुस्तकें हैं, और एक पानी पीने का गिलास है। जूनिया, तुम मेरा कहना मानो। अपने मन में यदि तुम उस मुक्ति-दाता की ज्योति का अनुभव कर लोगे, तो फिर तुम्हें किसी चीज़ की कमी न रहेगी।"

जूनिया ने कहा—"चाचाजी, साफ़ बात कह देने के लिये क्षमा चाहता हूँ। निःसंदेह आपके वस्त्र और वेश में ईसाई हो जाने से स्वच्छता आई है, आपकी वाणी में भी बल और विद्वत्ता का समावेश हुआ है, पर आपने बाप-दादों का धर्म बदल दिया, लोग क्या कहेंगे!"

"लोग क्या कहेंगे! लोगों ने मसीह को पकड़कर सूली पर लटका दिया। अरे, उस मसीह को, जिसने कभी पाप की परछाईं भी न देखी थी। लोगों को बकने दो। फिर तुम्हारे धर्म ही क्या है? लोग तुम्हारी छाया से घबराते हैं।"

जूनिया को अपना बाल्यकाल स्मरण हुआ, जब वह गुसाईंजी के बालकों से खेलने के लिये मचल जाता था।

पीटरलाल कहता जा रहा था—"लोग तुम्हें अपने जलाशय से पानी नहीं पीने देते।"

जूनिया को फिर वह उत्तप्त ग्रीष्म याद आया, जब वह गुसाईंजी की बावली से जल पी लेने के लिये खूब पीटा गया था।

"लोग तुम्हें अपने मंदिर में पैर नहीं रखने देते।"

जूनिया को फिर उस भयानक रात का ध्यान हुआ, जब वह अपने प्राण बचाने के लिये शिवजी के मंदिर में घुसा था।

पीटरलाल ने निष्कर्ष निकाला—"और तुम अपना भी कोई धर्म

बताते हो। तुम्हारे कोई धर्म नहीं। तू सदियों की कुचली हुई जाति है। उठ, जाग, वह तेरे ही लिये वैकुंठ के समस्त सुखों पर लात मारकर मर्त्यलोक में अवतरित हुआ है, उसने तेरी ही बेड़ी काटने के लिये अपने को सूली पर लटकाया है।"

जूनिया ने दीर्घ श्वास ली, और नीरव ही रह गया।

पीटरलाल ने कहा—"उसके राज्य में घृणा नहीं। बड़ा छोटे के ऊपर पैर रखकर आगे नहीं बढ़ जाता। एक ही पानी का नल सबकी प्यास बुझाता है। एक ही मंदिर में सब बैठकर प्रभु का भजन करते हैं। जूनिया, उसके प्रकाश को देख, और उसके संकेत को समझ, वह तुझे सही और सीधे मार्ग पर ले जायगा।"

जूनिया ने कहा—"चाचाजी, आप ठीक ही कह रहे हैं।"

"तो मेरे साथ राजधानी में चले चलो, और प्रभु की शरण लो।"

"नहीं, काम धीरज से करना ही ठीक है। दो-चार आदमियों से पूछना ज़रूरी है। जिसे पल्ले बाँध रक्खा है, उसकी राय लेनी भी आवश्यक है।"

पीटरलाल सहमत हो गया। भोजन कर पीटरलाल ने बड़ी देर तक जूनिया और सानी को ईसा मसीह का जीवन-चरित्र सुनाया। दूसरे दिन प्रभात-समय उसने चौमुखिया में भजन गा, बाइबिल पढ़ उपदेश दिया, और अंत में दुआ कर दूसरे गाँव की ओर बढ़ गया।

जाते समय उसने जूनिया से कहा—"तुम्हारे दिन फिरे हैं, क्योंकि तुम्हारे कानों में मसीह का नाम पड़ा है। उसका हर वक़्त ध्यान रखना। उस पर विश्वास लाना, तुम्हारे मार्ग की सारी बाधाएँ अपने आप दूर हो जायँगी।"

शाम को जूनिया ने डरते-डरते पत्नी से कहा—"परभू चाचा

जब से ईसाई हुए हैं, उनकी काया ही पलट गई है। बड़े-बड़े अफ़सर उनसे हाथ मिलाते और उन्हें बैठने को कुर्सी देते हैं।"

"सब भाग्य की बात है। मुझे ये चिंताएँ पड़ी हैं। पाँच आने शाम को लाते हो। उसका अधिकांश तुम्हारे पान-सिगरेट्, मिठाई में ही चला जाता है। तरकारी की बिक्री से गुसाईंजी का सिर्फ़ आधा लगान दिया जा सका है। पेट भरने को अन्न नहीं मिलता, उनके लगान के रुपए कहाँ से आएँगे। तुम्हें हवा भी नहीं लगती, और मैं इसी चिंता में घुली जा रही हूँ।"

"लगान भी दे दिया जायगा।"

"कहाँ से दे दिया जायगा? इस महीने के अंत तक काम भी पूरा हो जाने को कहते थे। पाँच आने का मुँह देखना भी कठिन हो जायगा।"

"और दूसरा काम नहीं खुलेगा क्या? जूनिया अब कारीगर हो गया है, उसे पैसे की क्या परवा।"

"गुसाईंजी का लगान अगर वक़् पर नहीं पहुँचा, तो वह तुम्हारी हाँडी और कंबल इस मकान से उठवाकर कहीं फेकवा देंगे।"

"नादिरशाही है क्या? देख, उसके जन्म से धरती पवित्र हुई है। उसने दीनों का बोझ अपने सिर पर रक्खा है। उसने उनका पसीना अपने अंचल से पोंछा है।"

सानी ने व्यथित होकर पूछा—"किसने?"

"प्रभु ईसा मसीह ने, जिनकी कथा तूने रात में सुनी थी।"

सानी के मुख पर एक पहेली-सी अंकित हुई।

जूनिया ने कहा—"देख सानी, सारा अंधकार मिट जायगा।"

"किस तरह?"

"उसकी शरण में चलें।"

"कुछ नहीं समझी।"

"ईसाई हो जायँ।"

"ई—सा—ई हो जायँ? धर्म-परिवर्तन कर लें!" कहकर रानी ने दोनो दाँतों के बीच में जीभ दबाई।

चौथा परिच्छेद

हेडमास्टर साहब

श्रीयुत पी० टी० दत्ता साहब उस मिशन हाईस्कूल के हेडमास्टर थे, जिसके मैनेजर पादरी स्टेनली साहब थे। अत्यंत धर्म-भीरु और साधु स्वभाव के मनुष्य थे। स्कूल के तीन घंटों में अँगरेज़ी और दो घंटों में बाइबिल पढ़ाते थे।

बेत लेकर वह कभी कक्षा के अंदर नहीं गए। स्कूल के सबसे अधिक शरारती लड़के भी उनके उदार स्वभाव के क़ायल थे। उन्होंने भौंहें मिलाकर कभी स्कूल में शासन नहीं किया। अपने सकरुण हास्य और मीठी वाणी से वह विद्यालय के प्रत्येक जटिल प्रश्न को सुलझा देते थे।

उन्होंने प्रथम श्रेणी में बी० ए० पास किया था। वह वेश के भी अत्यंत सरल थे। कभी सिर पर टोप नहीं लगाया, खुले कॉलर का कोट नहीं पहना, और न पतलून ही पहनी।

वह पर्वत के ही निवासी थे। कहते हैं, उनके पूर्वज गंगा के मैदान से आकर पहाड़ों पर बस गए थे। उनके पिता तब जीवित ही थे। वह ग्राम-निवासी, अच्छे ज़मींदार थे।

दत्ता साहब अपने बड़े भाई के साथ अँगरेज़ी-शिक्षा प्राप्त करने के लिये राजधानी में आए, और उन्होंने मिशन स्कूल में प्रवेश किया।

छोटे भाई का मन ईसा मसीह के उपदेशों की ओर आकृष्ट हुआ, और ईसाई-धर्म के प्रति उनका अत्यंत अनुराग हो गया।

पुराने पादरी साहब अपने स्नेह-सिंचन से उसे कुसुमित कर सफल देखने के लिये व्यग्र हो उठे।

दत्ता साहब कुलीन ब्राह्मण-कुल में उत्पन्न हुए थे। उनका ईसाई हो जाना पादरी साहब की बहुत बड़ी विजय थी। उस पहाड़ पर मिशन के पिछले दस वर्षों के प्रचार में कदाचित् कोई भी ब्राह्मण ईसाई नहीं हुआ था।

दोनो भाई होस्टल में रहते थे। छोटे भाई को एक दिन पादरी साहब ने सूली पर लटके मसीह का चित्र उपहार में दिया।

उन्होंने उसे अपने कमरे की दीवार पर टाँग दिया।

बड़े भाई ने स्कूल से आकर उस चित्र को देखा, और क्रुद्ध होकर भाई से पूछा—"यह किसका चित्र है?"

"ईसा मसीह का।"

"इसे यहाँ लगाने की ज़रूरत?"

"वीरोपासना तथा संसार के कष्टों को हँसते हुए झेलने के लिये एक आदर्श।"

"क्या तुम अपने इतिहास से ध्रुव और प्रह्लाद को नहीं खोज सके?"

"क्या दूसरी जाति से आदर्श ग्रहण करना पाप है?"

बड़ा भाई तेज़ी से चित्र की ओर बढ़ा। उसे दीवार पर से नोच डाला।

छोटे भाई ने अत्यंत करुण स्वर में कहा—"उसे फाड़ना मत भाई। वह चित्र कला का एक उत्कृष्ट नमूना है।"

उन्होंने चित्र के टुकड़े-टुकड़े करते हुए कहा—"मैं बहुत दिनों से तुम्हारे रंग-ढंग देख रहा हूँ। मैं आज ही पिताजी को पत्र लिखता हूँ।"

दिसंबर के अंतिम सप्ताह जनवरी और फ़रवरी में स्कूल जाड़ों

के लिये बंद हुआ। बड़े भाई घर चले गए, और छोटे भाई परीक्षा की तैयारी करने में अनेक सुविधाओं का बहाना कर वहीं रह गए। पिताजी से इस बात की अनुमति माँग ली गई। खाना पकाने के लिये महराज भी वहीं रह गया।

बड़े दिन के अवसर पर पादरी साहब श्रीयुत दत्ता को अपने साथ लखनऊ ले गए। लखनऊ में उनका एक ऐंग्लो-इंडियन कुमारी से परिचय हुआ। बाद को वही उनकी अर्द्धांगिनी बनी। कुछ लोगों का खयाल है, दत्ता साहब को ईसाई बनाने में उसी कुमारी का रूप और प्रेम ही मुख्य कारण हुआ।

लखनऊ में पादरी साहब ने दत्ता को ईसाई बनने के लिये राज़ी कर लिया। बड़े दिन के दिन चुपचाप दत्ता ने अपनी चोटी और जनेऊ से विदा लेकर ईसाई-धर्म की शरण ली। उसके बाद वह तुरंत ही राजधानी लौट गए।

महराज से दो दिन में वापस आ जाने का वादा कर दत्ता लखनऊ चल दिए थे। जब सात दिन बीत गए, और किसी ने उनके कोई समाचार नहीं दिए, तब महराज घबराया हुआ गाँव गया, और वहाँ जाकर दत्ता के पिता को सूचना दी।

पिता आकुल हो राजधानी पहुँचे। संयोग-वश उसी दिन दत्ता लखनऊ से लौट आए थे।

पिता ने पुत्र को सकुशल पाकर प्रसन्नता छिपा दी, और कहा—"तुम इस तरह बिना सूचित किए चल दिए। तुम पिता के हृदय की बात नहीं जानते।"

पुत्र सिर झुकाए खड़ा था, और किस प्रकार सत्य पर पड़ा हुआ परदा खींचे, यही सोच रहा था।

पिता ने कहा—"बड़ी चिंता में पड़ गए। मार्ग की चढ़ाई में

बड़ा श्रम पड़ा, प्यास लगी है। एक गिलास में स्वच्छ-शीतल जल ले आओ बेटा!"

पुत्र गर्दन झुकाए उसी प्रकार खड़ा रहा। पिता ने हैरान होकर पुत्र का सिर ऊँचा किया। उसकी दोनो आँखें आँसुओं से डबडबाई हुई थीं।

"तुझ क्या हो गया, कुछ कहता क्यों नहीं?"

"क्या कहूँ पिताजी, मैं आपकी सेवा के योग्य नहीं रहा। मेरे हाथ का जल आप न पिएँगे।"

पिता ने आश्चर्य-चकित होकर कहा—"क्यों!"

"क्योंकि मैंने अपना मत बदल डाला।"

"क्या तू विधर्मी हो गया?" पिता ने आकाश को प्रतिध्वनित कर कहा।

"हाँ!"

"तू ईसाई हो गया?"

"हाँ!"

"नीच! कुलांगार! तू पैदा होते ही मर क्यों नहीं गया! जा, चांडाल, मुझे अब कभी मुँह मत दिखाना।" कहकर पिता ने जोर से पुत्र को लात मारी, और उस पर थूककर चले गए।

पिता ने फिर भूलकर भी कभी ईसाई पुत्र की ओर नहीं देखा। उन्होंने उसका माहवारी खर्च बंद कर दिया, और फिर बड़े लड़के को भी पादरियों के स्कूल में पढ़ने के लिये राजधानी नहीं भेजा।

पिता से परित्यक्त होकर पुत्र पादरी साहब की शरण में गया, और उन्होंने उसकी शिक्षा और भरण-पोषण की सारी ज़िम्मेदारियाँ अपने ऊपर लीं।

उसी साल इंट्रेंस पास कर दत्ता इलाहाबाद जा एफ़० ए० में भरती हुए। उन्हें मिशन की ओर से अनेक छात्र-वृत्तियाँ मिलीं।

पिता ने उनका उल्लेख करना भी छोड़ दिया। माता उनके ईसाई होने से पहले ही स्वर्गवासिनी हो गई थीं। बड़े भाई ने कुछ दिन तक उनसे पत्र-व्यवहार किया था, फिर वह भी बंद हो गया।

श्रीयुत दत्ता ग्रीष्मावकाश में लखनऊ होते हुए पहाड़ जाते, और छुट्टियों भर मिशन के स्कूलों में अध्यापन करते। गाँव जाकर पिता के दर्शन करने का उन्हें कभी साहस नहीं हुआ।

क्रिसमस की छुट्टियों में वह सदैव लखनऊ जाते, वहाँ के पादरी साहब के यहाँ रहते। वही दत्ता के दीक्षा-गुरु थे।

उस ऐंग्लो-इंडियन कुमारी का नाम मिस डेज़ी था। वह उन्हीं पादरी साहब की कन्या थी। पादरी साहब ने उसका नाम डेज़ी रक्खा था, पर उसकी माता भारतीय थीं, और कन्या को डेज़ी के नाम से पुकारती थीं।

पादरी साहब ने दत्ता से हर यात्रा में लखनऊ उतरकर उनके यहाँ दो-चार दिन रहने का वचन ले रक्खा था। दत्ता ने सदैव उस वचन को निभाया।

दत्ता की यात्रा में लखनऊ बड़ा ही मधुर विश्राम हो उठा, और वह फूलों के बीच में विहार करती हुई नवीन रूपसी डेज़ी बड़े प्रबल आकर्षण से उन्हें अपनी ओर खींचने लगी।

उन दोनो ने अपने-अपने चित्रों का विनिमय किया। दत्ता हॉस्टल के कमरे के द्वारों में चिटखनी देकर उस चित्र को अपनी मेज़ पर रखने लगे, और उसे ट्रंक में बंद कर ही द्वार खोलने का अभ्यास बनाया। डेज़ी ने दत्ता का चित्र फ्रेम कराकर बैठक की कानस पर के चित्रों के समूह में रख दिया।

चौथे साल बी० ए० की परीक्षा दे, दत्ता इलाहाबाद से बिदा होकर लखनऊ आए। डेज़ी इंट्रेंस की परीक्षा में बैठी थी। पादरी

जूलिया

"मेरी अँगूठी !"

गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस, लखनऊ

साहब ने परीक्षा-फल निकल जाने तक दत्ता से वहीं रहने का आग्रह किया। दत्ता ने मूक सम्मति देकर उसे स्वीकार कर लिया।

दत्ता के लिये उस समभूमि का प्रथम उत्तप्त ग्रीष्म डेज़ी की छाया पाकर मधुर हो गया। वे लू से दहकती हुई रातें उसके मुख का दर्शन पाकर शारदीय हो उठीं। वे आग बरसानेवाले मध्याह्न उसका स्पर्श पाकर खिल गए, और वसंतमय हो उठे।

दत्ता डेज़ी को उपहार देने के लिये इलाहाबाद से एक अँगूठी खरीदकर लाए थे। उन्होंने उसमें 'डी०' अक्षर अंकित कराया था। उन्होंने कई बार वह अँगूठी डेज़ी को भेंट देने का साहस किया, पर सदा अकृतकार्य ही रहे। वह हर वक्त उसे जेब में रक्खे रहते थे।

उस दिन उनके पास हो जाने की खबर आई। डेज़ी के हर्ष का ठिकाना न रहा। उसने भाँति-भाँति से उस आनंद को व्यक्त किया। संध्या को वह पियानो पर बैठी, और उसमें से सुमधुर स्वरावली झंकारित करने लगी। दत्ता समीप ही बैठे थे, उनके भाव-जगत् में अजीब परिवर्तन मचा हुआ था।

डेज़ी तन्मयता से बाजा बजा रही थी। उसके हाथों की दसों उँगलियाँ बड़ी सुंदरता और सुकुमारता से सफ़ेद और काले परदों पर नाच रही थीं। दत्ता जेब में हाथ डाले उस अँगूठी पर ताल दे रहे थे।

अचानक डेज़ी ने लय दूनी की, उसकी उँगली से निकलकर अँगूठी फ़र्श पर गिर पड़ी। डेज़ी ने बाजा नहीं छोड़ा, और दत्ता की ओर मृदु संकेत कर मीठी वाणी से कहा—"मेरी अँगूठी !"

अनेक दिनों से दत्ता के मस्तिष्क में पड़ी हुई ग्रंथि खुल गई। वह झट से उठे, और अपनी जेब की अँगूठी निकाल पियानो के निकट डेज़ी की अँगूठी खोजने लगे। सौभाग्य सहायक हुआ। पास ही उन्हें उसकी अँगूठी मिल गई। उसे द्रुतगति से अपनी जेब में

रखकर दत्ता उठे, और उन्होंने अपनी बनवाई हुई अँगूठी डेज़ी की ओर बढ़ाई। डेज़ी एक हाथ से पियानो बजाती रही, और दूसरा हाथ दत्ता की ओर फैला दिया। दत्ता ने अँगूठी पहना दी, वह उँगली में ठीक ही हुई।

डेज़ी फिर दोनो हाथों से पियानो बजाती रही। उसने अँगूठी की ओर देखा भी नहीं। वह बाजा बंद कर उठी, और उसने फिर भी अँगूठी की ओर लक्ष्य नहीं किया।

रात को सब एक साथ खाना खा रहे थे।

पादरी साहब ने पूछा—"श्रीयुत दत्ता, अब आपके भविष्य-जीवन के लिये क्या विचार हैं?"

"वहीं पहाड़ पर स्कूल में अध्यापन करूँगा। वहाँ के पादरी साहब की यही अनुमति है, और यही मेरे मन की वृत्तियों के अनुकूल भी पड़ता है।"

"यहीं कहीं कोई काम करो, तो कैसा हो?"

"पहाड़ पर ही उचित प्रतीत होता है।"

डेज़ी को अब तक भी अँगूठी के रहस्य का पता न था, पर उसकी माता ने परिवर्तित अँगूठी देखकर पूछा—"डेज़ी, तुम्हारी उँगली में नई अँगूठी देखती हूँ!"

डेज़ी ने उस ओर देखा, और गहरे विचार में लीन होकर भेद समझने का परिश्रम करने लगी।

दत्ता ने सब कुछ सुन लिया था। वह मुख के भाव छिपाकर बोले—"पहाड़ का क्षेत्र परिचित है, वहीं काम करने में सुगमता होगी।"

डेज़ी की माता ने कहा—"इसमें यह किसके नाम के आदि का अक्षर अंकित है?"

डेज़ी ने मुस्किराते हुए कहा—"डी०—डेज़ी!"

माता ने हँसकर पूछा—"डी०—दत्ता ?"

डेज़ी के कपोलों पर लालिमा दौड़ गई, उसने मंद स्वर में कहा—"हो सकता है।"

पादरी साहब का ध्यान भी उधर ही खिंच गया था। उन्होंने दत्ता से पूछा—"यह अँगूठी आप लाए ? इलाहाबाद से ?"

दत्ता ने विनत वदन से कहा—"जी।"

डेज़ी के माता-पिता दत्ता के साथ उसका विवाह कर देना चाहते थे। परिणय की अँगूठी का यह विनिमय अनुमान कर हर्षोत्फुल्ल हो उठे।

खाना खाने के बाद डेज़ी उठी, और उसने बैठक की कानस पर से दत्ता का चित्र उठाकर अपने शयन-कक्ष की मेज़ पर रख दिया। उसके बाद उसने दत्ता के पास जाकर कहा—"तुम बड़े ठग हो, मेरी अँगूठी ?'

दत्ता ने हँसते हुए कहा—"उसका परिवर्तन हो चुका। वह अब मेरी है।"

"तुम्हारी ही है। लाओ, मैं उसे अपने हाथ से तुम्हें पहना दूँ।"

डेज़ी ने अँगूठी लेकर दत्ता के हाथ में पहनाई, और कहा—"देखना, इसकी रक्षा करना।"

डेज़ी के पास होने का भी तार आया। उसके बाद दत्ता के साथ उसका विवाह हो गया।

दत्ता डेज़ी को लेकर पहाड़ पर चले गए। मिशन हाईस्कूल में सेकेंड मास्टर नियुक्त हो गए, और तीन साल बाद हेडमास्टरी का भार सिर पर धारण किया।

पादरी स्टेनली साहब हेडमास्टर दत्ता साहब की सादगी और विद्वत्ता देखकर उन पर असीम अनुकंपा रखते थे। उन्हें हेड-मास्टरी करते हुए सात साल हो गए। इस अवधि में उनके एक

पुत्र और दो कन्याएँ हुईं। उनमें से सबसे छोटी कन्या दो ही वर्ष की अवस्था में चल बसी।

हेडमास्टर साहब के अधीनस्थ जितने कर्मचारी थे, वे भी सब उनके स्वभाव से अत्यंत संतुष्ट थे। राजधानी के नागरिक भी उन्हें उदार और चरित्रवान् व्यक्ति समझते थे। उनके इस व्यापक सम्मोहन का एक मूल-मंत्र था—वह दत्ता साहब का अपने स्वार्थ को कभी विशेषता न देना था।

पीटरलाल अपना दौरा समाप्त कर राजधानी में आ पहुँचे थे। इतवार का दिन था। हेडमास्टर साहब अपने कमरे में बैठे हुए बाइबिल का अध्ययन कर रहे थे। इसी समय पीटरलाल ने डोर-मैट पर जूता पोंछते हुए कमरे में प्रवेश किया, और अदब के साथ दत्ता साहब को अभिवादन किया।

दत्ता साहब ने कुर्सी की ओर संकेत कर उनसे बैठ जाने को कहा, और बाइबिल के पृष्ठ-चिह्न की डोरी आगे बढ़ाकर, पढ़े हुए पेज पर रख पुस्तक बंद कर दी।

पीटरलाल ने कुछ अप्रतिभ होकर कहा—"कदाचित् बाधक हुआ ?'

"नहीं प्रीचर साहब। दौरे पर से कब पधारे ?"

"आज ही आया हूँ।"

"कुशल-पूर्वक रहे ?"

"आपके चरणों का आशीर्वाद है।"

"कहाँ-कहाँ घूम आए ?"

"चार परगनों में प्रभु का नाम प्रतिध्वनित कर आया।"

"लोग चाव से सुनते हैं ?"

"हाँ, सुनते हैं, पर उपदेशकों का तिरस्कार करनेवालों की संख्या भी कम नहीं।"

"उपदेशक का कार्य बड़ा कठिन है, तिरस्कार सहन करने से उसका बल बढ़ता है।"

"कोई ईसाई होने को राज़ी हुआ ?"

"कोई नहीं।"

कुछ देर दोनो नीरव रहे।

पीटरलाल—"संसार में लोभ बहुत बढ़ गया है। धर्म भी एक सौदे की चीज़ समझा जाने लगा है।"

"हूँ।"

"लोग कहते हैं, ईसाई हो जाने पर क्या सुविधाएँ मिलेंगी ?"

हेडमास्टर साहब ने सकरुण हास्य प्रकट किया।

पीटरलाल ने फिर कहा—"ईसाई हो जाने पर मुक्ति मिलेगी, उससे अधिक सुविधा की वस्तु और क्या हो सकती है।"

हेडमास्टर साहब ने कहा—"प्रीचर साहब, ऐसे लालची लोगों के प्रवेश से कलीसिया में बल का समावेश न होगा।"

"मैं इस बात को समझता हूँ।"

"तलवार का भय या सुवर्ण का लालच दिखाकर प्रचार करना उचित नहीं।"

"मेरे रिश्ते का एक भतीजा है, राज है। उसे मैंने मसीह का नाम सुनाया। जुनिया उसका नाम है। कदाचित् ईसाई हो जाय।"

"यह उसकी अपनी प्रेरणा है ?"

"बिलकुल तो नहीं, उसे सुझा दिया गया है।"

"अच्छी बात है।"

गिरजे की घंटी बजने लगी थी। दोनो साथ-साथ उस ओर चले।

पाँचवाँ परिच्छेद

बपतिस्मा

गाड़ी की सड़क पर का पुल बनकर तैयार हो गया था, और जूनिया का काम समाप्त हो गया। सानी को नई चिंताएँ व्यापने लगीं, और जूनिया नए काम की तलाश में चला।

वह चौमुखिया के गुसाईंजी के पास गया। गुसाईंजी ने कहा—"क्यों रे! पुल बनकर तैयार हो गया?"

"हाँ महाराज, अब आपका मकान बन जाना चाहिए।"

वर्ष बीत चुका था, और जूनिया गुसाईंजी को केवल आधा ही लगान दे सका था। वह जूनिया से संतुष्ट न थे, कहने लगे—"पहले बाक़ी लगान की बातचीत तो कर। पाँच आने रोज़ की मज़दूरी तो तुझे मिलती ही थी। वह सब क्या हुई?"

"सरकार, घर का खर्च तो है ही।"

"घर का खर्च ही क्या है? तेरी स्त्री तमाम कच्चा-पक्का हमारे यहाँ से ले जाती है। नमक और तेल के लिये रोज़ाना चार पैसे पर्याप्त हैं।"

"नहीं सरकार, दिया-बत्ती चाहिए, चाय-चीनी चाहिए, मिर्च-मसाला चाहिए। इसके अतिरिक्त एक-दो पाहुने लगे ही रहते हैं।"

"बाप-दादा ने तेरे लालटेन ही जलाई है? तेल की लकड़ी जलाकर काम चला। तू अब नगर के निकट आ गया है, अभी तू चाय पीने लगा है, कल कुछ और पीना चाहेगा। बीस जगह से तेरी स्त्री अन्न माँगकर लाती है, और तू मसालों से उसे स्वादिष्ट

करेगा। मैं कह चुका जुनिया, अगर इस सप्ताह के अंदर तूने लगान नहीं दिया, तो मैं तुझे अपनी ज़मीन से निकाल बाहर करूँगा। मौज करने के लिये तेरे पास पैसा है, और मालिक को देने के लिये कुछ नहीं!"

जुनिया ने सिर खुजाते हुए कहा—"सरकार!"

"सरकार-सरकार कुछ नहीं। तूने तरकारी भी तो काफ़ी बेची?"

"कहाँ गुसाईंजी! पहले तो कुछ हुआ ही नहीं! जो कुछ हुआ था, सब—धरती के नीचे का चूहे और उसके ऊपर का बंदर खा गए। मैं रहा मज़दूरी पर, और सानी रही मालकिन की सेवा में। तरकारी लेकर जिसे नगर में भेजा, वह कुछ वैसे खा गया, कुछ भाड़े में काट लिया।"

"तो बोल, अब किस तरह लगान देगा?"

"दूँगा, जान बेचकर भी दूँगा। नगर में जाकर काम खोजूँगा, वहाँ चोखी मज़दूरी मिलेगी। या आप अपना मकान बनाने का निश्चय करें, तो वहीं काम करूँगा। लगान मज़दूरी में ही काट लीजिएगा। सरकार! मैं फिर आपसे कहता हूँ, बड़े मौक़े की जगह है।"

"मकान बनाता हूँ, जैसे धरी है मेरे पास पूँजी। हाँ, रे जुनिया! मुझे कोई हाली नहीं मिल रहा है। मेरे खेतों में हल चला दे। उचित मज़दूरी तेरे लगान से काट दूँगा।"

"नहीं गुसाईंजी, साफ़ बात कह देने के लिये क्षमा कीजिए। मैं हल पर हाथ नहीं रक्खूँगा।"

गुसाईंजी ने उत्तेजित होकर कहा—"तो तू लाट बनेगा, हूँ! हल नहीं चलाएगा, तो क्या हम मिट्टी खायँगे?"

"महाराज, मैं आपका सेवक हूँ। मुझ पर वृथा रोष न

कीजिए । मैं आपके लगान की पाई-पाई शीघ्र ही अदा करूँगा।"

"याद रखना, इसी सप्ताह के भीतर।"

रुखाई से—"याद ही है।" कहकर जूनिया विदा हुआ, और अपने घर आया।

सानी शाम की तरकारी के लिये घुइयाँ छील रही थी। जूनिया अत्यंत विनम्र मुद्रा से उसके निकट बैठ गया।

सानी चुपचाप तरकारी छीलती रही।

जूनिया ने स्तब्धता भंग कर पूछा—"सानी, तेरे पास पंद्रह रुपए हों, तो दे दे। मय सूद अगले महीने के अंत तक दे दूँगा।"

सानी ने विकृत मुख से कहा—"मुझे थैली सौंप रक्खी है न!"

"सौंपी कैसे नहीं। तरकारी बेचकर जो भी पैसा मिला, उसका अधिकांश तुझे ही सौंपा गया है। ये बीस रुपए के चाँदी के कड़े तूने उसी रक़म में से बनवाए हैं।"

"दूर हटो, मेरे कड़ों में दाँत न गड़ाओ। तरकारियाँ उगाने में मेरे हाथों में छाले पड़े हैं, ग्रीष्म-ऋतु-भर मैंने दूर-दूर से पानी लाकर उन्हें सींचा है।"

"सब कुछ तूने ही किया, सचमुच जूनिया सुस्त और आरामतलब है। सानी, तू बड़ी नेक है, देवी है।"

"बड़ी बातें बनाना जानते हो, और जब से चौमुखिया के निवासी बने हो, तब से तो तुम्हारा यह गुण और भी बढ़ गया है। मेरे पास एक भी पैसा नहीं।"

"तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ, दे दो। पंद्रह रुपए दे दो। किसी भी फ़िज़ूलख़र्ची के लिये नहीं माँगता। पाँच रुपए मैं अपने एक मित्र से माँग लाऊँगा। बीस रुपए पूरे कर गुसाईंजी के सिर पर

फेंक आऊँगा। हर वक्त रुपए-रुपए चिल्लाकर मेरे प्राण सुखा रहे हैं।"

सानी ने कुछ समवेदना दिखाकर कहा—"मुझे भी उनके रुपयों की फ़िक्र पड़ी है। कहाँ से आवेंगे?"

"ये कड़े दे दो सानी, इन्हें गिरवी रखकर कहीं से पंद्रह रुपए ले आऊँगा। क़र्ज़ के बोझ से लदे हुए पति को देखकर तुम्हें आभूषणों का भार छोड़ ही देना चाहिए। जब दिन पलटेंगे, मैं तुम्हारे हाथों को पीले कड़ों से घेर दूँगा।"

सानी बड़े भोले स्वभाव की स्त्री थी। जूनिया की बातों में आ गई, और दोनो कड़े उतारकर दे दिए। जूनिया उसी समय उन्हें किसी के यहाँ गिरवी रख गुसाईंजी को लगान देने चला।

चौमुखिया से सात मील दूर एक देवस्थान पर उस रात को मेला लगता था। जूनिया को उसकी कुछ अधिक याद न थी।

मार्ग में उसे एक मज़दूर साथी मिल गया, जो रंग-बिरंगा गुलूबंद लपेटे, सिपाहियों का सेकेंडहैंड बूट डाले, बग़ल में कंबल दबाए, अत्यंत उत्साह-भरे डगों से सिगरेट का धुआँ उड़ाता चला जा रहा था।

जूनिया ने पूछा—"कहाँ?"

"सो रहे हो क्या? मालूम नहीं? मेले में जा रहा हूँ। चलो, साथ-साथ चले चलें, बड़ा आनंद आएगा।"

"मगर गृहस्थी का झंझट—"

साथी बीच ही में बोल उठा—"वह तो साँस के साथ है। दुनिया में जन्म लेकर दो दिन मित्रों के साथ हँसे-बोले नहीं, तो क्या ख़ाक जीना हुआ? चलो, घर से एक कंबल ले लो, रात

में जाड़ा लगेगा। सात मील उतराई-ही-उतराई है। लंबे पैर फेंकते हुए घंटे-भर में पहुँच जायँगे। सुबह लौट आएँगे।"

जूनिया को साथी की बात जँचने लगी, और लगान की बात धुँधली पड़ने लगी। जेब में रक्खे हुए कड़ों की सुधि कर उसने कहा—"लेकिन मुझे अभी गुसाईंजी को लगान देने जाना है।"

"कल दे देना। चलो, घर चलकर पत्नी से कह आओ कि मेला देखने जा रहा हूँ।"

जूनिया साथी के साथ घर की ओर चल पड़ा। पत्नी के पास जाकर बोला—"सानी, मैं मेला देखने जा रहा हूँ, कल सुबह वापस आऊँगा।"

"और मैं यहाँ अकेली ही रहूँगी?"

"अपनी बुआ के छोटे लड़के को बुला लेना। सुबह होते ही तो आ पहुँचूँगा। लाओ, मेरा कंबल दे दो।"

सानी ने कंबल लाकर दिया, और कहने लगी—"लगान का क्या किया?"

जूनिया झूठ बोला—"लगान दे आया।"

"खबरदारी से रहना।" कहकर जूनिया साथी के पास आया, और दोनो मेले की ओर चले।

लगान नहीं दे आया कहने पर जूनिया को कड़े पत्नी को वापस देने पड़ते, और फिर उन्हें वापस पाने पर सानी उन्हें लौटाती या न लौटाती। इसी दुविधा में पड़कर जूनिया झूठ बोल दिया।

दोनो मित्र मेले पहुँच गए। मेला जमने लगा था। स्थान-स्थान पर डमरू बज रहे थे, और नट लोग नाना रूपों में नाच रहे थे। दूर-दूर से तेल की जलेबियों और आटा-मिले पेड़ों की दूकानें

आई थीं। पान-बीड़ी-सिगरेट की भी भरमार थी। कई जगह भाँति-भाँति का जुआ भी हो रहा था।

मेले पहुँचकर जूनिया ने मित्र से कहा—"यह बात मुझे तुमसे वहीं कह देनी ज़रूरी थी।"

"कौन-सी?"

"कि मेरे पास एक कौड़ी भी नहीं। पर एक क़ीमती चीज़ ज़रूर है।"

"अरे, क्या चिंता है, सब हो जायगा। अनेकों बार तुमने मेरा मुँह मीठा किया है।" कहकर साथी ने मुख पर लापरवाही के भाव अंकित किए, और मन-ही-मन उस क़ीमती चीज़ की उत्सुकता को बढ़ाने लगा।

मेले के सिरे पर एक चरखा अपनी 'चर्र-चूँ' से उस गीत-मुखरित जन-समूह में खुजली पैदा कर रहा था।

साथी जूनिया को एक हलवाई की दूकान पर ले आया। दोनो ने दूध-जलेबी से पेट भरा, एक पानवाले के यहाँ जाकर पान खाए, और एक-एक सिगरेट होठों में दबा-जला मेला देखने चले।

एक खिलाड़ी कानों में बालियाँ पहन, चोटी लटकाए, बाएँ गाल पर हाथ धर गा रहा था। पास ही एक डमरू बजा रहा था। उनके चारो ओर आदमियों की भीड़ लगी थी। उनमें से कुछ दर्शक थे, और कुछ जब खिलाड़ी गाता था, तब चुप रहते थे, और जब वह चुप हो नाचने लगता, तब गाने लगते थे। दोनो साथी भी उस भीड़ में मिलकर गीत सुनने लगे। खिलाड़ी ने दोनो हाथों में एक चटकीला लाल रेशमी रूमाल तानते हुए एक पैर न्यून और एक अधिक कोण पर मोड़ा, एवं गीत बंद कर ठुमकने लगा। उसके पैरों में बँधे घुँघरू डमरू की ताल पर छुन-छुनाने लगे, और लोगों ने उसके गीत की टेक दुहरानी शुरू की।

जूनिया का मन वहाँ अधिक देर तक नहीं लगा। उसने साथी से चल निकलने को कहा।

दोनो कुछ देर तक इधर-उधर घूमे। अचानक जूनिया ने एक भीड़ के अंदर रुपयों का बाजा सुनकर आश्चर्य-सा प्रकट किया।

साथी ने तुरंत ही कहा—"अरे, कौड़ी खेल रहे हैं, जुआ हो रहा है।"

जूनिया ने जेब में रक्खे कड़ों को दबाकर कहा—"चलो, देख तो लें।"

दोनो जुआ देखने लगे। जूनिया ने देखा, जितने रुपए कमाने में उसे पूरे महीने-भर पसीना बहाना पड़ता था, वे चुटकियों में—कौड़ियों को भूमि पर फेकने-भर में—एक को छोड़ दूसरे के हो जा रहे थे।

जूनिया का मन उधर खिचने लगा। वह सोचने लगा—मेले से लौटकर सानी को उसके कड़े और गुसाईंजी को उनका लगान दे सकता, तो कैसा आनंद आता!

साथी ने पूछा—"क्या विचार है?"

जूनिया बोला—"कुछ नहीं। कौड़ियाँ पहचान सकते हो?"

"क्यों नहीं। मुट्ठी की कौड़ी पहचान दूँ। भूमि पर पड़ी कौड़ियाँ पहचानना भी कोई बात है! जेब में अब कुछ रहा नहीं, इसी से मन मारे बैठा हूँ।"

जूनिया ने दो श्वेत कड़े निकालकर साथी को दिखाए।

साथी मुसकाया।

जूनिया—"इन्हें गिरवी रख कौड़ी फेकोगे?"

साथी—"हाँ।"

दोनो जुवा खेलने बैठ गए।

जुआरियों ने बीस रुपए जूनिया के कड़ों का मूल्य निर्द्धारित

चंद्रमा, लालटेनों और चीड़ की लकड़ी की मशालों की ज्योति में मेला जमुहाई लेने लगा था। अभी कुछ समय पहले मेले की हर चीज़ जूनिया को सुखद प्रतीत हो रही थी, अब उसका हर दृश्य और प्रत्येक ध्वनि उसे क्षत-विक्षत करने लगी थी।

जूनिया ने उदास स्वर में साथी से सिगरेट माँगकर जलाई, और धुआँ छोड़ते हुए कहा—"अब क्या होगा मित्र!"

मित्र ने कहा—"कुछ अच्छा नहीं लगता। चलो, मकान लौट चलें। अभी बहुत रात है। घर पहुँचकर आराम से नींद ला लेंगे। साथ हमारा है ही, डर किसका? एक-एक लकड़ी कहीं से उठा लेंगे।"

"मैं कौन-सा मुँह लेकर घर जाऊँ? जब सानी कड़ों की बाबत पूछेगी, तो क्या उत्तर दूँगा?"

"कह देना, कहीं गिर गए।"

"जिसने मेरे कड़े जीते हैं, वह पधान का सबसे छोटा लड़का है न?"

"हाँ, वही है।"

"जाओ, उससे कह दो। कड़ों को कहीं बेचे नहीं। जूनिया शीघ्र ही उसे बीस रुपए देकर उन्हें छुड़ा ले जायगा।"

साथी ने जूनिया के हाथ से सिगरेट ली, और उस जुवारी के पास जाकर लौट आया।

जूनिया बोला—"क्या कहता है?"

"कहता है, जुवा खेल रहा हूँ। कुछ ठीक तो है नहीं, अगर मेरे पास ही रह गए, तो रख दूँगा।"

जूनिया ने चुप रहकर लंबी साँस छोड़ी।

साथी ने कहा—"चलो।"

जूनिया बोला—"तुम जाओ, मुझे और कहीं जाना है।"

बरसातें उस पर बरस चुकी थीं, परंतु उसने अभी तक राजधानी नहीं देखी थी।

उस पराजय की रात में राजधानी ने जूनिया को अपनी ओर खींचा। वह उधर चलने को उठा, पर पथ ज्ञात न था, केवल दिशा मालूम थी।

सामने से होकर एक मनुष्य जा रहा था। जूनिया ने उठकर उससे कहा—"एक बात तो बता दीजिए।"

पथिक ने जूनिया की ओर देखा।

"राजधानी को कौन-सा मार्ग जाता है?"

पथिक ने निकट आकर, ध्यान-पूर्वक जूनिया का मुख देखकर कहा—"इस असमय में तुम्हें राजधानी के मार्ग की क्या चिंता हुई?"

"कुछ ज़रूरी काम आ पड़ा है भाई!"

"अकेले ही जाओगे?"

"हाँ, कोई डर नहीं।"

"हूँ, कोई डर नहीं! रास्ते में मछियानाले का मसान पड़ता है। भाई, तुम जानो। मार्ग तो यही है। सीधे चले जाओ, सात मील चलकर गाड़ी की सड़क मिल जायगी, उस पर हो लेना। फिर नदी का बड़ा पुल मिलेगा। वहाँ से पगडंडी पकड़ लेना। क़रीब चार मील की करारी चढ़ाई के बाद राजधानी पहुँच जाओगे।"

"यहाँ से कुल कितने मील होगा?"

"बाईस।"

"बजा क्या होगा?"

आगंतुक ने आकाश की ओर देखकर कहा—"एक-डेढ़ बजा होगा।"

वह आगे बढ़ गया, और जूनिया ने कंबल के अंदर हाथ कर

अपने घुटनों तक की धोती खूब कसकर बाँध ली। समीप की टूटी झोपड़ी में लगी एक लंबी और कुछ मोटी लकड़ी सरका हाथ में ले ली। फटा जूता पैर को दुःख देगा, यह सोचकर उसने उसे उतार दिया। वह जूता पहनने का अभ्यस्त न था। किसी का दिया हुआ वह पुराना जोड़ा समय-असमय के उपयोग के लिये उसने रख छोड़ा था। उसने उसे मोह त्याग फेंक दिया।

मेले के उन नीरस रागों को पीठ के पीछे छोड़कर जूनिया ने राजधानी के मार्ग में पैर रक्खा। डर नाना रूपों में उसके समीप आया, वह उसे कुचलकर आगे बढ़ गया।

वह गाड़ी की सड़क पर आया। निकट के मोड़ पर उसे छमाछम घुँघरू-से बजते सुनाई दिए। उसे मछियानाले का श्मशान याद आया। वह मार्ग में रुक गया। उसका दिल तेज़ी से धड़कने लगा था, पर उसने साहस कर उसी ओर दृष्टि की, जहाँ से वह ध्वनि आ रही थी।

"छम! छम! छम!........" नियमित काल में, अविराम रूप से, वह ध्वनि अब और भी स्पष्ट हो चली। मार्ग में तीन छाया-आकृतियाँ उसकी ओर बढ़ती दिखाई दीं।

जूनिया मन-ही-मन अपनी मूर्खता पर हँसते हुए कहने लगा— "वह डाक के हरकारे का घुँघरू-बँधा हुआ भाला है। अब साथ भी मिल गया, अब किसका भय?'

जूनिया दीवार पर बैठ गया। तीन डाक के हरकारे डाक लेकर राजधानी जा रहे थे। उनके निकट आने पर जूनिया ने उठकर उनसे पूछा—"क्या बज गया होगा?"

"दो बज गए।" एक ने उत्तर दिया।

"यहाँ कैसे बैठे हो?" दूसरे ने पूछा।

"तुम्हारा ही इंतज़ार कर रहा था, राजधानी जा रहा हूँ।" कहते-कहते जूनिया भी उनके साथ चलने लगा।

"इस असमय में?"

"एक बड़ा ज़रूरी काम आ पड़ा है।"

जूनिया बेखटके उनके साथ चलने लगा।

पाँच बजे वे लोग चढ़ाई समाप्त कर उस पर्वत की चोटी पर पहुँच गए। पूर्व में प्रकाश फैलने लगा था।

एक हरकारे ने जूनिया से कहा—"लो, राजधानी में आ गए। सामने वही चमक रही है।"

जूनिया ने उत्सुक होकर देखा। हरे-हरे वृक्षों की ओट में राजधानी के चूने से पुते भवन अभी तक निद्रा को बंदिनी बनाए हुए थे। आसन्न ऊषा के धूमिल प्रकाश में वह नगरी स्वप्न-पुरी-सी प्रतीत हो रही थी। जूनिया आप-ही-आप प्रसन्न हो उठा।

एक तिमुहानी पर आकर दूसरे हरकारे ने जूनिया से कहा—"मिशन में जाओगे न?"

"हाँ, परभू चाचा से मिलना है, वहीं मिलेंगे?"

"कौन जाने, तुम्हारे परभू चाचा कहाँ मिलेंगे? पर जैसा तुमने मार्ग में कहा था, वह ईसाई हैं?"

"हाँ, ईसाई हैं। पहले गिरजे में काम करते थे।"

"तो ज़रूर मिशन ही में रहते होंगे। गिरजा भी इधर ही है। इसी मार्ग से चले जाओ। अब तो दिशाएँ भी खुल गई हैं। रास्तों पर लोग चलने लगे होंगे। पूछते-पूछते चले जाना।"

जूनिया उनसे विदा होकर चला, और घंटे-भर में पूछते-पूछते परभू चाचा के निवास-द्वार पर जाकर खड़ा हो गया।

पीटरलाल उसी वक्त उठे थे। जूनिया को देखकर प्रसन्न हो गए। मुँह-हाथ धोने के बाद पीटरलाल ने मिट्टी के तेल की बत्ती-वाले स्टोव में चाय बनाकर कुछ बिस्कुटों के साथ जूनिया को पिलाई, और उसके आने का कारण पूछा।

जूनिया ने दीन भाव से कहा—"तुम्हारे ही चरणों की शरण में आया हूँ।"

"सबसे बड़ी शरण ईसा के वे चरण हैं, जिन पर पिलात के निर्दय सिपाहियों ने कीलें जड़ी थीं।"

"तो उन्हीं की शरण में समझ लो।"

पीटरलाल ने गद्गद होकर जूनिया को छाती से लगाया, और कहा—"तू मसीह की शरण में आया है, तेरे पाप नष्ट हो जायँगे। तू ईसाई होगा?"

"हाँ, मैं ईसाई हूँगा।"

"केवल मुक्ति के लालच से?"

"हाँ, दुःखों से ही छुटकारा पाने के लिये।"

"तू धन्य है! जगत् के किसी रंग पर तेरी आँख ठहरी हुई नहीं है, स्वर्ग का राज्य तेरे ही ऐसों के लिये रचा गया है।" कहते-कहते पीटरलाल की आँखें डबडबा आई थीं।

जूनिया ने पीटरलाल के पैर पकड़ लिए। पीटरलाल ने उसे उठाकर फिर गले से लगाया, और कहा—"चलो, तुम्हें अभी हेडमास्टर साहब के दर्शन करा लाता हूँ। वहीं तुम्हारे बपतिस्मे के संबंध में सब बातें तय होंगी। बड़े साधु पुरुष हैं।"

"चलो।"

"यह धोती उतार डालो। छोटी भी है, मैली और फटी भी है। वे लोग बड़े सफ़ाई-पसंद हैं। लो, यह मेरा पाजामा पहन लो। यह तुम्हारा ही हुआ। कोट तुम्हारा ठीक ही है, केवल कुछ कोहनियों पर फट चला है। यह जूता मेरे पास फ़ालतू है, इसे भी पहन लो, तुम्हारे पैरों में ठीक ही होगा।"

जूनिया पाजामा और जूते पहन पीटरलाल के साथ हेडमास्टर साहब के बँगले पर पहुँचा। वह पादरी साहब के यहाँ जाने के

लिये तैयारी कर रहे थे। पीटरलाल द्वारा जूनिया का समस्त परिचय पाकर हेडमास्टर साहब ने प्रसन्नता प्रकट की, और उसी समय पादरी साहब के यहाँ चलने को कहा।

जूनिया के फटे कोट पर दृष्टि कर तुरंत ही दत्ता साहब कहने लगे—"तुम्हारा कोट फट गया है, यह मैला भी है। मैं तुम्हें एक कोट देता हूँ। वह नया ही रक्खा है, मेरे छोटा हो गया है। अपना यह कोट किसी को दे देना।"

जूनिया ने कोट भी बदला।

कुछ देर बाद तीनो व्यक्ति पादरी साहब की बैठक में दिखाई दिए। पादरी साहब से जूनिया का परिचय कराया गया, और दूसरे ही दिन उसका बपतिस्मा निश्चित हुआ।

अनेक स्त्री-पुरुषों से सुशोभित, रंग-बिरंगे काँच जड़े हुए, पियानो के स्वरों से प्रतिध्वनित गिरजे में जूनिया को बपतिस्मा दिया गया, और उसका नाम जॉन रक्खा गया। सबने मिलकर जूनिया और जगत् के कल्याणार्थ नंगा सिर झुका प्रार्थना की।

रात को कुछ चुने हुए लोगों के साथ जूनिया पादरी साहब के यहाँ सहभोज में शामिल हुआ। चलते समय पादरी साहब ने अनेक आशीर्वादों के साथ उसे एक रोमन में छपी पूरी बाइबिल और एक अँगरेज़ी की प्राइमर दी, एवं नियम-पूर्वक उन्हें पढ़ने का उपदेश दिया।

जूनिया उदास होकर पीटरलाल के साथ उसके डेरे पर लौटा। दूसरा दिन उसके चौमुखिया जाने का था।

घर आकर पीटरलाल ने कहा—"शांति मिली न, जूनिया?"

"हाँ, मिली।"

"तुम्हारा मुख उदास है।"

"हाँ, कुछ घर याद आ गया। गुसाईंजी को बीस रुपए लगान

के देने हैं। परसों तक न दिए जायँगे, तो निकाल बाहर करने को कहते हैं।"

"तो क्या होगा?"

"परभू चाचा! तुम्हारे पास हैं। मुझे बीस रुपए उधार दे दो, शीघ्र ही मज़दूरी कर तुम्हें लौटा दूँगा।"

पीटरलाल ने प्रभु की आज्ञा का स्मरण किया—"तू अपने पड़ोसी की मदद कर।"

जूनिया उसका रिश्तेदार भी था। पीटरलाल ने बिना आगा-पीछा सोचे संदूक़ से बीस रुपए निकाल जूनिया को दे दिया। जूनिया प्रसन्न हो उठा।

दूसरे दिन सुबह सात बजे खा-पीकर नए ठाट-बाट के साथ, नए कोट की जेब में नक़द बीस रुपए सँभाले, बग़ल में बाइबिल, अँगरेज़ी की प्राइमर, घुटनों तक की पुरानी धोती और फटे कोट की गठरी दबाए, जूनिया ने चौमुखिया के मार्ग में असाधारण उत्साह-भरे चित्त से पैर रक्खा।

द्वितीय खंड

नौ
क
री

पहला परिच्छेद

सहधर्मिणी

जूता पैर में काटने लगा था, पर था प्रायः नए ही के समान, इसलिये जुनिया ने उसे फेंक देने में बुद्धिमानी नहीं समझी। उसने उसे पैर से निकाला, और एक काग़ज़ में लपेट अपनी फटी धोती से बँधी गठरी में रख लिया।

वह गठरी बग़ल में दबाए जा रहा था। जब एक बग़ल थक जाती, तब दूसरी बग़ल में दबा लेता। उतने सुंदर कपड़ों के ऊपर सिर पर बोझ रखते उसे लज्जा प्रतीत होने लगी। परंतु यात्रा भी पूरे २५ मील की थी। जब उसके हाथ थक गए, तब उसे बोझ सिर पर रखना ही पड़ा, और उसने अपने मन में सोचा—यहाँ जान-पहचान का देखनेवाला ही कौन है?

रात को राजधानी जाते समय जुनिया ने जो लकड़ी हाथ में ली थी, वह पक्की और भारी थी। उसका मोह उसने न छोड़ा। मन में कहने लगा—बढ़ई से रेत माँग इसकी मूँठ पर घिस दूँगा, असली लाठी बन जायगी। एक टुकड़ा रेगमाल का रगड़ अगर ज़रा-सी वार्निश लगाने को कहीं मिल जाय, तो कहना ही क्या है?

दो बजे के लगभग वह चौमुखिया के निकट आ पहुँचा। उसने गठरी से जूता निकालकर पहन लिया, और गठरी बग़ल में दबा ली। उसने देखा, मार्ग में अनेक लोग उसकी पहचान के मिलने लगे थे। जो पहले उसकी ओर देखते भी न थे, वे उसकी

ओर ताकने लगे थे। जो उस पर घृणा की दृष्टि डालते थे, वे कुछ कोमल पड़ गए थे।

जूनिया अपने मकान के निकट पहुँचा। उसका मकान चौमुखिया की अन्य दूकानों से कुछ फ़ासले पर था, गाड़ी की सड़क से ज़रा नीचे उतरना पड़ता था।

सड़क पर उसे बढ़ई मिला। पहले उससे भेंट होने पर जूनिया उससे राम-राम कहता था। आज वह सोचने लगा—मैं तो अब ईसाई हो चुका। अब राम-नाम का प्रयोग करूँगा, तो लोग क्या कहेंगे ?

वह दुविधा में पड़ा बढ़ई के निकट आया। उसे नीरव और ठाट-बाट के साथ देखकर बढ़ई ने कहा—"राम-राम जूनिया !"

"राम-राम कहाँ से ? मैं तो ईसाई हो गया।"

"ईसाई हो गए !" बढ़ई ने साश्चर्य कहा।

"हाँ, नहीं तो और क्या करता ? जब दिन-भर मेहनत करने पर भी जूठा खाने को और गँदला पीने को मिलता, मैला बिछाने को और फटा ओढ़ने को नसीब होता, तो ईश्वर बदल देना पड़ा।"

"तो अब तो साहब बनोगे। हम-जैसे ग़रीबों पर भी दया रखना भाई !" व्यंग्य-पूर्वक कहकर बढ़ई आगे बढ़ गया।

जूनिया गाड़ी की सड़क छोड़कर अपने मकान की ओर बढ़ा। जाते-जाते सोचने लगा—सानी के सम्मुख किसी नवीन रीति से प्रवेश करना चाहिए।

सानी ने उसे दूर से ही आते देख लिया था। जुवे में कड़ों के हारने की सारी कथा उसके कानों तक पहुँच चुकी थी। वह जली-भुनी बैठी थी। दौड़कर घर के अंदर चली गई, और द्वार बंद कर लिए।

जूनिया ने उसे जाते हुए नहीं देखा था। घर का द्वार अंदर

से बंद पाकर वह हैरान हुआ। द्वार के निकट जाकर उसमें मुट्ठी मारते हुए उसने कहा—"ओ यू, दरवाज़ा खोलो।"

सानी और चिढ़ गई।

जूनिया ने द्वार भड़भड़ाकर फिर कहा—"दरवाज़ा नई खोलने माँगटा टुम! हम आ गया।"

उसे फिर भी कुछ उत्तर नहीं मिला। वह सोचने लगा—क्या बात है, सानी तो कभी दिन में सोती ही न थी। कदाचित् कुछ बीमार है।

उसने फिर द्वार भड़भड़ाए, फिर कुछ उत्तर नहीं पाया।

उसने अधीर होकर ज़ोर-ज़ोर से कहा—"सानी, सुनती नहीं हो? मैं कब से यहाँ खड़ा हूँ—पुकार रहा हूँ, चिल्ला रहा हूँ। तुम दरवाज़ा नहीं खोल रही हो!"

चिंतित जूनिया बढ़ई के पास से हथौड़ा और सँड़ासी लाकर साँकल तोड़ने का विचार कर ही रहा था। उसे शंका होने लगी थी कि सानी अगर मकान के अंदर ज़िंदा है, तो बेहोश है।

अचानक अंदर से सानी ने कहा—"मैं दरवाज़ा न खोलूँगी।"

"क्यों नहीं खोलोगी?"

"झूठे और प्रपंची! मेरे कड़े कहाँ हैं?"

जूनिया ने जेब हिलाकर वे बीसों रुपए बजाए।

"कहाँ हैं मेरे कड़े?"

"तुम्हारे कड़े—"कहकर जूनिया कुछ सोचने लगा।

"सच-सच कहना।"

"द्वार खोलो, सच-सच ही कहूँगा। तुम्हें कड़ों की फ़िक्र हुई है। मुझे देखा तो सही, तमाम काया-पलट कर आया हूँ। देखो, अब मेरा नाम जूनिया नहीं, जॉन है। अब मैं न किसी की उतरन पहनूँगा, और न किसी का जूठा खाऊँगा। मैं ईसाई हो

गया। मुक्तिदाता ईसा मसीह ने मेरी बाँह पकड़कर मुझे ऊपर उठाया है।"

"तुम ईसाई हो गए! तुमने अपने सात पुरखों के किए-धरे पर हरताल फेर दी! तुम मेरे घर के अंदर आने के अधिकारी नहीं रहे। मैं तुम्हारे लिये द्वार न खोलूँगी।" सानी ने क्रोध से कहा।

जूनिया ने मन-ही-मन कहा—अब इस समय इससे बातें करना उचित नहीं। जाकर गुसाईंजी को लगान दे आऊँ। तब तक यह शांत भी हो जायगी।

जाते-जाते उसने कहा—"सानी, प्रिये! मुझे न आने दो, न सही। यह गठरी तो रख लो।"

सानी निरुत्तर ही रही। जूनिया गठरी बग़ल में दबा गुसाईंजी के घर की ओर चला।

मार्ग में एक और सहयोगी मिला। जूनिया का हुलिया बदला हुआ पाकर बोला—"कहो यार जूनिया! सुना है, तुमने जुवे में बहुत लंबा हाथ मारा है।"

जूनिया को सिर पर चाँटा-सा पड़ता प्रतीत हुआ। उसने सँभलकर कहा—"बको मत। क़सम है, जिसने कौड़ियाँ हाथ से भी छुई हों।"

"चौमुखिया में तो यही ख़बर फैली है।"

"उड़ाने दो दुश्मनों को। गुसाईंजी से बहुत ज़रूरी काम है।" कहकर जूनिया द्रुत पद से चला गया।

गुसाईंजी अपनी दूकान के आगे टहल रहे थे। दूकान के आधे हिस्से में कपड़ों की दूकान थी, वहीं वह दिन-भर कैश-बॉक्स के आगे अपना तकिया लगाए बैठे रहते थे। दो लोहे के तार की कुर्सियाँ गाहकों के बैठने के लिये सामने रक्खी रहती थीं। दो बेंचें बाहर बरामदे में धूप और सरदी सहती रहती थीं। कपड़ों के साथ

वह कुछ ताँबे, पीतल, लोहे, क़लई और अल्यूमीनियम के बर्तन भी बेचते थे। दूकान के दूसरे हिस्से में आटा-चावल, दूध-मिठाई, चाय-चीनी, घी-तेल, साबुन-रंग, मेवे-मसाले, पान-सिगरेट, लकड़ी-तरकारी का मेल मिलाया गया था। उस हिस्से में गुसाईंजी का बेटा दूकानदारी करता था। डाकख़ाना भी गुसाईंजी की दूकान ही में था, और वही पिहानी के पोस्टमास्टर भी थे।

गुसाईंजी ने जूनिया को आता देखकर उसकी ओर पीठ कर ली। जूनिया अगर ईसाई न हो गया होता, तो "सरकार, चरन छुई।" कहकर उनका ध्यान आकर्षित कर लेता। वह सिर पर हाथ रखकर 'सलाम!' कह देने का विचार कर रहा था। अचानक उसे कुछ याद आया, उसने जेब से रुपए निकाल दूसरे हाथ पर रक्खे।

रुपयों के बाजे ने गुसाईंजी की गर्दन घुमा दी। जूनिया के हाथों में पर्याप्त सिक्के देखकर उन्होंने हँसते हुए कहा—"कहाँ था रे जूनिया!"

जूनिया ने सिर पर हाथ रखकर कहा—"सलाम गुसाईंजी!"

गुसाईंजी अप्रतिभ होकर उसे आश्चर्य-सहित देखने लगे।

जूनिया ने रुपए उनकी ओर बढ़ाते हुए कहा—"क्या करता, फिर ईसाई हो गया। कल राजधानी में बपतिस्मा ले लिया। लीजिए, यह बाक़ी लगान लाया हूँ। रसीद दे दीजिए।"

गुसाईंजी रुपए ले दूकान की ओर बढ़े, और अंदर से लोहे की कुर्सी निकाल, बरामदे में रखकर बोले—"ले, बैठ जा।"

जूनिया कुर्सी पर बैठा, और मन में सोचने लगा—धन्य है हे वस्त्र, तुम्हारी महिमा! कल तक जब मैं घुटनों तक की मैली धोती पहन यहाँ आता था, तो गुसाईंजी मुझे बाहर मिट्टी पर बिठाते थे। आज मैंने पाजामा पहना है, तो इन्होंने बैठने को कुर्सी दी!

गुसाईंजी ने रुपए गिनकर रसीद लिखी, और जूनिया से कहने

लगे—"भाई, तुम साफ़-सुथरे रहकर उन्नति करो, तो हमें कुछ बुरा नहीं मालूम देता।"

जूनिया का ध्यान सानी की ओर चला गया। वह गुसाईंजी के ज़नाने आँगन की ओर जा रही थी।

गुसाईंजी ने फिर कहा—"उन्नति कर सको, तो अच्छा ही है।"

जूनिया ने रसीद लेकर जेब में रक्खी, और गठरी से किताबें निकाल दिखाते हुए बोला—"ये सब किताबें पढ़ने को मिली हैं। पादरी साहब ने कहा है, अगर ज़रा भी अँगरेज़ी आ गई, तो मुझे मास्टर बना दिया जायगा।"

गुसाईंजी ने परिहास-पूर्वक कहा—"तो अब हल न चलावेगा! हथौड़ा?"

"हथौड़ा क्यों नहीं चलाऊँगा?" कहते-कहते जूनिया ने देखा, मुखियाजी की स्त्री से मैले कपड़े लेकर सानी उन्हें धोने के लिये नदी की ओर जा रही थी।

जूनिया ने जल्दी-जल्दी अपनी गठरी बाँधी, और उठकर जाने लगा।

मुखियाजी ने कहा—"ठहर तो, अभी कहाँ चला?"

"सानी से भेंट नहीं हुई, अभी उसे राज़ी करना है।" कहकर जूनिया बिदा हुआ।

नदी-तट पर पहुँचकर सानी ने मैले कपड़ों का भार भूमि पर उतारा, और एक-एक कर उन्हें धोने लगी।

जूनिया भी पत्नी का अनुसरण करता हुआ वहीं जा पहुँचा, और उसके समीप ही, एक पत्थर पर, उसकी ओर पीठ कर, बैठ गया। सानी ने उसे देखकर अपनी पीठ भी फिरा ली, और पूर्व-वत् कपड़े धोने लगी।

जूनिया के बपतिस्मे के दिन एक भजन गाया गया था। उसका कुछ हिस्सा जूनिया को याद हो गया था। उसी को वह उलटा-सीधा गाने लगा था—

"सूरज निकला, हुआ सवेरा, अब तक तू क्यों सोता है ?
बीता जनम; न प्रभु को सुमिरा, पाप-बीज क्यों बोता है ?"

सानी ने ज़ोर-ज़ोर से पत्थर पर धोती छाटनी आरंभ की। जूनिया और ज़ोर-ज़ोर से हाथ हिला-हिलाकर गाने लगा—

"कर्म हुए नहिं उजले तेरे, काया मल-मल धोता है;
सूरज निकला, हुआ सवेरा, अब तक तू क्यों सोता है ?"

गाते-गाते कनखियों से सानी की ओर देखता भी जाता था। सानी उसकी ज़रा भी परवा न कर कपड़े धोने में दत्तचित्त थी।

जूनिया ने अँगरेज़ी की प्राइमर खोली, और उच्च स्वर में पढ़ने लगा—"ए, सी, डी, वी, यक्स्ट, नी, टी, ही, डब्लू, जेड, वाई। देन, नो, यू, गुड मॉर्निंग।"

इस बार सानी चुपचाप मुसकाई।

जूनिया ने फिर गीत छेड़ा—

"चिड़ियाँ चुग गईं खेत, हाय! अब पछताकर क्या होता है;
सूरज निकला, हुआ सवेरा, अब तक तू क्यों सोता है ?"

इसके बाद जूनिया ने सिर का साफ़ा निकाला, और घुटने टेक, आँखों पर हाथ रखकर प्रार्थना करने लगा—"हे हमारे आसमानी पिता, हम तेरा धन्यवाद करते हैं। जूनिया घुटनों तक की मैली धोती पहनना छोड़ चुका है। तूने उसे पहनने के लिये सुंदर पाजामा दिया है। जूनिया ने अपना फटा कोट किसी ग़रीब भाई को दे देने के लिये इस गठरी में रख छोड़ा है। तूने उसे नया सर्ज का कोट पहनने को दिया। जूनिया आज कितना सुंदर दिखाई दे रहा

है।" कहते-कहते जूनिया आँख खोल उँगलियों के बीच से सानी की ओर भी देखता जा रहा था। सानी उसकी ओर देखने लगी थी।

जूनिया पूर्ववत् प्रार्थना करता जा रहा था—"गुसाईंजी का बाक़ी लगान मैं अभी सब दे आया हूँ, अब हमें साल-भर तक उस मकान से निकाल बाहर करनेवाला कोई नहीं रहा। जूनिया को पाक और साफ़ रहने में मदद दे। अब वह नगर में जाकर मज़दूरी खोजेगा, और मिहनत से रुपया कमाकर सानी को देगा। हमारे क़सूरों को माफ़ कर। लालच के फेर में पड़कर जूनिया ने जुवे में सानी के कड़े—"

सानी अब मान करके न रह सकी। तुरंत ही जूनिया के निकट आई, और उसकी आँखों पर रक्खा हाथ पकड़ लिया।

जूनिया आँख खोल खड़ा हो गया, और कहने लगा—"क्या हो गया तुम्हें, मुझे दुआ भी नहीं करने दी।"

"मेरे कड़े! तुमने जुवे में—"

"हाँ, सच-सच ही तो कह रहा था।"

"क्या जुवे में हार गए?"

"हाँ, जुवे में हार गया। घबराओ नहीं, गिरवी रक्खे हैं। शीघ्र ही छुड़ा लाऊँगा।"

"गुसाईंजी का लगान?"

"अभी दे आया हूँ, यह देखो रसीद है।"

"कहाँ से दिया?"

"परभू चाचा से उधार लेकर।"

सानी कपड़े धो चुकी थी। उन्हें समेटकर चलने का उपक्रम करने लगी।

जूनिया का साफ़ा खुल गया था, उसने उसे सानी के पैरों पर

रखते हुए कहा—"ख़ुदा ने मुझे मुआफ़ किया है, तुम भी क्षमा करो। सानी! जूनिया अब कभी जुवा नहीं खेलेगा। वह ईमानदारी के साथ मिहनत करेगा।"

सानी पीछे हटती हुई बोली—"क्या हो गया तुम्हें, कोई देखेगा, तो क्या कहेगा?"

"अच्छा, मुख से कह दो मुआफ़ किया।"

सानी ने सिर पर कपड़ों का बोझ रक्खा, और एक डोरे में बँधी हुई ताली जूनिया के सामने डालते हुए कहने लगी—"लो, यह मकान की चाभी। मैं गुसाईंजी के यहाँ ये कपड़े देकर आती हूँ।"

जूनिया ने चाभी उठाकर जेब में रक्खी। सानी जाने लगी।

"सानी! ईश्वर चाहेगा, तो अब तुम्हारे दुख दूर हो जायँगे।" कहकर जूनिया ने अपनी गठरी बाँधी, और घर की ओर चला।

दूसरा परिच्छेद

ए-बी-सी-डी

जुनिया ने मकान पर आकर गठरी भूमि पर रक्खी, और बिस्तर पर बैठकर श्रांति का अनुभव करने लगा। कुछ ही देर में लेट गया। लेटे-लेटे धुएँ से काली छत को देख विचार करने लगा—केवल साल ही भर इस घर को बने हुआ है। धुएँ से छत और दीवारें काली हो गई हैं। कहीं किसी चीज़ का ठौर-ठिकाना नहीं। सारे घर में कोयला, राख, लकड़ी और पुआल बिखरी हुई है। कहीं मैले चीथड़े पड़े हुए हैं, कहीं टूटी हाँडी और फूटी कड़ाही पड़ी हैं। इधर पानी का घड़ा मुँह औंधा किए है, उधर मेरी चिलम मुँह लटकाए खड़ी है। हुक़्क़ा कदाचित् सानी के वस्त्र की लपेट में आकर उस कोने में फूटा पड़ा है। इधर मेरा हथौड़ा पड़ा है, उधर वसूला मुँह की खाए है।

जुनिया लेटे-ही-लेटे सिगरेट जलाकर पीने और सोचने लगा—सानी का ही इसमें क्या क़सूर है? घर का मालिक तो मैं हूँ न? बेचारी सीधी-सादी गाँव की कन्या, सूर्योदय से सूर्यास्त तक परिश्रम में ही लगी रहती है। बग़ीचे की तमाम तरकारी उसी के उद्योग से हुई थी। गुसाईंजी के मैले कपड़े धोना, धान कूटना, उनके लिये जंगल से लकड़ी लाना, घास काटना, इन सब कामों का भार उसी पर है। इसके अतिरिक्त अपने घर का पानी भरना, चूल्हा फूँकना और बर्तन मलना तो उसके हुए ही। घर में चीज़ों को क़ायदे से रखकर झाड़ू देने की बेचारी को फ़ुरसत ही कहाँ? मैंने भी उससे

घर को साफ़ और व्यवस्थित रखने के लिये कभी नहीं कहा। ऐसी इच्छा ही मेरे मन में पहले कभी नहीं उपजी थी।

इसी समय आँचल में कुछ टूटे हुए लाल चावल और कड़ाही में कुछ भात और बुइयाँ के पत्तों की तरकारी लिए सानी आ पहुँची।

जूनिया के विचार-क्रम में बाधा पहुँची। उसने कहा—' गुसाईंजी के यहाँ की जूठन बटोरकर ले आई हो?"

"जिस दिन तुम यहाँ कुछ लाकर रख दोगे, उस दिन यह बात कहना। अगर यह न लाऊँ, तो भूखों मरना पड़े। गुसाईंजी के द्वार पर माँगनेवालों की कमी नहीं। उनके गाय-बैल ही इसको निभाने के लिये बहुत हैं।"

जूनिया ने विषय-परिवर्तन करने के लिये कहा—"सानी, परभू चाचा के पास भी केवल दो ही कमरे हैं। इनसे ज़रा बड़े होंगे। एक कमरे में उनकी चारपाई और बैठक है, दूसरे में उनकी रसोई और गोदाम। बैठक में एक छोटी-सी मेज़ और चार कुर्सियाँ हैं। हर चीज़ साफ़-सुथरी अपनी-अपनी जगह मौजूद है। फ़र्श पर कहीं कोई तिनका भी नहीं पड़ा रहता।"

"तो राजा भोज के-से भाग हमारे कैसे हो जायँगे?"

"भाग की ही बात नहीं है, कुछ आदमी का परिश्रम भी तो काम आता है न? बेचारे दिन-भर लगे ही रहते हैं। हाथ बँटानेवाला कोई दूसरा नहीं, घर में स्त्री नहीं। अपने ही हाथ से खाना पकाते हैं, चाय बनाते हैं, बर्तन साफ़ करते हैं, झाड़ू देते हैं, बाज़ार से सौदा ख़रीद लाते हैं, और दिन-भर नौकरी बजाते हैं।"

"फिर तुम्हारे-जैसे थोड़े होते हैं। कहते हो हल भी नहीं चलाऊँगा, लकड़ी भी नहीं फाड़ूँगा, पत्थर भी नहीं ढोऊँगा। बड़े-छोटे, सभी काम आदमी को करने पड़ते हैं।"

"परभू चाचा के रहन-सहन को देखकर मैं तो मुग्ध हो गया हूँ।

हमारे घर की हालत देखो। सानी, बुरा मानने की बात नहीं। तुम्हारा कुछ क़सूर नहीं। दो कमरे हैं, इन्हीं के अंदर बैठक, रसोई-घर, गोदाम, कारखाना, सोने का कमरा, सबकी खिचड़ी बनाकर आठो कोनों में बो दी गई है। दाहना जूता खोज लो, तो बायाँ नहीं मिलता। साफ़े का पता चल जाय, तो हथौड़ा नदारद रहता है।"

सानी कड़ुवा मुँह कर कहने लगी—"तो क्यों नहीं सब कुछ ठीक-ठीक रखते। जब से पुल का काम ख़त्म हुआ है, तब से यहीं पड़े-पड़े नाक बजाते हो।"

जूनिया कुछ भी बुरा न मान हँसते हुए कहने लगा—"सानी, तुम व्यर्थ ही नाराज़ हुई जाती हो। मैं तो पहले ही कह चुका हूँ कि दोष तुम्हारा कुछ भी नहीं। करूँगा, मैं यह सब कुछ ठीक करूँगा। अपने हाथ की कारीगरी है। मेज़-कुर्सी बनाऊँगा। सफ़ेद मिट्टी लाकर धुएँ से काली दीवारों पर सफ़ेदी करूँगा। लेकिन एक बात है, चूल्हा बाहर रखना ठीक होगा। धुआँ हमारा बहुत बड़ा शत्रु है। हमें गंदा बनाने में इसका बहुत बड़ा हाथ है।"

"नहीं, मैं चूल्हा बाहर न रखने दूँगी। बरसात किसी तरह अपने सिर पर ले भी लूँ, तो जाड़े के दिनों में मर जाऊँगी!"

"घबराओ नहीं, मैं उसके ऊपर छप्पर रख दूँगा। वहीं मैं अपनी भट्ठी भी बनाऊँगा, कारखाना खोलूँगा।"

सानी चुपचाप सुनती जा रही थी।

जूनिया उठ बैठा, और कहने लगा—"कल सबसे पहला काम दोनो कमरों की सफ़ाई करना होगा। बहुत सुबह उठकर तुम खान से सफ़ेद मिट्टी ले आओगी। मैं घर के भीतर की तमाम चीज़ें बाहर रख, झाड़-पोंछकर अंत में सफ़ेदी करूँगा।"

"मुझे सुबह उठते ही गुसाईंजी के धान कूटने जाना है।"

"पास ही तो खान है। तुमसे केवल मिट्टी ही लाने को कह रहा हूँ, और सब काम मैं ही करूँगा।"

सानी राज़ी हो गई।

जूनिया रात-भर मकान की ओवर-हॉलिंग के ही सपने देखता रहा। सुबह होते ही उसने मकान की एक-एक चीज़ उठाकर बाहर रख दी, और एक-एक तिनका झाड़कर बाहर फेंक दिया।

सानी मिट्टी रखकर गुसाईंजी के यहाँ चली गई थी। जूनिया ने मिट्टी घोलकर दोनों कमरों में सफ़ेदी की। मकान की दीवार से मिलाकर एक ओर चूल्हे के पत्थर क़ायम किए, कुछ दूर पर लकड़ियों का ढेर लगा दिया, और एक ओर पानी पीने का घड़ा जमा दिया।

ग्यारह बज गए होंगे। सानी आ पहुँची। उसने शीघ्र ही चूल्हा जला खिचड़ी उबाल डाली।

खा-पीकर जूनिया ने कहा—"एक कमरे में बैठक बनाई जायगी, दूसरे के एक सिरे पर बिछौना बिछेगा, और दूसरे सिरे पर गोदाम बनाया जायगा। क्यों सानी!"

"जैसा भी ठीक समझो। मैं क्या जानूँ, बैठक क्या हुई, कभी देखी भी तो नहीं।"

"बैठक क्या हुई, बैठने की जगह हुई। उसमें मेज़ लगावेंगे, कुर्सियाँ रक्खेंगे। दीवारों पर तसवीरें चिपकावेंगे, दरवाज़ों पर परदे लटकावेंगे। वहाँ बैठकर किताबें पढ़ेंगे, अपने मित्रों को चाय-तंबाकू सेवन करावेंगे, और दुनिया-भर की अच्छी-अच्छी बातें करेंगे। सोते वक़्त और सुबह उठकर खुदा से दुआ माँगेंगे कि वह हमारे खाने को रोटियाँ दे, और हमें दुनिया के प्रत्येक आकर्षण से दूर रक्खे।"

सानी ने सिर हिलाया ।

जूनिया कहने लगा—"तुम दोनो कमरों को मिट्टी और गोबर से लीप दो । मैं तब तक इन बोरों को सीकर एक खोल बनाता हूँ । उसमें सब पुआल भरकर बिछाने का गद्दा बना दिया जायगा । खुली पुआल बिछा देने से तमाम घर में तिनके फैल जाते हैं ।"

सानी को बात पसंद आ गई ।

जूनिया कहने लगा—"परभू चाचा ने यह पाजामा दे दिया, यह धोती बेकार पड़ी है । इसे सीकर इसका परदा बनाऊँगा, और रँगकर यह बैठक और सोने के कमरे के बीच में लटका दिया जायगा ।"

शाम तक जूनिया और सानी ने अपना तमाम बाहर पड़ा सामान यथास्थान मकान के अंदर रख दिया ।

ठंडी साँस लेकर जूनिया ने कहा—"मुट्ठी-भर रुपए भी मेरे पास होते, तो मैं इस घर का रूप ही बदल देता । चौमुखिया में इससे बड़ा मकान होता, पर ऐसी सजावटवाला न होता । फिर भी क्या परवा है । मैं अपने हाथ का कारीगर हूँ, मेज़-कुर्सियाँ अपने ही हाथ से बना लूँगा ।"

सानी कहने लगी—"अब कुछ काम-धंधे की तलाश करो ।"

"निःसंदेह सानी, मैं अभी यही बात सोच रहा था । कल नगर में जाता हूँ, और भाग्य की परीक्षा करता हूँ । परिश्रम से जी चुरानेवाला नहीं हूँ ।"

जूनिया को पीटरलाल ने कुछ रंग-बिरंगी, बाइबिल के वचन छपी हुई ईसा मसीह की तसवीरें दी थीं । जूनिया ने उन्हें बैठक की दीवारों पर कीलों से जड़ दिया । सामने की दीवारों में जूनिया ने बिना द्वारों की एक अलमारी बना रक्खी थी । उसके खानों में अखबार बिछाकर उसने सबसे ऊपर बाइबिल और अँगरेज़ी की

प्राइमर रख दी। पीटरलाल ने उसे कुछ और ईसाई-धर्म की हिंदी-पुस्तकें दी थीं। उन्हें भी उसने वहीं रख दिया। गाँव की पाठशाला में जुनिया चार-पाँच साल तक पढ़ने गया था। उसके पास दो-चार किताबें उस समय की रक्खी थीं। जुनिया ने उन्हें भी वहीं रख दिया।

रात को खा-पीकर जुनिया ने रानी को हिंदी की बाइबिल पढ़कर सुनाई, और हुआ कर सो गया।

दूसरे दिन जुनिया मज़दूरी की खोज में नगर को चला। एक ठेकेदार की आवश्यकता सुनकर उसके पास गया।

ठेकेदार ने पूछा—"क्या काम जानते हो?"

"बढ़ई का।"

"क्या मज़दूरी लोगे?"

"काम देखकर जो वाजिब हो, दे देना।"

"कहाँ-कहाँ काम किया?"

"चौमुखिया के बढ़ई के यहाँ बहुत दिन तक काम किया। आरी, रंदा, हथौड़ा, सब कुछ चलाया।"

"औज़ार हैं?"

"एक हथौड़ा यहाँ है। आरी और बसूला घर पर है।"

ठेकेदार ने कुछ हँसकर कहा—"भाई, बढ़ई का काम तुम्हारे लायक़ का नहीं है।"

"तो राज का ही काम दे दो।"

"नहीं, वह भी नहीं।"

"कोई और काम?"

"पत्थर ढोने हैं।"

"पत्थर न ढोऊँगा।"

"पत्थर की खान में खोदाई कर पत्थर निकालने को राज़ी हो?"

"काम सख्त मिहनत का है।"

"मज़दूरी भी खरी-चोखी मिलेगी। सात आने रोज़।"

जूनिया राज़ी हो गया। शाम को मज़दूरी के पैसों में से खाने-पीने की चीज़ों के अतिरिक्त कुछ काग़ज़ और कुछ नीली रोशनाई ख़रीद लाया।

घर आने पर रानी को काम मिल जाने का सुसंवाद देकर काग़ज़ की कॉपी बनाई, और रोशनाई घोल, एक बाँस की क़लम बनाकर पादरी साहब की दी हुई अँगरेज़ी की प्राइमर उठाई, और गुसाईं जी के मकान की ओर चला।

गुसाईं जी का छोटा लड़का नगर के स्कूल में अँगरेज़ी पढ़ता था। जूनिया उसके पास गया, और बोला—"छोटे गुसाईं जी, सलाम। कृपा कर मुझे ए, बी, सी, डी लिखा दीजिए।"

छत्तीस वर्ष के एक मनुष्य को नई भाषा सीखने के लिये इतना व्यग्र देखकर लड़के का कुतूहल बढ़ा। उसने अपनी गेंद छोड़-कर, अँधेरा होने से पहले ही, जूनिया को उसकी कॉपी में अँगरेज़ी के छब्बीसो अक्षरों के उच्चारण लिखा दिए।

जूनिया ख़ुश होकर घर आया, और उसी वक़्त से अक्षरों को याद करने लगा। दूसरे दिन सुबह उठकर उसने बाक़ी नीली रोशनाई में अपनी धोती रँग डाली, और उसे बैठक और शयन-गृह के बीच के द्वार में लटका दिया।

खा-पीकर रोज़ सुबह जूनिया काम पर चला जाता। अँगरेज़ी की किताब भी जेब में रख ले जाता। रास्ते-भर आने-जाने में पढ़ता। काम में भी अवकाश मिलने पर उसे खोल लेता। शाम को घर लौटकर गुसाईं जी के लड़के के पास जाता, और उससे पाठ ग्रहण करता। सुबह उठकर, आरी-बसूला निकाल बैठक के लिये मेज़ और कुर्सियों के पाए बनाता।

एक महीने बाद जूनिया की खान की खोदाई समाप्त हो गई। इस अवधि में उसने अपनी बैठक में एक मेज़ बनाकर रख ली। कुर्सियाँ तो उससे बनी नहीं, पर चार तिपाइयाँ उसने ज़रूर किसी तरह ठोक-ठाक कर तैयार कर ली थीं। रुपया उससे कुछ भी जमा नहीं हो सका था, पर उसने आगामी दो महीनों के लिये गेहूँ और धान खरीदकर रख लिए थे।

सानी नई फ़सल की तरकारियाँ उगाने में संलग्न थी। बड़े आनंद में उसके दिन बीत रहे थे।

जूनिया घर ही पर रहने लगा। दिन-भर अँगरेज़ी की किताब याद करता। उसकी बुद्धि बहुत तेज़ न थी, पर वह मिहनती परले सिरे का था। धीरे-धीरे उसने अँगरेज़ी लिखना भी आरंभ किया।

उस दिन उसने एक कड़े काग़ज़ पर परमेश्वर की दसो आज्ञाएँ लिखीं, और उन्हें बैठक की दीवार पर चार कीलों से जड़ दिया। अचानक उसे कुछ और सूझा, उसने एक दूसरे काग़ज़ पर लिखा—

जूनिया की पाँच आज्ञाएँ—

१. तू जूठा न खाएगा, उतरन न पहनेगा।

२. तू हल न चलावेगा।

३. तू सिर पर बोझ न रक्खेगा।

४. तू अँगरेज़ी पढ़ेगा।

५. तू सानी से नहीं लड़ेगा।

इन पाँचो आज्ञाओं को भी उसने चार कीलों से दूसरी दीवार पर जड़ दिया।

सानी बग़ीचे से काम करके लौटी। जूनिया ने उसे परमेश्वर की दसो आज्ञाएँ पढ़कर सुनाईं। फिर उसने अपनी पाँचो

आज्ञाएँ पढ़ते हुए कहा—"तू जूठा न खायगी, न उतरन पहनेगी।"

"यह अभी नहीं हो सकता, जब तुम साल-भर का नाज घर में रख दोगे, तभी हो सकेगा।"

"तू हल स्वयं ही नहीं चलाती है। तू सिर पर बोझ न रक्खेगी।"

"यह भी तभी होगा, जब तुम रुपए कमाकर रख लोगे।"

"तू अँगरेज़ी पढ़ेगी।"

"मैं अँगरेज़ी पढ़ूँगी? तुमने पढ़कर मैदान मार लिया है, और अब मैं जगत जीतूँगी। दिन-भर घर में बैठे रहते हो। कहीं काम की खोज में क्यों नहीं जाते?"

"जूनिया की पाँचवीं आज्ञा है, तू जूनिया से लड़ेगी नहीं।"

"कमाकर कुछ लाते नहीं, और जूठा खाने से रोकते हो, यह बात ही लड़ाई की है।"

"अच्छा, कमाकर लाऊँगा। अँगरेज़ी पढ़ लेने दे।"

सानी रोटी पकाने चली गई।

जूनिया ने कॉपी निकालकर कुछ लिखा, और फिर किताब खोलकर सबक़ याद करने लगा—"एल् ओ लो, लो माने देखो। एस् ओ सो, सो माने ऐसा, जी ओ गो, गो माने जाना—"

तीसरा परिच्छेद

परीक्षा

जूनिया को बेकार बैठे पूरे तीन महीने हो गए। खाने का सामान बहुत दिन हुए समाप्त हो चुका था। जूनिया ने सुबह-शाम अपनी पाँचो आज्ञाएँ दुहराकर सानी के मन में उनकी हलकी रेखा खींच दी थी।

सानी ने स्वयं जूठा और आधा पेट खाना स्वीकार किया, पर जब से जूनिया ने कहा, उसने उसे कभी जूठा नहीं खिलाया। वह गुसाईंजी की मज़दूरी कर कुछ-न-कुछ ले आती, और पकाकर जूनिया को खिला देती थी।

जूनिया परिताप-भरे हृदय से पत्नी के इस भाव को देखता, और आकुल मौन से प्रभु से दुआ करता था—"हमारे पापों को दूर करो स्वामी!"

पहले सिगरेट् का पैकेट खाली हुआ, फिर चाय का बंडल रिक्त हुआ, फिर चीनी समाप्त हुई, और फिर जूनिया के वे भक्त मित्र ग़ायब हो गए, जो प्रभु ईसा मसीह की चरित-कथा और उसके उपदेश सुनने के लिये उसकी स्वनिर्मित मेज़ के चारो ओर जमा होते थे। वे सब जूनिया की जाति-बिरादरी के लोग थे। जूनिया उन्हें चाय पिलाता, और वे उसकी बैठक को मुखरित करते थे।

जूनिया ने पैसे के अभाव से चाय छोड़ दी, पर सिगरेट् का त्याग उसे खलने लगा। जिस दिन से बैठक में मेज़ और

जूनिया मन-ही-मन कहने लगा—कोई नहीं है ! जंगल में बड़े वेग से घँसती हुई पवन गूँज पैदा कर रही है। व्यर्थ ही मेरे मन में भ्रम का जन्म हुआ।

जूनिया आगे बढ़ा, चौमुखिया की दूकानों के निकट ही बैल-गाड़ियों का पड़ाव था। वहीं, संध्या के समय, गुसाईंजी का छोटा लड़का टेनिस की गेंद को फ़ुटबॉल बनाकर दो-चार साथियों के साथ नित्य खेला करता था। वहीं जूनिया जाकर एक दीवार पर बैठता और घुटनों में किताब रखकर अपना सबक़ याद करता था। लड़का जूनिया के पास खेलता रहता था, और जब जूनिया के आगे कोई कठिनाई आती, वह लड़के को पुकारकर उसे सरल कर लेता था।

आज अभी लड़का खेलने नहीं आया। जूनिया ने पश्चिम के आकाश में सूर्य की स्थिति देखकर मन में कहा—पर उसके खेलने का समय तो हो गया, आता ही होगा।

जूनिया ने अपनी जगह पर बैठकर आध घंटे प्रतीक्षा की, लड़का न आया। भाँति-भाँति के माल से लदी हुई अनेक बैलगाड़ियाँ पड़ाव में आकर रुकने लगी थीं। गाड़ीवानों ने गाड़ियाँ मौक़े से लगाकर बैलों के कंधों पर से जुए हटा दिए थे।

जूनिया उठा, और गुसाईंजी की दूकान की ओर चला। गुसाईंजी जूनिया से, जब से उसने हल पर से हाथ उठा लिया था, नाराज़ रहने लगे थे। यह नाराज़ी उसके ईसाई हो जाने से और भी बढ़ गई थी। पर वह उससे कह कुछ नहीं सकते थे, क्योंकि वह उनके लगान की अंतिम पाई भी दे चुका था।

जूनिया ने दूकान के बरामदे में जाकर कहा—"सलाम गुसाईंजी !"

गुसाईंजी उदास होकर दूकान में लेटे हुए थे। जूनिया को

देखकर सिमट बैठे, और बोले—"आ रे जूनिया ! अब तेरे मिज़ाज का पता ही नहीं लगता। अब तो तू बाबू साहब हो गया।"

जूनिया बाहर पड़ी हुई बेंच पर बैठ गया, और कहने लगा—"गुसाईंजी, आप ऐसा क्यों कहते हैं ? मैं तो आपका सेवक हूँ। आज छोटे गुसाईं नहीं दिखाई दे रहे हैं ?"

"उसी के कारण मैं चिंता में पड़ा हूँ। उसे रात से ही बड़ी ज़ोर का बुखार चढ़ा है, आज स्कूल भी नहीं गया।"

जूनिया ने चिंता के स्वर में कहा—"इस समय कैसे हैं ?"

"ज्वर कुछ हलका है, पर सिर में दर्द बताता है।"

"भगवान् शीघ्र भला करें।"

गुसाईंजी फिर नीरव हो गए।

कुछ क्षण बाद जूनिया बोला—"दो-चार आने का सौदा अपनी दूकान से उधार दे दीजिए।"

"उधार का नाम मत ले। मेरा चार हज़ार रुपया बाहर उधार ही में फँसा है।"

"लाचार होकर ही कह रहा हूँ। मन में बेईमानी नहीं रखता। दो रुपए पिछले सौदे के बाक़ी हैं। साढ़े तीन आने का तंबाकू दिला दीजिए, दो पैसे की एक चिलम। सवा दो रुपए कुल शीघ्र ही दे जाऊँगा। बेकार ही थोड़े बैठा रहूँगा सरकार !"

गुसाईंजी ने अपने सहकारी से कहा—"दे दो, इसे चार आने का उधार दे दो।"

जूनिया सौदा लेकर घर चला। संध्या हो गई थी। सानी काम-धंधा समाप्त कर चूल्हा जला रही थी। जूनिया चिलम में तंबाकू रख उससे आग माँगने लगा।

"अभी आग सुलगी भी नहीं, मैं तुम्हें कहाँ से कोयले दूँ ? तुम तो कहते थे, मैं तंबाकू पिऊँगा ही नहीं।"

"कैसे नहीं पिऊँगा, पिऊँगा सानी ! सिगरेट् पीने को पैसे चाहिए। एक चिनगारी दे दो। मैं फूँक-फूँककर सुलगा लूँगा।"

सानी ने एक जला हुआ कोयला चिलम में रखते हुए कहा—"तंबाकू कहीं से मुफ़्त ही मिल गया क्या ?"

जूनिया ने चिलम फूँकते हुए कहा—"फू-फू, गुसाईंजी के यहाँ से उधार लाया, फू-फू।"

"छी ! छी ! उधार लाते तुम्हें शरम नहीं आती। जूठा खाते समय तो बड़े भारी आदमी बनते हो, पर उधार खाते वक़्त तुम्हारा घमंड चूर-चूर नहीं हो जाता !"

"फू-फू, कहाँ जूठा, कहाँ उधार ! दोनो की तुमने—फू-फू—ख़ूब बराबरी की।"

"उधार जूठे से भी बुरा है। उधार खानेवाले के घर में बरकत नहीं रहती, और वह बाहर की नज़रों में गिर जाता है। उधार खानेवाला मुँह छिपाए-छिपाए भागता है, और उसे चिंता का घुन लग जाता है। वह सुस्त, झूठा और बेईमान बन जाता है।"

जूनिया की समझ में बात गड़ गई थी। वह चिलम फूँकता-फूँकता अपनी बैठक में आया, और नारियल खोज तंबाकू पीने लगा। हठात् तंबाकू एक कोने में रखकर वह उठा, और दवात-क़लम लेकर उसने अपनी पहली आज्ञा में 'उधार'-शब्द और लिखकर उसे संशोधित किया। अब उसकी पहली आज्ञा इस प्रकार हुई—"तू जूठा और उधार न खायगा, उतरन न पहनेगा।"

जूनिया ने संतोष के भाव प्रकट कर फिर चिलम हाथ में ली, और तिपाई पर बैठकर उस संशोधित आज्ञा-पत्र को इस तरह देखने लगा, मानो कोई कमांडर अपने युद्ध के नक़शे को देख रहा हो।

जूनिया मन-ही-मन कहने लगा—उधार न खाऊँगा। सानी ने

बड़ा उचित परामर्श दिया। मैं कल ही नगर में जाकर फिर काम तलाश कर लूँगा। जूनिया मरा नहीं है। मिहनत करने में उसका जी लगता है। काम करनेवाले की तलाश हरएक को रहती है।

जूनियो वहाँ से उठकर सानी के पास आया। सानी तरकारी छोंक चुकी थी।

"सानी!"

सानी चुप थी।

"सुनती नहीं हो? मैंने तुम्हारी आज्ञा मान ली है, और अपने आज्ञा-पत्र में 'जूठे' के आगे 'उधार' का लफ़्ज़ भी बढ़ा दिया है। और सुनो, मैं कल नगर में फिर काम की तलाश में जाऊँगा।"

"यह तुम्हारे रोज़ के गीत हैं। नगर में जाओगे, और सदा की भाँति दोपहर से पहले ही लौट आकर कहोगे, काम कहीं मिला ही नहीं।"

"नहीं सानी! कल ज़रूर ही काम तलाश कर लूँगा। तुम मेरे तमाम राज और बढ़ईगिरी के औज़ार एकत्र कर अभी एक बोरे में रख देना। उन्हें बग़ल में दबा सुबह चल दूँगा। खाना ज़रा जल्दी ही उबाल देना।"

रात की प्रार्थना में जूनिया ने ये वाक्य और बढ़ाए—"गुसाईंजी का छोटा लड़का ज्वर से पीड़ित है। हे स्वर्ग के पिता, उस पर अपनी दया का हाथ रखकर शीघ्र अच्छा कर। सानी ने मुझे आज से उधार न खाने की सलाह दी है। मुझे मदद दे कि मैं उस पर पूरा-पूरा अमल कर सकूँ।"

दूसरे दिन जूनिया औज़ारों को बग़ल में दबा नगर की ओर चला। बढ़ई का काम उसे किसी ने नहीं दिया। हाँ, एक जगह राज का काम मिल गया। पर तीन दिन काम करने के बाद चौथे दिन वह नालायक़ साबित कर काम पर से हटा दिया गया।

जूनिया उदास होकर घर लौट आया, और सानी से कहने लगा—"ये लोग बड़े बेईमान हैं। सब राजों से अधिक मिहनत से काम करता था। कहते हैं, तू सीधी दीवार नहीं चिन सकता, सही कोना नहीं निकाल सकता। सानी! मुझे क्रोध आया, और मैंने उनकी नौकरी छोड़ दी।"

सानी इधर पति-देवता पर प्रसन्न थी। उदास होकर कहने लगी—"मिले काम पर लात मार दी, ठीक नहीं किया। किससे झगड़ पड़े?"

"झगड़ा किसी से हुआ नहीं, पर नौबत पहुँच चुकी थी।"

"मज़दूरी?"

"पसीना बहाया था। पाई-पाई वसूल कर लाया हूँ।"

सानी ने उदास होकर पति की ओर देखा।

जूनिया ने उसका साहस बढ़ाते हुए कहा—"घबराओ नहीं सानी! बोझा ढोने को तो सैकड़ों जगह मिल सकता है। पर ऐसे कपड़े पहनकर सिर पर भार लादना बुद्धिमानी न होगी। फिर एक बात और है, दिमाग़—सारे शरीर का राजा—बोझ रखने से दब जाता और कमज़ोर पड़ जाता है। मुझे अभी अँगरेज़ी की कई किताबें पढ़नी हैं। मैंने ख़ूब सोच-समझ लिया है। कहीं किसी की ख़ुशामद करने न जाऊँगा।"

"फिर कैसे गुज़र होगी?"

"मैं अपना कारखाना खोलूँगा। भट्ठी तैयार ही है, सिर्फ़ एक धौंकनी का इंतज़ाम करना है। मैं बढ़ई और लोहार दोनो का काम साथ-साथ करूँगा। सैकड़ों बैलगाड़ियाँ इस सड़क से आती-जाती रहती हैं। मैं सिर्फ़ उनके पहिए बनाकर उन पर लोहा चढ़ाऊँगा, तो न जूठा खाना पड़ेगा, और न उधार ही लेने की नौबत आवेगी।"

दूसरे ही दिन से जूनिया को अपने कारखाने की धुन लगी। उसने भट्ठी के ऊपर छा रक्खा ही था, सिर्फ़ उसके तीन ओर दीवारें बना देने की ज़रूरत थी। जूनिया ने पाँच-छः दिन में दीवारें भी चिन डालीं। एक खाल लाकर किसी प्रकार काम-चलाऊ धौंकनी भी बना डाली।

कारखाना तैयार कर जूनिया काम की तलाश में गाड़ी के पड़ाव की ओर चला, और गाड़ीवानों से मरम्मत के लिये पहिए माँगने लगा। किसी को ज़रूरत न थी। वह निराश होकर लौट रहा था, अचानक उसे गुसाईंजी का लड़का दिखाई दिया। वह स्वस्थ होकर खेलने निकल आया था। जूनिया ने उसके कुशल-समाचार जानकर प्रसन्नता दिखाई, और जेब से अपनी किताब निकाल सबक़ पूछने लगा।

एक महीना बेकारी का फिर बीत गया। सानी पति से नाराज़ रहने लगी। धीरे-धीरे लड़ने लगी।

एक दिन उन दोनों में बातों-ही-बातों में भारी लड़ाई हो गई। सानी ने उसे हर वक्त किताबों को ही उलटने-पलटने में निरत देखकर कहा—"मैं तुम्हारी इन सब किताबों को उठाकर चूल्हे में झोंक दूँगी।"

पुस्तकों में वह रोमन की बाइबिल भी थी। अब जूनिया उसे ब-ख़ूबी पढ़ लेता था।

जूनिया ने अपना रोष रोककर कहा—"बको मत। इन किताबों में मेरी धर्म-पुस्तक भी है। उसे मैं दुनिया की तमाम चीज़ों से अधिक क़ीमती समझता हूँ।"

सानी ने न-जाने फिर क्या कह दिया कि जूनिया ने उसे मारने को लाठी उठाई। अचानक जूनिया को याद आया, सानी गर्भवती है। जूनिया ने हाथ रोककर बड़ी बुद्धिमानी का काम किया।

पर सानी कहने लगी—"ऐसे मारनेवाले बहुत देखे थे। दिन-भर मर-मरकर मज़दूरी कर तुम्हें खिलाती हूँ, शर्म भी नहीं!"

"जा, तेरा दिया, तेरा पकाया आज से न खाऊँगा।"

"कहने से क्या होता है, अमल में देखूँ, तब न!"

"अमल में भी देख लोगी!" कहकर जूनिया उठ खड़ा हुआ। उसने अपनी बाइबिल तथा प्राइमर उठाकर कोट की जेब में रक्खी, और पुरानी लाठी उठाकर चल दिया।

सानी ने समझा, यहीं चौमुखिया की दूकान तक जायँगे, पर जूनिया सीधे राजधानी चला गया।

पीटरलाल उन दिनों दौरे पर थे। जूनिया को जब परभू चाचा न मिले, तो वह सीधा हेडमास्टर साहब के यहाँ चला गया, और जाकर उनसे कहा—"मैं मुक्तिदाता पर विश्वास लाया हूँ। मैं दोनो वक़्त दुआ करता हूँ, और परमेश्वर की दसो आज्ञाओं से डरता हूँ। मैंने यह अँगरेज़ी की प्राइमर क़रीब-क़रीब याद कर डाली है। पादरी साहब ने इसे याद कर लेने पर नौकरी देने का वचन दिया था। मैं प्रभु का भक्त होकर भूखा मरता हूँ, मेरी रक्षा कीजिए।"

हेडमास्टर साहब ने आश्वासन देते हुए कहा—"घबराओ नहीं, मैं कल तुम्हें पादरी साहब के पास ले चलूँगा, और तुम्हारे लिये कोई-न-कोई उपाय कर दिया जायगा।"

जूनिया रात को खा-पीकर हेडमास्टर साहब के ही यहाँ सो रहा।

दूसरे दिन प्रभात-समय हेडमास्टर साहब उसे पादरी साहब के यहाँ ले गए। जूनिया ने अभिवादन के बाद ही अपनी जेब से प्राइमर निकाली, और पादरी साहब को देकर कहने लगा—"अंत के चार सबक़ों को छोड़कर और चाहे जहाँ से हो, पूछकर मेरी परीक्षा ले लीजिए।"

चौथा परिच्छेद

चौकीदारी

पादरी साहब ने जूनिया की परीक्षा लेने की कोई ज़रूरत नहीं समझी। उन्होंने जूनिया की किताब हाथ में ली, उसके पेज उलटे, और पुस्तक को निरंतर व्यवहार पर भी साफ़ और सुथरा पाया। किताब के पेजों में उँगलियों के दाग़ ज़रूर थे, पर न वे मुड़े थे, और न फटे ही थे।

जूनिया ने बड़े यत्न से पुस्तक की रक्षा की थी। पुस्तक के आवरण में अखबार लपेटकर दो कार्डबोर्ड के टुकड़ों के बीच में धरता और अव्यवहार के समय रूमाल में बाँधकर जेब में, मेज़ में और आल्मारी में रखता था। आज वह पुस्तक के रूमाल, कार्डबोर्ड और अखबार दूर रख आया था।

पादरी साहब ने जूनिया को किताब लौटा दी, और हेडमास्टर साहब से स्कूल के संबंध में बातें करने लगे। वे दोनो बहुधा आपस में हिंदुस्थानी ही में बातचीत करते थे, और खासकर उस समय, जब अँगरेज़ी से अनभिज्ञ कोई उनके बीच में हो।

पादरी साहब ने कहा—"मेरा विचार श्रीयुत जॉन को स्कूल के संसर्ग में रखने का ही है। वहाँ इन्हें उन्नति करने का अधिक अवसर मिलेगा। मुझे यहाँ उद्यान की देख-भाल के लिये एक माली की आवश्यकता है। स्कूल के दो चौकीदारों में से एक माली का काम भी करता है। उसे मैं अपने बँगले पर रख लेता हूँ।

उसके स्थान पर स्कूल का दूसरा चौकीदार काम करेगा, और उस दूसरे चौकीदार की जगह पर इनको नियुक्त कर दीजिए।"

हेडमास्टर साहब ने बात बहुत पसंद की, और जूनिया भी बहुत ख़ुश दिखाई देने लगा।

पादरी साहब—"चौकीदार को स्कूल में क्या वेतन मिलता है ?"

हेडमास्टर—"बारह रुपए प्रतिमास।"

पादरी साहब—"वही वेतन वह चौकीदार यहाँ मुझसे पावेगा, और वही तनख़्वाह इन्हें स्कूल से मिलेगी।"

हेडमास्टर साहब जूनिया की ओर देखकर बोले—"कहिए श्रीयुत जॉन, ठीक है न ?"

जूनिया ने सिर पर हाथ रखकर कहा—"आप दोनो साहबों की दया है। स्त्री की और मेरी दोनो की गुज़र हो जायगी।"

हेडमास्टर—"श्रीयुत जॉन, आपको स्कूल में वक़्त का ध्यान रखकर घंटी बजानी होगी, कभी इधर-उधर डाक ले जानी पड़ेगी, और सब दरजों में ऑर्डर-बुक घुमानी पड़ेगी। दूसरा चौकीदार फूल-पत्ती की देख-भाल करेगा, स्कूल के दरवाज़ों-खिड़कियों को खोलेगा, तथा बंद करेगा, और झाड़न से हर दरजे की मेज़ की धूल और ब्लैकबोर्ड का लिखा साफ़ करेगा।"

जूनिया ने फिर सिर पर हाथ रक्खा।

हेडमास्टर साहब ने फिर कहा—"स्कूल के दफ़्तर के अंदर, घड़ी के सामने बेंच पर, बैठे रहोगे, समय पर घंटी बजाओगे, ख़ाली वक़्त में वहाँ अपनी पुस्तक पढ़ते रहना। मास्टर लोग ऑफ़िस में आते-जाते रहते हैं। उनसे अपनी कठिनाइयों को पूछते रहा करना।"

पादरी साहब बोले—"इनके रहने का इंतज़ाम ?"

हेडमास्टर—"मेरे बँगले के आउट हॉउस में एक कमरा ख़ाली है, उसी में रहेंगे।"

पादरी साहब ने फिर पूछा—"खाने-पीने का क्या बंदोबस्त होगा ?"

जुनिया जल्दी से बीच में बोल उठा—"खाने को मैं ख़ुद ही पका लूँगा।"

हेडमास्टर—"जब तक ठार-ठिकाना न हो, मेरे यहाँ खा लेंगे।"

जुनिया हेडमास्टर साहब के साथ उनके बँगले पर वापस आया, और खा-पीकर स्कूल चला। दस बजते-बजते दोनो स्कूल पहुँच गए।

जुनिया को दफ़्तर में बिठाकर हेडमास्टर साहब ने बाइबिल का क्लास लिया, फिर दोनो चौकीदारों को बुलाकर पादरी साहब की आज्ञा सुनाई, और माली को उनके पास भेज दिया। जुनिया को स्कूल का घंटा सौंपा गया, और वह ऑफ़िस में, दीवार-घड़ी के सामने, बेंच पर, बैठा दिया गया।

स्कूल आरंभ होने से पहले एक बड़ा घंटा लगातार बीस मिनट बजाया जाता था। उसके बंद होते ही स्कूल का पहला घंटा शुरू होता था। स्कूल के समस्त ईसाई-शिक्षक और छात्र हाल में एकत्र हो दस मिनट प्रभु की प्रार्थना कर अपने-अपने दरजों में जाते थे।

बड़ा घंटा बज चुका था। उसे बंद हुए पंद्रह मिनट हो गए। समस्त स्कूल के लड़कों में शांति थी, और उनका ध्यान अपने-अपने दरजे के शिक्षकों पर था। एक-दो देर से आनेवाले विद्यार्थी शिक्षकों की नज़र सफ़ाई के साथ बचाते हुए अपने-अपने दरजों में प्रवेश कर रहे थे।

स्कूल नगर के कोलाहल से ज़रा हटकर था। उसके चारो ओर भाँति-भाँति के बारहमासी और मौसमी फूलों के वृक्ष तथा लताएँ

उगाई गई थीं। स्कूल के सामने दो टेनिस के कोर्ट थे, और समीप ही एक बड़ा मैदान था, जिसमें हॉकी, फ़ुटबाल और क्रीकेट खेले जाते थे।

स्कूल के ऑफ़िस में दो क्लर्क थे। हेडक्लर्क वहीं ऑफ़िस में बैठे कुछ टाइप कर रहे थे, और सेकेंड क्लर्क स्कूल की हाज़िरी का रजिस्टर बग़ल में दबा, हर दरजे में घूमकर उसकी खानापुरी में लगे थे। जूनिया घड़ी में दृष्टि जमा उसकी टक-टक में अपनी पलकें उठा और गिरा रहा था।

हेडक्लर्क जूनिया के बपतिस्मे में मौजूद थे, और उसे पहचान गए थे। चिट्ठी टाइप कर वह जूनिया के निकट आए। जूनिया अपनी दृष्टि उधर ही लगाए रहा।

हेडक्लर्क जूनिया की एकाग्रता देखकर कुछ देर चुपचाप हँसा, फिर उसने जूनिया के कंधे पर हाथ रखकर कहा—"क्या हो रहा है मिस्टर!"

नवीन संबोधन पाकर जूनिया ख़ुश हो उठा, पर उसने घड़ी पर से नज़र नहीं हटाई, उसी प्रकार कहने लगा—"हेडमास्टर साहब की आज्ञा का पालन कर रहा हूँ, अपनी नौकरी बजा रहा हूँ।"

हेडक्लर्क मन-ही-मन सोचने लगे—आदमी मनोरंजक है। फिर प्रकट में कहने लगे—"सुनो भाई, तुम्हारे हित की कहता हूँ। पादरी साहब औरहेडमास्टर साहब ने तुम्हें नौकर रख लिया, लेकिन काम तो तुम्हें हम लोगों के बीच में करना है। तुम्हें ज़रूर वक़्त का ध्यान रखना है। इसका अर्थ यह नहीं कि तुम प्रतिक्षण घड़ी का ही मुँह ताकते रहो। तुम्हें घंटी भी तो बजानी है न? बताओ, कब बजाओगे?'

जूनिया ने घबराकर हेडक्लर्क की ओर देखा।

हेडक्लर्क—"सुनो, आजकल ठीक साढ़े नौ बजे से स्कूल शुरू होता है। पहला घंटा पैंतालीस मिनट का है।"

जूनिया मन-ही-मन असमंजस में पड़ गया। गाँव के स्कूल में उसने रटा था—'साठ मिनट का एक घंटा।' यह चालीस मिनट का एक घंटा कैसे हो गया!

हेडक्लर्क—"ठीक दस बजकर पंद्रह मिनट पर बाहर चबूतरे पर खड़े होकर घंटी दोगे। उसका अर्थ होगा, पहला घंटा समाप्त और दूसरा शुरू। उसके बाद तीन घंटे चालीस-चालीस मिनट के हैं। उसके बाद दस मिनट की छुट्टी होती है। उसके बाद तीन घंटे और होते हैं। कुल मिलाकर सात घंटे पढ़ाई होती है। घबराओ नहीं। हम लोग तुम्हें मदद देंगे। जब जैसा करना होगा, तुम्हें बता दिया जायेगा। जहाँ समझ में न आवे, पूछते रहना।"

जूनिया ने दीन होकर कहा—"कृपा है आपकी।"

हेडक्लर्क—"अभी दस बजने में पाँच मिनट हैं। घंटा बजाने को बीस मिनट हैं। लो यह चिट्ठी, हेडमास्टर साहब के पास ले जाओ, दस्तखत करा लाओ, ज़रूरी है।"

जूनिया दस्तख़त करा लाया, और फिर उसी बेंच पर बैठा हुआ सोचने लगा—नौकरी तो आराम की है।

किसी प्रकार चार बजे जूनिया ने छुट्टी पाई। रात को हेडमास्टर साहब के आउट हॉउस में सुख के सपने देखने लगा। खिला-पिलाकर हेडमास्टर साहब ने दो कंबल भी उसे दे दिए थे।

एक चटाई कमरे में पड़ी हुई थी। जूनिया ने उसके ऊपर चौहराकर एक कंबल बिछाया, और दूसरा दोहराकर ओढ़ लिया। बड़ी देर तक उसे नींद न आई। एक ओर सुख की नौकरी मिल जाने की खुशी थी, और दूसरी ओर नाज़ुक हालत में पत्नी को अकेले ही चौमुखिया में छोड़ आने का पश्चात्ताप था।

उधर उस दिन सानी ने सोचा था, जूनिया कुछ देर में लौट आएगा। दोपहर बीत गई, जूनिया न आया। सानी ने समझा, नगर की ओर चल दिए होंगे। संध्या हो गई, अँधेरा होने लगा, पर जूनिया न लौटा। सानी घबराकर अपनी बुआ के यहाँ गई, और सब हाल कहा। बुआ ने उसे धीरज बँधाया, और उसके साथ के लिये अपना लड़का भेज दिया।

रात-भर सानी के कान द्वार की शृंखला पर अटके रहे। वह सोचने लगी—क्रोध में आकर उनसे न-जाने मैंने क्या-क्या कह दिया, अच्छा नहीं किया।

दूसरे दिन जूनिया ने पत्नी के लिये स्कूल में ही पत्र लिखा। उसने स्कूल में नौकरी मिल जाने का समाचार लिखा, और तनख्वाह मिलते ही कुछ खर्च भेजने का उल्लेख भी किया।

जूनिया को स्कूल में नौकरी करते हुए सात दिन बीत गए। धीरे-धीरे तमाम काम उसकी समझ में आ गया। सातो घंटियों के बजाने का वक़्त भी उसने याद कर डाला। उसे ख़ाली देखकर हेडक्लर्क किसी-न-किसी काम में लगा देते थे, पर जूनिया अपनी किताब याद करने के लिये फिर भी समय निकाल ही लेता था।

सात दिन के अंदर जूनिया स्कूल-भर में प्रसिद्ध हो गया। तमाम स्कूल के लड़के उससे .खुश थे, और सब मास्टरों ने उसमें अपने विनोद की सामग्री पाई थी।

जूनिया चलते-फिरते, समय-असमय में अपनी किताब खोलता, और जिस मास्टर को जहाँ पाता, उससे पूछने लगता। स्कूल आते-जाते हुए भी मार्ग में किताब याद करता। कहीं पर अटक जाता, तो जो भी विद्यार्थी या मास्टर निकट दिखाई देते, उन्हीं से पूछने लगता।

उसकी नौकरी के पंद्रहवें दिन पीटरलाल दौरे पर से लौट आए।

जब उन्होंने स्कूल में जूनिया की नियुक्ति के समाचार सुने, तो उसी समय उससे मिलने स्कूल चले।

परभू चाचा को देखकर जूनिया भी आनंद के मारे उछल पड़ा। कहने लगा—"चाचाजी, यह सब आप ही की कृपा का फल है। आप ही ने मुझ भूले और भटके हुए को मसीह की ज्योति दिखाई।"

शाम को पीटरलाल जूनिया को अपने घर ले गए। उसे चाय पिलाई, और कहा—"किसी चीज़ की ज़रूरत हो, तो निःसंकोच कहो।"

"कुछ नहीं चाहिए। आपके ऋण से वैसे ही दबा हुआ हूँ।"

"ये सब व्यर्थ की बातें हैं। परदेश में हो। ओढ़ना-बिछौना, खाने-पकाने के बर्तन हैं या नहीं?"

"कुछ भी नहीं है। सानी से लड़कर खाली जेब और खुले हाथ चला आया था। आपके आशीर्वाद से नौकरी मिल गई।"

पीटरलाल ने जूनिया को बीस रुपए देते हुए कहा—"लो, तब तक इससे अपनी गृहस्थी जमाओ।"

जूनिया ने हाथ समेटकर कहा—"पर चाचाजी, मैंने उधार न लेने की प्रतिज्ञा की है।"

"अपनों से लिया हुआ उधार नहीं कहलाता।"

पीटरलाल ने जूनिया के लिये बाज़ार से तमाम आवश्यक सामान खरीद दिया, और उसे उसके डेरे तक पहुँचा आए।

दूसरे दिन से जूनिया अपने ही यहाँ खाना खाने लगा। उसी दिन उसे पत्नी का उत्तर मिला। उसने पति को नौकरी मिलने के लिये हर्ष और अपनी भूल के लिये पश्चात्ताप प्रकट किया था। उसने घर की ओर से निश्चित रहने को लिखा था, और लिखा था,

तरकारियों की फ़सल इस साल संतोषप्रद हो जाने की आशा है। उनकी बिक्री के लिये बुआ के बड़े लड़के ने समुचित प्रबंध कर देने का वादा किया है।

जूनिया को नौकरी करते तीन महीने बीत गए। वह तमाम नगर-भर में प्रसिद्ध हो गया। समस्त मिशन के लोग उसकी धर्म-भीरुता, उसका सीधा-सादा और परिश्रममय जीवन देखकर उसे स्नेह की दृष्टि से देखने लगे।

पादरी साहब और हेडमास्टर साहब भी उस पर असीम अनुकंपा रखने लगे।

जूनिया का नाम जॉन रक्खा गया था। पर मालूम नहीं, वह नाम किस कारण व्यवहार में नहीं लाया गया। पादरी साहब और हेडमास्टर साहब उसे ज़रूर जॉन के नाम से पुकारते थे। उनके सिवा सारा स्कूल और तमाम मास्टर उसे जूनिया के ही नाम से पुकारते थे। वही उसका चिर-अभ्यस्त नाम था। उसे सुमधुर मालूम देता था।

डेज़ी ने उस दिन जूनिया से फिर पूछा—"पत्नी को कब लाओगे?"

पत्नी का प्रसव-काल निकट था, इस कारण जूनिया उसे ले आने में अक्षम था। यह सब छिपाकर उसने उत्तर दिया—"यहाँ उसे लाकर क्या करूँगा?"

"रोटियाँ सेंक देगी। आपको कभी-कभी स्कूल जाने में देर हो जाती है न? फिर जिस समय आप खाना बनाते हैं, वह आपके पठन-पाठन के काम आ जायगा।"

"आप उचित ही कहती हैं, पर वह निरी गँवार है। सभ्यता की कुछ भी शिक्षा उसे नहीं मिली।"

"हम कुछ ही दिन में उन्हें सिखा-पढ़ाकर ठीक कर देंगी।"

"तो ले आऊँगा।"

"कब?"

"बहुत जल्दी।"

"अब जब स्कूल में दो-चार रोज़ की छुट्टी साथ पड़े, तभी। जाते समय मुझसे मिलना। मैं तुम्हारी पत्नी के लिये कुछ उपहार भेजूँगी।"

"अच्छी बात है।"

तीसरे-चौथे दिन जूनिया के पास चौमुखिया से पत्र आया कि उसके लड़का हुआ है। माता और पुत्र दोनो स्वस्थ हैं।

जूनिया ने उसी वक़्त जाकर पीटरलाल को ख़बर दी। पीटरलाल ने प्रसन्न होकर उसे बधाई दी, और कहा—"परमेश्वर को धन्यवाद दो। यह सब उसी की कृपा है। पंद्रह दिन बाद से स्कूल में दशहरे की छुट्टियाँ होंगी। मेरा कहना मानो, तो घर चले जाओ, और पत्नी-पुत्र को साथ ले आओ। यहाँ आराम से रहेंगे।"

"वहाँ भी कुछ कष्ट नहीं है। मैंने कुछ ही दिन हुए ख़र्च के लिये बीस रुपए भेजे हैं। इसके अतिरिक्त चौमुखिया में सानी की बुआ है। वह उस पर माता से अधिक स्नेह रखती है।"

पीटरलाल कुछ नहीं बोले।

जूनिया ने तुरंत ही फिर कहा—"चाचाजी, कमज़ोर हालत में यात्रा से माता और पुत्र को कोई हानि न पहुँचे, इसी भय से ऐसा कह रहा हूँ।"

"तो फिर दीवाली की छुट्टियों में जाकर ले आओ।"

"हाँ, ऐसा हो सकता है।"

दीवाली की छुट्टियाँ होने पर कुछ कपड़ा आदि ख़रीद जूनिया हेडमास्टर साहब की आज्ञा लेकर चौमुखिया की ओर चला।

पाँचवाँ परिच्छेद

पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा

बुआ ने सानी को प्रसूति गृह में बड़ी सहायता पहुँचाई। वह कई रोज़ वहीं रही। उसके बड़े लड़के ने सानी के बग़ीचे की चौकसी की। तमाम तरकारी तुड़वाकर नगर में बेचने का सुप्रबंध किया। तरकारियाँ प्रायः सभी संतोष-जनक उत्पन्न हुई थीं। आलू बेशुमार हुआ था। बुआ का लड़का पाँच बैलगाड़ियों में भरकर उन्हें भावर की मंडी में बेच आया था। अभी कुछ आलू खेतों ही में थे, खोदे भी नहीं गए थे।

सानी अपने गृह में नवजात शिशु को दूध पिला रही थी, अचानक उसने द्वार पर चिर-परिचित पद-ध्वनि सुनी। सानी ने सिर पर चादर सँभालते हुए बालक को बिछौने पर सुला दिया, उसे नींद आने लगी थी।

सानी उठ खड़ी हुई, और जूनिया ने उसे खोजते हुए मकान के अंदर प्रवेश किया, और अपनी बग़ल से एक पोटली निकाल संदूक़ पर रख दी।

दोनों ने एक दूसरे को देखा। दोनों कुछ देर तक चुप रहे।

जूनिया ने कहा—"सानी, अच्छी तरह हो?"

सानी—"हाँ, तुमने आने की खबर भी नहीं दी।"

जूनिया—"नहीं दे सका। खर्च का कष्ट तो नहीं है?"

सानी—"नहीं, कुछ कष्ट नहीं है।"

जूनिया ने एक रूमाल में बँधे हुए दस रुपए सानी के निकट रक्खे।

"नहीं, मुझे कुछ ज़रूरत नहीं। तरकारियों की यह फ़सल अच्छी आमदनी दे गई। मैंने गुसाईंजी को समस्त लगान दे दिया है। उनकी दूकान का जो कुछ उधार था, वह भी दे दिया। मैंने हाथ खोलकर बालक का जन्मोत्सव मनाया। वही तो यह सब कुछ लाया है।"

जूनिया बालक के बिछौने के निकट बैठ गया। सानी ने उसका मुँह एक चादर से ढक दिया था। जूनिया चादर का एक सिरा उठाकर बालक का मुँह देखने को उत्सुक हुआ।

सानी ने उसका हाथ रोककर कहा—"छेड़ो नहीं, अभी-अभी सोया है। मैंने आस-पास की समस्त बिरादरी को भोज दिया।"

"ठीक किया, पैसा खर्च ही करने के लिये है। सानी, मैं तुम्हें राजधानी ले चलने के लिये आया हूँ। तुम्हें कल ही यहाँ का सब लेना-देना करके तैयार हो जाना चाहिए।"

"ऊँ हूँ, मैं कहीं नहीं जाती।"

"ऐसा न कहो। वहाँ बड़े सुख से रहोगी। अच्छी संगति में रहोगी, रोज़ नई बातें सीखोगी। वहाँ न बोझ ढोना पड़ेगा, न भूमि खोदनी पड़ेगी। न फटा पहनना पड़ेगा, न जूठन खानी पड़ेगी। हेडमास्टर साहब के बँगले ही के हाते में रहने को सुंदर मकान मिला है। उनकी मेम दया और परोपकार से परिपूर्ण महिला हैं।" कहते-कहते जूनिया ने अपने साथ लाई हुई पोटली खोली। उसमें उसकी बाज़ार से ख़रीदी हुई एक ओढ़नी थी, एक डेंज़ी का अपने हाथ से सानी के लिये सिया हुआ साया था, एक नवीन बालक के लिये रेशम का फ़्रॉक था, और कुछ मेवे थे।

साया देखकर सानी चौंक उठी, कहने लगी—"यह क्या है ?"

"साया है, तुम्हारे लिये यह मेम साहबा ने अपने हाथ से सिया है ।"

"मैं यह मेमों का वस्त्र न पहनूँगी ।" कहकर सानी उठी ।

जूनिया—"कहाँ जाती हो ?"

"तुम्हारे लिये चाय बना लाती हूँ ।"

चाय के लिये पत्नी की ऐसी चिंता जूनिया को जीवन में पहली ही मर्तबा अनुभव हुई । उसने कहा—"चाय की पत्तियाँ हैं ?"

"हाँ, मैंने मँगाकर रख ली हैं । तुम बालक को देखते रहना । मैं अभी आती हूँ ।"

सानी चाय तैयार करने चली गई । जूनिया अपने मन में कहने लगा—चाय का शब्द सुनकर इसे बुख़ार चढ़ आता था । अब जब यह उसे खरीदने लगी है, तब साया भी पहनेगी । आज नहीं, तो कल ज़रूर ही इसका ध्यान उधर जायगा । साया पहनने में वस्त्र की ही कितनी बचत है । इसीलिये हेडमास्टर साहब ख़ुद विलायती कपड़े नहीं पहनते, पर उनकी पत्नी उन्हीं का व्यवहार करती हैं ।

सोए हुए बालक का एक पैर हिला, और जूनिया का ध्यान उधर चला गया । उसने चादर का कोना उठाया, और बालक का मुख देखा । निष्पाप बालक—जगत् के द्वंद्वों की छाया अभी उसके चेहरे पर नहीं पड़ी थी—न-जाने किस अतीत की विस्मृति में डूबा हुआ सो रहा था !

जूनिया ने उसका मुख चूम लिया । कदाचित् उसके कोमल मुख में जूनिया की बढ़ी हुई दाढ़ी का कोई सख्त बाल गड़ गया । बालक रोने लगा । जूनिया ने उसे गोद में लेकर शांत करने की कोशिश की, व्यर्थ गई ।

सानी चाय छोड़कर चली आई, और कहने लगी—"बस, एक बालक को शांत नहीं कर सकते।"

बालक डेढ़ महीने का हो गया था। यद्यपि उसके मन में अभी रूप और ध्वनि की कोई पहचान उत्पन्न नहीं हुई थी, तथापि वह माता की ओर आकर्षित हुआ, एवं जूनिया की गोद में और भी ज़ोर से रोने लगा।

जूनिया ने हारकर कहा—"तुम्हीं इसे गोद में लेकर चुप करो सानी! मैं चाय ख़ुद बना लूँगा।"

सानी ने हँसते हुए बालक को लिया, वह उसका केवल स्पर्श पाकर ही चुप हो गया।

जूनिया ने चाय तैयार की। सानी उसे कुछ खाने के लिये भी दे आई।

चाय पीकर जूनिया ने पत्नी से कहा—"बग़ीचे में अब जो कुछ बचा है, सब बुआ को दे आओ। फ़सल बीत जाने पर गुसाईंजी अपनी ज़मीन चाहे जिसे दें।"

सानी चुप रही। जूनिया ने उसकी ओर से कोई विरोध न पाकर समझा, सानी राजधानी चलने के लिये राज़ी है।

उसने तुरंत ही फिर कहा—"सानी, हमें यहाँ करना ही क्या है? अगर तुम चाहो, तो हम कल दिन में ही सब कुछ ठीक कर सकते हैं। शाम को तीन-चार बजे यहाँ से चल दें। बैलगाड़ी में जाना होगा, यात्रा में ही पूरे दो दिन लग जायँगे। सिर्फ़ चार ही दिन की छुट्टियाँ हैं, जिनमें से एक आज का दिन गया ही समझो।"

सानी बोली—"मैं चौमुखिया छोड़कर कहीं नहीं जाती।"

"कहना मानो, जिस दिन चौमुखिया छोड़ोगी, उसी दिन तुम्हारे दुख-संकट सब छूट जायँगे।"

"भाग्य में न होगा, तो ये सारी आपदाएँ वहाँ भी घेर लेंगी।

क्या राजधानी में कष्ट हैं ही नहीं? पर कुछ भी हो, मैं वहाँ न जाऊँगी।"

"यह तुम्हारी व्यर्थ की ज़िद है।"

"तुम मेरे बालक को भी ईसाई बना दोगे।"

"उसे ईसाई अब बनाना क्या होगा? वह ईसाई बाप का बेटा ईसाई ठहरा ही। चलो सानी, तुम्हारे इस बालक के बड़े हो जाने पर इसकी पढ़ाई का बड़ा समुचित प्रबंध वहाँ हो जायगा!"

"अभी कुछ न कहूँगी। बुआ से पूछकर उत्तर दूँगी।"

"अच्छी बात है। मैं तब तक गुसाईं जी से जाकर यह सब कहता हूँ। एक-दो दूकानों का कुछ उधार हिसाब भी दे आता हूँ।" कहकर जूनिया उठा, और चौमुखिया की ओर चला।

अचानक उसके पीछे से आवाज़ आई—"जूनिया डूम है!"

जूनिया सिर से पैर तक काँप उठा। बहुत स्पष्ट उसने सुना था। इस बार आवाज़ दोहरी मालूम दी थी। जूनिया ने गर्दन फिराकर पीछे की ओर देखा, तो दो स्कूल के छोटे-छोटे विद्यार्थियों को बस्ता बग़ल में दबाए, मार्ग छोड़कर जंगल की ओर भागते देखा। जूनिया उनकी ओर देखता हुआ मार्ग में ठहर गया, और मन में कहने लगा—जूनिया डूम है! क्या वे परमेश्वर के बनाए प्राणी नहीं हैं? क्या उनकी छाया से भूमि में पाप और उनकी साँस से वायु मंडल में विष फैलता है? क्या वे मार्ग में चलने के लिये नहीं, रौंदे जाने के लिये पैदा किए गए हैं?

भागते हुए लड़कों में जूनिया को कहीं संशय का चिह्न नहीं मिला। उन्होंने जूनिया की ओर देखा भी नहीं, और जूनिया ने फिर कोई आवाज़ भी नहीं सुनी। लड़के कदाचित् किसी वन के फल से आकृष्ट होकर पथ छोड़ चल रहे थे। जूनिया मन में सोचने लगा, व्यर्थ ही मेरे मन में शक पैदा हुआ।

जुनिया फिर अपने पथ पर अग्रसर हुआ। कहने लगा—पहले तो किसी ने कुछ कहा ही नहीं। अगर कहा भी है, तो सरासर झूठ बोला है। बेचारे को मालूम ही नहीं, जुनिया बपतिस्मा ले चुका है।

जुनिया ने गुसाईंजी के पास जाकर कहा—"मैं सानी को लेकर परसों राजधानी जा रहा हूँ। बग़ीचा उसकी बुआ के लड़के के अधीन छोड़ जाऊँगा, फ़सल बीत जाने पर आप अपनी चीज़ सँभाल लीजिएगा।"

गुसाईंजी के पास जुनिया से कहने के लिये कुछ न था। सानी के कारण उनकी ज़मीन की शोभा और मूल्य दोनो बढ़ रहे थे। वह कहने लगे—"अगले साल के लिये अगर तुम्हें बग़ीचा लेना हो, तो मुझे दस रुपए लगान के और अधिक देने पड़ेंगे। क्यों रे जुनिया! सुना है, तेरी स्त्री ने अकेला आलू ही सौ रुपए का बेचा है। ज़मीन ही ऐसी है। फिर निकट ही पानी!—ग्रीष्म के प्रचंड ताप में भी सूखता नहीं। बोल, दस रुपए अधिक देने को तैयार है न?"

"मैं स्त्री-पुत्र-सहित राजधानी जा रहा हूँ। ज़मीन लेकर करूँगा क्या। मैंने मिहनत कर आपकी ज़मीन को उपजाऊ साबित कर दिया है, आप जिसे चाहें दें, और जितना चाहें लें।"

"राजधानी में कुछ ठौर-ठिकाना भी कर आया है, या वैसे ही परदेस में बाल-बच्चों को लेकर चला जायगा।"

"गुज़र के लायक़ कर ही आया हूँ। छोटे गुसाईं कहाँ हैं? कृपा कर उन्हें बुलवा दीजिए। वह, आप जानते ही हैं, मेरे मास्टर थे न? मैं उनके लिये दो किताबें और कुछ चित्र लाया हूँ।" कहते हुए जुनिया ने अपनी जेब से कुछ ईसा मसीह के तिरंगे चित्र और दो सचित्र हिंदी कहानियों की पुस्तकें निकालीं।

"वह छुट्टियों में ननिहाल चला गया है। स्कूल खुलने पर आवेगा।"

"तब उनसे भेंट न हो सकेगी। आप कृपा कर ये उन्हें दे दीजिएगा।" कहकर जूनिया ने उन्हें पुस्तकें और चित्र दिए।

इसके बाद जूनिया चौमुखिया में अपने तमाम परिचितों से मिला। अपने उधार का एक-एक पैसा खोज-खोजकर साफ़ कर आया। घर लौटते समय गाड़ी के पड़ाव में गया, और राजधानी के लिये नौ रुपए किराए के ठहराकर एक बैलगाड़ी तय की।

जूनिया लौटकर घर आया। उसकी बैठक की मेज़ पर एक नई लालटेन अपना प्रकाश फैला रही थी। जूनिया उत्कट इच्छा रखने पर भी कभी लालटेन नहीं ख़रीद सका था।

उसने देखा, तमाम बैठक में कूड़ा पड़ा है। एक ओर आलुओं का ढेर लगा था। दीवारों पर उसकी तसवीरों में की अनेक कीलें निकल गई थीं। कोई आड़ी और कोई तिरछी लटक रही थी। परमेश्वर की दस आज्ञाओं का पत्र तो सुरक्षित था, पर उसका आज्ञा-पत्र कमरे में आने-जानेवालों की पहुँच के निकट होने के कारण उखड़ भी गया था, और उसका निम्नांश फटकर ग़ायब भी हो गया था।

पर उसकी तबियत यह सब कुछ देखकर ज़रा भी खट्टी न हुई। उसकी बनाई हुई मेज़ का एक पाया लकड़ी के सिकुड़ जाने से टेढ़ा पड़ गया, और उसकी दो तिपाइयाँ कदाचित् टूट जाने के कारण तवा गरम करने के काम में लाई जा चुकी थीं। जूनिया की आँखों में अब भाँति-भाँति का फ़रनीचर बस गया था। अपने हाथ के उन भोंड़े नमूनों को जूनिया ने मेज़ और तिपाई का नाम दिया था। यह समझ-समझकर उसे लज्जा ज्ञात होने लगी।

सोने के कमरे में रानी अपनी बुआ से बातें कर रही थी। उन्हें

जूनिया के लौट आने की आहट नहीं मिली थी। जूनिया ने वहाँ प्रवेश किया।

सानी की बुआ ने कहा—"आने में कुछ देर कर दी। सानी कब की रोटी तैयार किए बैठी हुई है।"

"कल जाने का निश्चय कर चुका हूँ। कई जगह मिलना-जुलना था।"

"कल ही, इतने शीघ्र!"

"क्या करूँ, मजबूरी है, स्कूल में छुट्टी भी नहीं। स्कूल में तुम समझो, सारा काम मेरे ही ज़िम्मे है। मैं जाकर अगर स्कूल का घंटा न बजाऊँ, तो कोई भी विद्यार्थी पढ़ने न आवे। विद्यार्थियों की बात छोड़ दो बुआ, मास्टर लोग भी मेरे ही इशारे को सुनकर अपना दरजा बदलते हैं।"

"सानी को भी साथ ले जाओगे?"

"हाँ, इसी को लेने तो आया हूँ।"

"ठीक है बेटा, ले जाओ। इसके बिना तुम्हें कष्ट और तुम्हारे बिना इसे तकलीफ़।"

सानी चुपचाप यह सब कुछ सुन रही थी। जूनिया पत्नी को राजधानी चलने के लिये राज़ी पाकर ख़ुश हो उठा, और रात ही में गाड़ीवान के पास जाकर उसे एक रुपया बयाने का दे आया, और दूसरे दिन बारह-एक बजे चल देने का निश्चय कर घर आया।

सानी बोली—"कल ही कैसे जा सकते हैं। इतने दिनों से यहाँ रहते आए हैं, एक ही दिन में कैसे सब कुछ तय कर लेंगे?"

"तय करना ही क्या है। गुसाईंजी से कह-सुन आया हूँ। जिसका जो कुछ देना था, दे आया हूँ। बग़ीचा और मकान बुआ के लड़के को दे जायँगे। केवल एक ही काम बचा है—वह है मकान के अंदर की तमाम चीज़ों को बाँध लेना। इन चीज़ों में से भी बहुत-सा बेकार सामान है, उसे राजधानी तक लादकर

क्या करेंगे। मेरे लोहारी और बढ़ईगिरी के जितने भी औज़ार हैं, सब अपने उस्ताद बढ़ई के यहाँ रख जाऊँगा।"

जूनिया ने रात में ही अधिकांश सामान बाँध लिया। सुबह उठकर उसने तमाम चीज़ों का इंतज़ाम कर लिया, और एक बजे तक बैलगाड़ी लदवाकर, पत्नी-पुत्र-सहित गाड़ी में सवार हो राजधानी को चल दिया।

राजधानी पहुँचकर जूनिया ने ऑउट हाउस में अपना सामान उतारा, और सकुचित पदों से सानी ने अपने पुत्र को गोद में लेकर वहाँ प्रवेश किया। जूनिया की अनुनय-विनय मानकर सानी ने साया पहन लिया। अभ्यास न होने के कारण सानी उस नवीन वस्त्र में भूली और खोई-सी प्रतीत हो रही थी।

शोर सुनकर डेज़ी उसी समय जूनिया के पास आई, और कहने लगी—"स्त्री-पुत्र को ले आए?"

"जी।"

"कहाँ है. मुझे दिखाओ।"

मुक्त प्रकृति की कठोरता में से अपनी आजीविका निकालनेवाली हृष्ट-पुष्ट शरीर की सानी डेज़ी के समीप आई। उसने लज्जा से सिर नीचा कर लिया।

डेज़ी ने पूछा—"साया ठीक हुआ?"

सानी मूर्तिवत् रही। डेज़ी ने उसकी गोद के बालक के सिर पर अपना उजला हाथ रखकर पूछा—"फ्रॉक ठीक हुआ?"

सानी फिर नीरव रही। जूनिया ने उत्तर दिया—"ठीक ही हुए। गाँव की गँवार है, धीरे-धीरे बोलना सीखेगी।"

पाँचवें दिन जूनिया स्त्री और पुत्र को गिरजे में ले गया, और पादरी साहब ने उन्हें बपतिस्मा दिया। छोटे बालक का नाम जेम्स रक्खा गया।

तृतीय खंड

क्रिया की खोज

पहला परिच्छेद

हिंदी-टीचर

जिस कमरे में जूनिया रहता था, उसकी बग़ल में ही एक और कमरा था। उसमें हेडमास्टर साहब का कुछ टूटा हुआ फ़रनीचर, कुछ फूटे हुए लैंप, पाँच-सात मिट्टी के तेल के कनस्तर, एक-दो पुरानी दरियाँ और कुछ किताबें तथा अखबार रक्खे हुए थे।

सानी के आने पर हेडमास्टर साहब ने जूनिया को उस कमरे की ताली देते हुए कहा—"आपको अब स्थान की कमी प्रतीत होगी। यह बग़ल के कमरे की ताली है। उसमें कुछ टूटा-फूटा सामान पड़ा है, आपके उपयोग का हो, तो आप उसे भी काम में ला सकते हैं।"

जूनिया ने विनीत भाव से ताली ली, और चाय पीकर दूसरे दिन सुबह कमरा खोला। कमरे के अंदर का सामान देखकर वह प्रसन्न हो गया, और सानी से कहने लगा—"यह सब सामान भी हमें व्यवहार में लाने के लिये मिल गया है। मैं ये सब चीज़ें बाहर रखता हूँ, तू इसे साफ़ कर। दिन-भर छुट्टी है, आज यही काम होगा।"

जूनिया ने तमाम चीज़ें कमरे के बाहर रक्खीं। बीच में एक द्वार था, उसे खोल देने पर उसके रहने के कमरे और नए कमरे के बीच में मार्ग निकल आया। सानी कमरा साफ़ करने लगी।

जूनिया बाहर रक्खी हुई मेज़ को झाड़ते हुए कहने लगा—"एक भूल हो गई सानी!"

"कौन-सी ?"

"अपने तमाम औज़ार चौमुखिया के बढ़ई को दे आया।"

"यहाँ उनकी ज़रूरत ही क्या है ?"

"ज़रूरत दिखाई देने पर ही तो मुझे पछतावा हुआ। यह मेज़ तो बिलकुल ठीक है, पर दोनों कुर्सियाँ टूटी हुई हैं। इस वक़्त एक हथौड़ा भी होता, तो मैं ठोंक-पीटकर इन्हें काम का बना लेता। स्कूल के अनेक मास्टर जूनिया को सिड़ी समझने लगे हैं। सानी, कभी-कभी मुझे भी इस बात में संदेह नहीं जान पड़ता।"

सानी कमरा बुहारते-बुहारते बाहर आई और कहने लगी—"क्या कह रहे हो ?"

"कुछ नहीं। एक हथौड़ा भी तो अपने लिये नहीं रक्खा, कितने काम की चीज़। इसके अतिरिक्त बाप-दादा की यादगार बिना सोचे-समझे गँवा दी।"

सानी मुँह बनाकर बोली—"बाप-दादों के धर्म की परवा नहीं की, और एक हथौड़े के लिये ठंडी साँसें भर रहे हो ?"

जूनिया ने बात टालकर कहा—"साफ़ करके इन कनस्तरों में आटा-चावल रक्खेंगे।"

सानी फिर कमरा साफ़ करने चली गई। जूनिया मेज़ के ऊपर खड़े होकर दोनो दरियों को फटकारने लगा।

सानी बाहर आकर कहने लगी—"भूखे पेट परिश्रम नहीं होता। मैं जल्दी से रोटी पका लेती हूँ। छोड़ दो अब। फिर खा-पीकर हो जायगा।"

"ज़रा देर ठहरो सानी। एक ही कमरा पास में था। लाचारी थी, इसीलिये उसी में खाना भी पकाता रहा। तुम नया कमरा साफ़ कर चुकीं, उसके आधे हिस्से में इस दरी को मोड़-माड़ इसका

फटा हिस्सा छिपाकर बिछा देता हूँ। वहीं चारपाइयाँ डालकर सोने का इंतज़ाम हो जायगा। आधे हिस्से में एक तरफ़ झिझरी और दूसरी ओर सामान रख देता हूँ। अभी मिनटों में। ज़रा देर ठहरो, खाना इसी नए कमरे में बनाओगी।"

जुनिया और सानी ने तमाम खाने-पीने का सामान उठाकर उस कमरे में रक्खा।

सानी चूल्हा सुलगाती हुई कहने लगी—"नगर में तमाम चीज़ें ख़रीदनी पड़ती हैं। चौमुखिया में लकड़ी-पानी का कैसा सुख था!"

"लकड़ी जंगल से लाने में परिश्रम भी तो पड़ता, उसका क्या कुछ भी मूल्य नहीं?"

"कोयला तो लकड़ी से महँगा आता होगा न?"

"हाँ।"

"फिर लकड़ी ही से क्यों न खाना पकाया जाय?"

"कुछ अधिक खर्च नहीं होगा। अंत में वही बात आ पड़ती है। लकड़ियाँ जलाने से धुआँ पैदा होता है, जो सारे घर को गंदा करता है। कपड़े कितनी जल्दी मैले हो जाते हैं, बर्तनों में अलग कारिख जमा होती है, और दीवारें तथा छत अलग काला और डरावना रूप धारण करते हैं। साफ़ रहेंगे, साबुन कम खर्च होगा, ये क्या बचत की मदें नहीं?"

सानी ने सिर हिलाकर कहा—"हाँ, ठीक बात है।"

"पहले बहुत दिनों तक मैं भी इस बात को नहीं समझा था। लकड़ियों से ही खाना पकाता रहा। कमरे को धुएँ से बचाने के लिये बाहर उस दीवार के सहारे चूल्हा बनाया था। परभू चाचा ने आकर मना किया। कहने लगे, जाड़े और बरसात में बड़ा कष्ट होगा। कोयलों से खाना बनाओ। मैंने उनकी बात मान ली।"

सानी रोटी पकाने लगी। जूनिया एक पत्थर उठा लाया, और दो-चार कीलें खोज, ठोक-ठाककर कुर्सियों की मरम्मत करने लगा। लड़का चारपाई पर पड़ा सो रहा था। बाहर ठोक-ठाक की आवाज़ सुनकर जग पड़ा, और रोने लगा। सानी उसके निकट जाकर उसे चुप कराने लगी।

जूनिया ने कमरे के अंदर आकर कहा—"चलो, यह चारपाई उठाकर नए कमरे में बिछा देता हूँ। वहीं तुम अपने बच्चे को भी देखती रहोगी, और खाना भी तैयार होता रहेगा। इस कमरे में वह दूसरी दरी बिछाकर मेज़ लगा देता हूँ। यह हमारी बैठक का कमरा रहेगा।"

सानी लड़के को लेकर उठी। जूनिया ने चारपाई तथा बिस्तर उठाकर दूसरे कमरे में रख दिया, और वहाँ दरी बिछाकर मेज़ रख दी। दोनो कुर्सियाँ भी वहीं डाल दीं।

इसके बाद जूनिया ने तमाम बाहर पड़ा हुआ सामान साफ़ कर दोनो कमरों में, जो जहाँ के लिये उपयुक्त समझा, रख दिया।

खा-पीकर, जो कुछ काम रह गया था, जूनिया ने पूरा किया। संध्या-समय परभू चाचा को चाय पीने का निमंत्रण दे आया। परभू चाचा आए, और जूनिया की गृहस्थी देखकर बड़ा संतोष प्रकट किया।

दूसरे दिन स्कूल था। जूनिया को पका-पकाया खाने को मिल गया था। वह आठ ही बजे खा-पीकर स्कूल चला गया।

स्कूल उस समय खुला नहीं था। स्कूल की चाभियाँ दूसरे चौकीदार के पास रहती थीं, वही स्कूल खोलता था। वह स्कूल के हाते में ही, अपने क्वार्टर में, रहता था।

जूनिया चौकीदार के क्वार्टर में पहुँचा, और कहने लगा—"क्यों जी! आज स्कूल नहीं खोलोगे क्या?"

चौकीदार खाना पकाकर खा रहा था, बोला—"आज तो तुमने रात भी खुलने नहीं दी। पकी-पकाई रोटी खाने को मिली, जान पड़ती है। बाल-बच्चों को ले आए?"

"हाँ।"

"कब?"

"कल ही लौटा हूँ। लाओ, चाभी दे दो, मैं तब तक स्कूल खोलता हूँ।"

"आठ तो बजने दो।"

"आठ बज चुके। मेहतर बरामदों को साफ़ कर रहा है, फिर वह दरजों में झाड़ू देगा, और मैं मेज़ें साफ कर तुम्हारा काम कर दूँगा।"

चौकीदार ने ख़ुश होकर चाभियाँ देते हुए कहा—"तुम बहुत नेक आदमी हो जूनिया! मगर तुम इसी तरह मुझे टाल देना चाहते हो। तुमने अपने बेटे होने की ख़ुशी में दो बताशे भी तो नहीं खिलाए!"

"बताशे क्या, मैं तो तुम्हारी दावत कर दूँ न? पर मेरे यहाँ खाने से तुम्हारी ज़ात चली जायगी।" कहकर जूनिया स्कूल खोलने चला गया।

स्कूल खोलकर उस दिन जूनिया ने दूसरे चौकीदार का बहुत-सा काम कर दिया। तमाम दरजों की खिड़कियाँ और द्वार खोल दिए, मेज़ों और कुर्सियों पर झाड़न फटकार दिया, एवं ब्लैकबोर्डों पर की सफ़ेदी मिटा डाली।

फिर उसने हॉल की घड़ी में जाकर वक़्त देखा, अभी नौ बजने में पंद्रह मिनट थे, जो उसके अपने ही थे। दो-चार लड़के आकर फ़ील्ड में खेलने लगे थे।

जूनिया पिछले भाग के एक दरजे के अंदर चला गया। उसके

दिमाग़ के अंदर अँगरेज़ी की शिक्षा प्राप्त कर स्कूल में मास्टर बन जाने की धुन वैसी ही बसी हुई थी। वह एकांत पाकर मास्टर साहब की कुर्सी पर बैठ गया। कुछ देर अपनी किताब खोलकर पढ़ी। फिर खड़ा हो गया, और धीरे-धीरे मास्टरी का रिहर्सल करने लगा।

उसने किताब मेज़ पर उलट दी। पहले डेस्क की ओर उँगली कर धीरे-धीरे पूछा—"कुड ?"

उसने कुछ देर प्रतीक्षा की।

फिर दूसरे डेस्क की ओर इशारा कर पूछा—"यू. कुड ?"

फिर उसने स्वर बदलकर स्वयं ही उत्तर दिया—"सी यू डी कुड।"

"हैऽऽ, सी यू डी कुड !" जूनिया ने ताड़ना दिखाते, तर्जनी हिलाते हुए कहा।

फिर तीसरे डेस्क से पूछा—"यू ?"

मानो तीसरे डेस्क ने उत्तर दिया—"सी यू एल् डी कुड, कुड माने—"

"नहीं, यू ?" कहकर चौथे से पूछा।

"सी ओ यू एल् डी कुड, कुड माने सका।"

"शाबाश !" कहकर जूनिया ने मन में विचार किया—होशियार है, इसका नंबर बदलना चाहिए, पहला होना चाहिए।

जूनिया उठा, और पहले सीट की तिपाई और डेस्क उठाकर चौथे की जगह पर रख दिया, और चौथे की तिपाई-डेस्क पहले के स्थान पर क़ायम कर दिया।

वह फिर मास्टर साहब की कुर्सी पर आकर बैठ गया, और न-जाने क्या करना चाहता था कि एक उस दरजे का विद्यार्थी आ पहुँचा।

जूनिया घबराकर उठा। लड़के ने उसे कुर्सी से उठते हुए देख लिया।

"अच्छा! यह बात है। मैं अभी शर्मा मास्टर साहब से कह दूँगा।"

"क्या कह दोगे?" जूनिया ने कोट झाड़ते हुए कहा।

"कहूँगा, जूनिया आपकी कुर्सी पर बैठता है।"

"कह देना। मैं नहीं डरता किसी से। चोरी की है क्या? सारी बात योग्यता की है। अगर आदमी पढ़-लिखकर तरक़्क़ी कर ले, तो चाहे जिस कुर्सी पर बैठ सकता है।"

"लेकिन तुम चौकीदार हो, क़ुली हो।"

"क़ुली नहीं हूँ। जूनिया सिर पर बोझ ले जाना कब का छोड़ चुका।" कहकर जूनिया ने किताब सँभाली, और स्कूल का घंटा बजाने चला गया।

धीरे-धीरे साल-भर बीत गया। जूनिया ने प्राइमर अलग रख दी। वह उसे यद्यपि कंठस्थ थी, तथापि उसे उसमें कुछ भीषण शंकाएँ नज़र आईं। उसकी शंकाओं का समाधान कोई न कर सका। उन्हें वैसा ही रखकर जूनिया ने अँगरेज़ी की दूसरी किताब पढ़नी शुरू की। घर पर, सड़क पर, कुर्सी पर, चारपाई पर, बाज़ार में, फ़ील्ड में, स्कूल में, गिरजे में, सर्वत्र ही जूनिया की किताब खुलती।

सानी धीरे-धीरे सभ्य हो चली थी। अब वह पति-देवता की पाँचों आज्ञाओं का पालन करती थी। उसे अब न बोझ ढोना पड़ता था, और न जूठन ही खानी पड़ती थी। अब वह साया पहन कुर्सी पर बैठने में हिचकती न थी। अब वह जूता पहन जूनिया के साथ गिरजे में जाती हुई शर्माती न थी। जूनिया ने उसे अँगरेज़ी पढ़ाने के लिये लाख सिर पटका, पर उधर उसका

मन ही नहीं लगा। हाँ, डेज़ी की संगति से उसे कुछ सुई चलाने का अभ्यास ज़रूर हो गया था।

पीटरलाल और जूनिया एक ही मालिक के सेवक थे, पर दोनो के कार्य-क्षेत्र अलग-अलग थे। पीटरलाल जूनिया के घर से कुछ दूर पर भी रहते थे। दोनो के बीच का भ्रातृ-संबंध पूर्ववत् स्थिर रहा। पीटरलाल के नगर में रहने पर वे दोनो एक दूसरे के घर जाकर सप्ताह में एक बार ज़रूर ही मिलते थे।

जूनिया का लड़का जेम्स चलने-फिरने और अपनी सुमधुर वाणी से घर और आँगन को प्रतिध्वनित करने लगा था।

राजधानी में रहते-रहते जूनिया की रुचि भी परिष्कृत हो चली थी, और उसके पास कुछ साधन भी जुटने लगे थे। उसने अपनी बैठक सजाने में कसर न की। पीटरलाल ने उसे हिंदी में ईसाई-धर्म-संबंधी अनेक छोटी-बड़ी किताबें दी थीं। उन्हें अच्छी तरह रखने के लिये जूनिया एक अलमारी ले आया। उसने भाँति-भाँति के बाइबिल के वाक्य काग़ज़ पर लिखकर दीवारों पर जड़े थे। ईश्वर की दस आज्ञाएँ फिर लिखकर दीवार पर चिपकाई थीं, और अपनी पाँचो आज्ञाओं को भी नहीं भूला था। डेज़ी की सहायता से सानी ने क्रॉस-स्टिच में दो जाली के रूमाल काढ़े थे। एक में अँगरेज़ी में 'वेलकम' और दूसरे में 'ही डाइड फ़ॉर अस' लिखा हुआ था। जूनिया ने उन दोनो को फ़्रेम कराकर दीवारों पर लटका दिया था।

स्कूल में अन्य दरजों को हिंदी पढ़ाने के लिये एक टीचर की ज़रूरत हुई। हेडमास्टर साहब जूनिया को न भूले। उन्होंने उसे उक्त स्थान पर नियुक्त कर उसके वेतन में दो रुपए बढ़ा दिए।

दूसरा परिच्छेद

अफ़सर

उस दिन जूनिया नया सूट पहन, सिर पर नया साफ़ा लपेट स्कूल चला। खुले कॉलर का कोट और पतलून पहनने की उसे इच्छा ज़रूर थी, पर हेडमास्टर साहब की सादगी की उस पर गहरी छाप पड़ी थी। जूनिया सोचता था, अगर खुले कॉलर का कोट पहनूँगा, तो हेडमास्टर साहब की नज़रों में ज़रूर गिर जाऊँगा। इसके अतिरिक्त खुले कॉलर के लिये उजली क़मीज़ और टाई चाहिए। बंद कॉलर के अंदर अगर कुरता मैला भी हो, तो काम चल जाता है।

उस हार की रात में जिस लाठी ने उसका साथ दिया था, जूनिया ने बड़े यत्न से उसे सँभालकर रक्खा था। वह उसे लेकर कभी-कभी घूमने निकल जाता था, पर स्कूल कभी नहीं ले गया। आज टीचरी के पहले दिन उसने उसे भी स्कूल ले जाना आवश्यक समझा। कहने लगा, डंडा साथ रखना चाहिए। लड़कों के पीटने के लिये तो नहीं, पर डराने के लिये कुछ होना ही चाहिए।

रोज़ की आदत के अनुसार जूनिया जल्दी ही घर से निकल पड़ा था। मार्ग में सोचने लगा—मैं बड़े सवेरे स्कूल चला आया। कोई भी मास्टर इतनी जल्दी स्कूल नहीं पहुँचते। लोग कदाचित् मेरी हँसी उड़ावेंगे। मैं अब चौकीदार नहीं रहा, क्यों इतने पहले जा पहुँचूँ। दस बजते-बजते चला ही जाऊँगा।

वक़्त बिताने के लिये जूनिया कुछ घूमकर स्कूल जाने का

विचार कर रहा था। अचानक कहने लगा, मेरी जगह जो चौकीदार नियत हुआ है, शायद वह घंटा बजाना भूल जाय। नौकरी का पहला दिन ठहरा, त्रुटि हो जानी संभव है।

बेचारे नए चौकीदार को कर्तव्य-पथ सुझाने के लिये उसने अपनी गति परिवर्तित कर देने की ठानी, पर फिर न-जाने क्या सोच, एक दीवार पर बैठकर अपनी पुस्तक खोली, और दुविधा में पड़ा उसे पढ़ने लगा। तुरंत ही फिर सोचने लगा—मैं कहाँ बैठ गया। कोई परिचित मनुष्य देखेगा, तो क्या कहेगा। मुझे अपनी स्थिति का ज्ञान होना चाहिए। मैं अब मास्टर हूँ। चौकीदारी का अंतिम दिन कल बीत चुका।

जूनिया उठा, और घूमने निकल गया। कुछ दूर जाकर फिर स्कूल के पथ पर लौट आया। स्कूल का घंटा उस समय भी बजना शुरू नहीं हुआ था। उसने लंबे क़दम बढ़ाए, और कहने लगा, जूनिया! मूर्ख! तू किस फेर में पड़ गया। नया चौकीदार बहुत चुस्त प्रतीत होता था। उससे भूल होनी असंभव है। मैं ही मुँह की खा चुका हूँ। घंटा ज़रूर बज चुका है, मैंने सुना नहीं। मास्टरी के पहले ही दिन की यह देर ज़रूर हेडमास्टर साहब को खटकेगी।

वह भागता हुआ स्कूल की ओर बढ़ा। अचानक सुना—"ठन्-ठन्-ठन्, ठन्-ठन्-ठन्......"

जूनिया ने संतोष की साँस ली, और धीरज के साथ स्कूल चला। इतना होने पर भी वह सब मास्टरों से पहले वहाँ पहुँच गया।

मार्ग में लड़के उत्सुक होकर उससे पूछने लगे—"जूनिया, आज घंटा नहीं बजाया?"

"नहीं, मेरी बदली हो गई। मैं आज से मास्टर हो गया।" कहते हुए जूनिया ने अपनी लाठी दिखाई।

जूनिया हॉल में गया। घड़ी देखी। अभी दस बजने में पंद्रह मिनट थे। वहाँ से उसने चौकीदार के पास जाकर उससे कहा—"हाँ, ठीक है। इसी तरह धीरे-धीरे रस्सी खींचते रहो। अधिक न खींचना, नहीं तो घंटा ऊपर अटक जायगा, और बजना बंद हो जायगा, बदनामी होगी।"

स्कूल शुरू हुआ। पहले घंटे में जूनिया को 'अ' दरजे में हिंदी पढ़ानी थी। उसने सिर पर साफ़ा जमा, लाठी और जूतों का खटका देते हुए दरजे में प्रवेश किया।

पंद्रह छोटे-छोटे लड़कों का दरजा था। किसनदास ने रामसिंह की तख्ती बदल ली थी, और हेतराम की नई किताब खो गई थी। इन दो प्रश्नों को लेकर दरजे में शोर मचा हुआ था, उस समय जूनिया ने वहाँ प्रवेश किया।

जूनिया के प्रति आदर प्रकट करने के लिये कोई भी लड़का खड़ा नहीं हुआ। जो पाँच-सात खड़े थे, वे पहले ही से उस हालत में थे। लड़कों ने समझा, जूनिया चौकीदार है, रजिस्टर लेने आया होगा।

जूनिया को यह बात बहुत बुरी लगी। उसने मेज़ पर कई बार डंडा मारते हुए कहा—"चुप रहो। मास्टर दरजे में आ गए, और खड़ा होना तो एक ओर, तुमने यह शोर मचा रक्खा है!"

दो-चार लड़के कहने लगे—"ईं, मास्टर आ गए!"

पाँच-सात कानाफूसी करने लगे—"यह तो जूनिया चौकीदार है।"

हेतराम अपने कोट की बाँह से गालों पर के आँसू पोंछता हुआ कहने लगा—"ऊँऽऽ मेरी किताब किसी ने चुरा ली। अब बाबूजी मुझे घर जाने पर मारेंगे। ऊँऽऽ।"

रामसिंह किसनदास के हाथ से अपनी तख्ती छीनते हुए कह

रहा था—"ला मेरी तख्ती, नहीं तो चल अभी हेडमास्टर साहब के पास।"

जूनिया फिर लाठी मेज़ पर बजाकर कुर्सी पर बैठा। अब सब लड़के घबराए। समझने लगे, चौकीदार की इतनी हिम्मत नहीं हो सकती कि दरजे की कुर्सी पर बैठ सके। फिर जूनिया कोई मामूली चौकीदार न था, ऑफ़िस की बेंच पर बैठता था।

जूनिया रोब के साथ कहने लगा—"खड़े हो जाओ तुम सब-के-सब अपनी-अपनी बेंचों पर। मैं तुम सबको सज़ा दूँगा।"

एक लड़का बोला—"आप हमें पढ़ाने आए हैं?"

"और नहीं तो क्या तुम्हारे साथ मज़ाक़ करने आया हूँ। बड़े अफ़सोस की बात है, तुम्हें अब तक नहीं मालूम हुआ कि मैं तुम्हारा मास्टर हो गया हूँ।"

हेतराम कुछ चुप हो गया था, फिर रोने लगा—"मास्टरजी, मेरी किताब चुरा ली, ऊँ-ऊँ-ऊँ।"

"चुपो, ज़रा ठहरो, तुम्हारी किताब का भी पता लगाऊँगा।"

कोई भी लड़का बेंच पर खड़ा नहीं हुआ था।

जूनिया ने फिर क्रोध के स्वर में कहा—"तुम बेंच पर खड़े नहीं हुए, उठाऊँ डंडा!"

लड़कों ने घबराकर कहा—"माफ़ कीजिए, हमें कुछ मालूम न था।"

"तुम मेरे आने पर खड़े क्यों नहीं हुए?"

"अब मालूम हो गया, अब वैसी भूल न करेंगे।"

"अच्छा, मैं दरजे के बाहर जाता हूँ, और फिर आता हूँ।" कहकर जूनिया दरजे से चला गया, और उसने फिर प्रवेश किया।

इस बार सब लड़के बाक़ायदा उठे। जूनिया ने बहुत गंभीर होकर उन्हें बैठ जाने का इशारा किया। सब बैठ गए, फिर उसने

हेतराम को समीप बुलाकर पूछा—"तुम्हारी किताब खो गई ! किसने चुराई ?"

"मालूम नहीं । मैं पानी पीने गया था ।"

"इसकी किताब किसने चुराई ? सच-सच कहो, नहीं तो मैं सारे दरजे को पीट डालूँगा !"

किताब का कुछ पता न चला । जूनिया ने लड़के को धीरज देकर कहा—"अगर शाम तक किताब न मिली, तो मैं तुम्हारे लिये एक किताब ख़रीद दूँगा ।"

किसनदास ने रामसिंह की तख्ती लौटा दी थी । दरजे में शांति विराज गई थी ।

जूनिया ने कहा—"हिंदी का कौन-सा सबक़ पढ़ना है ?"

"आज डिक्टेशन है मास्टर साहब !" एक लड़के ने कहा ।

"अच्छी बात है, सब तैयार हो लिखो ।" कहकर जूनिया ने किताब खोली, और डिक्टेशन बोलने लगा ।

जूनिया आगे के लड़कों का डिक्टेशन देख रहा था कि पीछे फिर शोर हुआ । एक लड़का एक दूसरे लड़के की तख्ती छीनता हुआ कह रहा था—"देखा, मास्टर साहब, इसने तख्ती में क्या लिख दिया है ।"

लड़के ने आरंभ का कुछ हिस्सा मिटा दिया था, पर कुछ बाक़ी रह गया था । दूसरे लड़के ने वह तख्ती छीनकर जूनिया के सामने रक्खी ।

जूनिया ने पढ़ा, उसमें लिखा था—"डूम है ।"

जूनिया का दिल धड़कने लगा, उसने लड़के को पास बुलाकर कहा—"यह तुमने क्या लिखा ?"

"कुछ नहीं मास्टर साहब !"

"किसके लिये लिखा ?"

"किसी के लिये नहीं।"

"तुम्हें मैंने कहीं देखा है।"

"हाँ।"

"कहाँ?"

"चौमुखिया में।"

"प्रधान के यहाँ?"

"हाँ, वह मेरे मामा हैं।"

जूनिया ने उस लड़के से कहा—"देखो, यहाँ स्कूल है, घर से मा-बाप ने तुम्हें यहाँ कुछ अच्छी बातें सीखने को भेजा है, अगर बुरी बातें सीखोगे, तो उसका अच्छा असर न होगा। जाओ, अपनी जगह बैठो।"

पहला घंटा बजा, और जूनिया लाठी उठा चिंतित हृदय से दूसरे दर्जे की ओर चला।

किसी प्रकार सातो घंटे बिताकर जूनिया को छुट्टी मिली। वह सीधा पीटरलाल के यहाँ पहुँचा। उन्हें अपनी तरक़्क़ी की कथा सुनाई, और रात के भोजन के लिये अपने घर ले गया।

खाते वक़्त पीटरलाल ने पूछा—"नौकरी पसंद है न? वेतन क्या मिलेगा?"

"वैसे नौकरी पसंद ही है। चौकीदारी से तो अच्छी ही है। वेतन में सिर्फ़ दो रुपए की तरक़्क़ी हुई है। लेकिन चाचाजी—" कहते-कहते जूनिया रुक गया।

"हाँ, चीज़ें महँगी हैं। नगर का निवास ठहरा, लकड़ी, मिट्टी, पानी और रोशनी के लिये भी पैसा देना पड़ता है। फिर अब तू परिवारवाला भी बन गया, चौदह रुपए महीने से होता क्या है?"

"चाचाजी, अँगरेज़ी की एक किताब मैं समाप्त कर चुका हूँ।

दूसरी भी आधी पढ़ ली है। छोटे दरजों में अँगरेज़ी पढ़ाने का काम मिल जाता, तो ठीक था।"

"हेडमास्टर साहब की राय लेकर एक दिन फिर पादरी साहब से मिलो। नेक हैं, सुन लेंगे।"

"यही सोच रहा हूँ।"

पीटरलाल के विदा होते समय जूनिया ने उनके उधार की आधी रक़म लौटाते हुए कहा—"देर के लिये क्षमा माँगता हूँ।"

पीटरलाल—"ऐसी क्या जल्दी है। रक्खो, अभी तुम्हें ज़रूरत है।"

जूनिया—"जब काम पड़ेगा, मैं फिर आपसे माँग लूँगा, आपका तो भरोसा ही है चाचाजी!"

"भरोसा केवल मसीह का है, जिसने हमारे पापों को अपने रक्त से धोया। उसके आशीर्वादात्मक हाथों की छाया तुम्हारे सिर पर हो कि तुम उसके विश्वास पर क़ायम रहो।" कहकर पीटरलाल ने रुपए सँभाले, और अपने घर चले।

जूनिया को हिंदी पढ़ाते हुए कई महीने हो गए। उसकी दशा सुधर चली थी। किसी तरह डरा-धमका, हाथ पटक, लाठी दिखा, लड़कों को घेर पढ़ाई कर लेता था। छोटे दरजों के लड़के थे, मान ही जाते थे।

जूनिया का सहयोगी चौकीदार पहले जूनिया का दोस्त था। वह उसके साथ भूमि पर बैठकर धूम्र-पान करता, धार्मिक बहस करता, और कभी-कभी देश-काल की आलोचना में भी रस लेता था।

परंतु अब? अब जब से जूनिया टीचर हुआ है, वह उसके क्वार्टर की ओर का मार्ग छोड़ चुका है। अचानक जब कभी भेंट हो जाती है, तब पहले जूनिया उससे कहता है—"सलाम जी, चौकीदारजी, आप आनंद में तो हैं?"

जूनिया पहले उसे "आप" कहकर संबोधित नहीं करता था, चौकीदार उसे अब भी तू ही कहकर पुकारता है, पर ज़रा धीमे स्वर में। जूनिया इस असम विनिमय के कारण चौकीदार की छाया से घबराता था।

उस दिन वह पादरी साहब की सेवा में गया, और जाकर कहने लगा—"हुज़ूर।"

पादरी साहब ने उसे फिर टोककर कहा—"देखिए, आप मुझसे हुज़ूर न कहें।"

"आप मालिक हैं, बड़े हैं।"

"मालिक सिर्फ़ ईश्वर है, और हममें से कोई भी बड़ा या छोटा नहीं। सब बराबर हैं।"

"मगर सबको बराबर तनख्वाह नहीं मिलती। जूनिया स्कूल में हिंदी पढ़ाता है। दिन-भर उतनी ही मिहनत करता है, जितनी अँगरेज़ी के मास्टर, पर वह महीने में पचास रुपए ले जाते हैं, और बेचारे जूनिया को पंद्रह भी नहीं मिलते!"

पादरी साहब गंभीर होकर उसकी ओर देखने लगे।

वह कहता जा रहा था—"स्त्री को ले आया हूँ, एक लड़का भी हो गया है। यह अँगरेज़ी की दूसरी किताब भी क़रीब-क़रीब पढ़ डाली है। कहीं खेल-तमाशे में नहीं जाता। प्रभु पर ईमान लाता हूँ, रोज़ दोनो वक़्त दुआ करता हूँ।"

पादरी साहब ने जूनिया के हाथ से अँगरेज़ी की किताब लेकर कहा—"यह पढ़ डाली?"

"जी।"

"समझ में आती है?"

"जहाँ नहीं आती, पूछ-पाछ लेता हूँ। पर कई जगह आपके स्कूल के मास्टर भी नहीं बता सकते!"

"जैसे ?"

जूनिया ने साहस कर कहा—"जैसे लफ़्ज़ कुछ को ही ले लीजिए। मैं कहता हूँ, इसमें इतनी फ़िज़ूलखर्ची क्यों की गई है। सी यू डी लिख देते, काम बन जाता। ओ और एल् भी वहाँ क्यों ठूँस दिए गए हैं ?"

पादरी साहब ने सकरुण हास्य के साथ कहा—"भाई, यह बहुत दिनों से चली हुई बात है। वह ऐसा ही लिखा जाता है।"

जूनिया लौट-फिरकर फिर अपने मतलब पर आया, और कहने लगा—"मुझे स्कूल में सबसे छोटे दरजे में अँगरेज़ी पढ़ाने का हुक्म दे दीजिए।"

"नहीं, श्रीयुत जॉन, अभी ऐसा नहीं हो सकता। हमें काम वही करना चाहिए, जो पक्का हो। अँगरेज़ी की योग्यता हासिल करने के लिये अभी आपको मिहनत करनी पड़ेगी। ठहरो, मैं तुम्हें एक और किताब देता हूँ।" कहकर पादरी साहब उठे, और एक अँगरेज़ी-ग्रामर की किताब लाकर जूनिया को दी।

जूनिया ने मुँह बनाया, मानो उसके सिर एक बड़ा भारी बोझ रख दिया गया हो। उसने किताब खोली।

पादरी साहब—"इसे ग्रामर या व्याकरण कहते हैं। किसी भी भाषा के शुद्ध ज्ञान के लिये हमें उसकी ग्रामर जान लेना बहुत ज़रूरी है। लो, इस किताब को घर ले जाओ, और खूब याद करो। इसके अध्ययन में आप जितना ज़ोर देंगे, उतने शीघ्र आपको अँगरेज़ी-भाषा का सही-सही लिखना, बोलना और समझना आ जायगा।"

जूनिया ने निराश आँखों से किताब ली, और अभिवादन कर चला आया।

स्कूल में इंस्पेक्टर साहब के निरीक्षण का समाचार फैला।

जूनिया ने भी तमाम होशियार लड़कों को छाँट-छाँटकर दरजे में आगे बिठाया।

नियत तारीख़ को इंस्पेक्टर साहब स्कूल आए।

घंटा समाप्त होने को था। जूनिया पहले दरजे में हिंदी पढ़ा चुका था। इंस्पेक्टर साहब को आता देखकर फिर पढ़ाने लगा।

पाठ का शीर्षक था 'ईमानदारी'। जूनिया ने पुस्तक से पढ़ाया—"लड़को! जगत् में अर्थात् संसार यानी दुनिया में ईमानदारी अर्थात् नेकी या भलाई सबसे बड़ा धन यानी संपत्ति या दौलत है।"

इंस्पेक्टर साहब ने एक लड़के से पूछा—"ईमानदारी किसे कहते हैं?"

लड़के ने उत्तर दिया—"नेकी।"

इंस्पेक्टर साहब ने फिर पूछा—"नेकी किसे कहते हैं?"

लड़का चकराने लगा।

जूनिया ने दरजे के सबसे तेज़ लड़के की ओर इशारा कर कहा—"तुम बताओ, नेकी माने?"

लड़का बोला—"नेकी? नेकी माने ईमानदारी।"

इंस्पेक्टर साहब ने हँसकर अपनी नोट-बुक में कुछ लिखा। घंटी बज गई।

इंस्पेक्टर साहब के साथ-साथ जूनिया भी दरजे से निकला, मार्ग में उनसे कहने लगा—"हुज़ूर, योग्यता बढ़ाने के लिये अँगरेज़ी पढ़ रहा हूँ। एक भेद समझ में नहीं आता—डी ओ डू होता है, जी ओ भी वैसा ही क्यों नहीं होता?"

इंस्पेक्टर साहब ने भृकुटी तानी, और फिर कुछ नोट किया। जूनिया खिसक आया।

तीसरा परिच्छेद

पादरी साहब

"सानी! तुम्हारे पैर पड़ता हूँ, मान जाओ। कुछ पढ़ना-लिखना सीख जाओगी, तो व्यर्थ न होगा। डेज़ी को देखो न। पढ़ती-लिखती भी है, और पियानो भी बजाती है। चौमुखिया में खेत खोदती थीं, लकड़ी-घास ढोती थीं, गुसाईंजी के जूठे बर्तन तथा मैले कपड़े धोती थीं। वह सब कुछ छुड़ाकर तुम्हें यहाँ आराम से रक्खा है। वक्त का उपयोग करना सीखो, नहीं तो वह तुम्हें रौंदकर चला जायगा। इतना समय तुम्हें मिलता है। क्या सब-का-सब सोने ही में बिता देती हो?" कहकर जूनिया ने फ़र्श पर पड़ा हुआ एक तिनका उठाकर बाहर फेंक दिया।

सानी आँखें मटकाकर कहने लगी—"हूँऽ दिन-भर सोती रहती हूँ, तो क्या तुम्हारे घर का धरना-ढकना, धोना-पकाना, छीलना-बीनना, कूटना-पीसना, लीपना-झाड़ना, सीना-बुनना, सब आकर फ़रिश्ते कर जाते हैं। घड़ी-दो घड़ी सो भी लेती हूँ, जेम्स मानता नहीं, दिन-भर शरारत करता है। एक आदमी तो उसकी देख-भाल के लिये ही चाहिए। परसों जमादार के पानी पीने का घड़ा तोड़ आया, उसके लड़के के बाल नोच आया। कल हेडमास्टर साहब के गमलों से फूल के पेड़ उखाड़ लाया।"

जूनिया ने डाटते हुए कहा—"क्यों रे जेम्स!"

जेम्स मकान के बाहर खेल रहा था। एक छपे हुए काग़ज़ के

टुकड़े की ओर देख-देखकर 'ए-सी-डी-बी' दुहरा रहा था। कदाचित् उसने कुछ सुना नहीं।

जूनिया ने फिर पुकारा—"जेम्स !"

"पापा ! इस वक्त बोलो मत, मैं किताब याद कर रहा हूँ। ए-सी-डी-बी यस्ट, बस्ट माने दौड़ो।"

बेटे की विद्या की ओर ऐसी अनुरक्ति देखकर जूनिया का सारा क्रोध हवा हो गया। उसने कहा—"जेम्स, यहाँ आओ बेटा, आओ, यहाँ मेज़ पर बैठकर किताब याद करो। जहाँ नहीं आवेगा, मैं बताऊँगा। लो, यह तुम्हारे हिस्से का बिस्कुट है।"

लालच से खिंचा हुआ जेम्स काग़ज़ पढ़ते-पढ़ते कमरे के अंदर आया। बिस्कुट की याद आते ही काग़ज़ फेंककर कहने लगा—"ऍऽऽ बिस्कुट !"

सानी ने उसके कान पकड़कर कहा—"हाँ, बिस्कुट दो इसे, चाँटे न दो इसके। क्यों रे, तूने जमादार का घड़ा क्यों तोड़ा और साहब के पेड़ क्यों उखाड़ लाया ?"

जेम्स ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा। पिता ने उसे बिस्कुट देकर चुप कर लिया।

सानी नाराज़ होकर कहने लगी—"इस तरह बुराई को आश्रय देकर आप उसकी आदत ख़राब कर रहे हैं। बुरे मार्ग की तरफ़ उसका हौसला बढ़ा रहे हैं। आज वह जमादार का घड़ा तोड़ आया है, कल गिरजे की घड़ी पर पत्थर चलावेगा। कान गरम करने के बदले मुँह मीठा कर देने ही से तो औलाद ख़राब होती है।"

जूनिया के बात गड़ गई। उसने खींचकर एक चाँटा जेम्स के लगाया, और कहा—"तूने जमादार का घड़ा क्यों तोड़ा ?"

बालक गाल भरकर खस्ते, मीठे और ख़ुशबूदार बिस्कुट का

जूनिया —

जेम्स ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा।

गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस, लखनऊ

मज़ा ले रहा था कि करारी चपत पड़ी ! रोते हुए, मुँह खोल बिस्कुट ज़मीन पर गिराकर, बोला—"मैंने कहाँ उसका घड़ा तोड़ा !"

सानी कहने लगी—"तो क्या जमादारिन झूठ ही आकर कह गई ?"

जूनिया ने उसके दूसरे गाल पर चपत जमाकर कहा—"ले, यह झूठ के लिये है। क़सूर भी करता है, और झूठ भी बोलता है।"

जेम्स बड़ी ज़ोर से रो उठा।

जूनिया ने उसका हाथ पकड़कर कहा—"चुप, चुप ! अगर रोया, तो फिर तीसरी चपत तैयार है। बोल, हेडमास्टर साहब के फूलों के पेड़ किसने उखाड़े ?"

जेम्स कोई उत्तर न देकर रोता ही रहा।

जूनिया ने कहा—"जवाब नहीं देता, रोना बंद नहीं करता।"

सानी बालक की ओर बढ़ने लगी, और ज्यों ही जूनिया बालक के एक चपत और लगाने को था कि उसने उसका हाथ खींच अपनी गोद में ले लिया, एवं उसे पुचकारने लगी।

जेम्स सिसक-सिसककर रोने लगा। उसके दोनो गाल लाल हो गए थे। सानी उसे लेकर चारपाई पर चली गई। कहने लगी—"ऐसे भी कोई बच्चों को पीटता है। ठौर-कुठौर लग जाय, तो क्या हो ?"

"हाँऽऽ, जब उस पर प्यार से हुकूमत करने लगा, तो तुम बोलीं, पीटो। जब पीटा, तो कहती हो, मेरे बच्चे को मार दिया। तेरी माया अपार है ईव ! कोई नहीं समझ सकता। द्वंद्वों के प्रभाव से मुक्त होकर ऐडम स्वर्ग के कानन में विचर रहा था, तूने ही उसे भले-बुरे की पहचान बताकर उसके मन में भेद डाल दिया।"

सानी बच्चे को सुलाने लगी। जूनिया भी कुर्सी पर बैठा-बैठा पादरी साहब की दी हुई ग्रामर के पन्नों पर ऊँघने लगा, फिर सो गया।

बच्चा सो गया। चाय का वक़्त हो गया था। सानी ने चाय तैयार की, और एक प्याले में भरकर जूनिया के सामने मेज़ पर रक्खी। उस समय जूनिया की नाक बज रही थी।

सानी ने कहा—"अजी, शाम हो गई। चाय पी लीजिए, नहीं तो ठंडी हो जायगी।"

दोनो ने चाय पी।

कुछ नींद से क्रोध उतर गया था, कुछ चाय ने मिटा डाला।

जूनिया ने प्रेम-मधुर स्वर से कहा—"सानी! तुम सचमुच मेरा कहना न मानोगी?"

"आपका कहना कब नहीं माना स्वामी! आप ही के कहने पर तो गाँव छोड़ दिया, चौमुखिया तज दिया, यहाँ तक कि अपने धर्म को भी तिलांजलि दे दी।"

"तो एक बात और मान लो।"

सानी समझ गई। कहने लगी—'लेकिन अँगरेज़ी मेरी ज़बान पर ही नहीं चढ़ती। मुझे बड़ी उलझन और अड़चन मालूम देती है।"

"मैं कब कहता हूँ, अँगरेज़ी ही पढ़ो। अरे, कुछ पढ़ो, अँगरेज़ी न सही, हिंदी ही सही। मैं तुम्हारे लिये जो हिंदी की किताब और कापी खरीद लाया था, वे रक्खी हैं, या जेम्स ने फाड़कर फेंक दीं?"

सानी ने दोनो चीज़ें संदूक़ से निकालीं।

"ज्यादा नहीं, सिर्फ़ एक सबक़ रोज़। वही पढ़ो, और उसी को लिखो। स्वीकार है न?"

"है।"

"कल से रोज़ स्कूल से आकर मैं तुम्हारा पाठ सुनूँगा। परभू चाचा बुख़ार से पीड़ित हैं, जाकर उनको देखता हूँ।" कहकर जूनिया चला गया।

इंस्पेक्टर की रिपोर्ट आ गई थी, पर अभी पादरी साहब के ही पास थी, स्कूल में नहीं आई थी।

पीटरलाल के यहाँ जाकर जूनिया ने देखा, वह बुख़ार में पड़े थे। मिशन के अस्पताल से आई हुई एक मिक्श्चर की शीशी उनके सिरहाने रक्खी थी।

"परभू चाचा! कब से पड़े हो, कुछ मालूम भी नहीं हुआ।"

"थक चला, बुड्ढा हो गया। अब कितने दिन जिऊँगा। ज़रा-सी मिहनत करता हूँ, तो सिर दुखने लगता है। ज़रा-सी हवा लगती है, तो बुख़ार चढ़ आता है। तीन दिन से पड़ा हूँ।"

"मेरी सेवा की ज़रूरत हो, तो मैं हाज़िर हूँ।"

"नहीं बेटा, यहाँ पड़ोस में मदद देनेवाले हैं। तुम तो अच्छे हो न? बेटा मजे में है न?"

"आपका आशीर्वाद है।"

"पादरी साहब से मिले थे?"

"हाँ, एक ग्रामर की किताब दी थी। कहते थे, पहले इसे याद कर लो, फिर तरक़्क़ी की बातचीत करना।"

"किताब याद की?"

"हाँ, कुछ याद कर ली। अब कल फिर उनसे मिलने जाने का विचार कर रहा हूँ।"

जूनिया कुछ देर उनके यहाँ बैठा, और बिदा होते वक़्त उनके बाक़ी रुपए ज़बरदस्ती उन्हें दे आया।

दूसरे दिन जूनिया सुबह उठकर, बग़ल में ग्रामर और हाथ में लाठी ले पादरी साहब के बँगले की ओर चला।

पादरी साहब नगर-भर में अपने साधु स्वभाव और परोपकार-परिपूर्ण वृत्ति के लिये प्रसिद्ध थे। पर कभी-कभी, शायद साल-भर में एक-आध बार, उन्हें बड़ा क्रोध चढ़ आता। उस क्रोध में वह कभी-कभी बड़ी भूलें कर जाते थे। जब क्रोध शांत हो जाता, और प्रतिक्रिया शुरू होती, तो फिर उन्हें उतना ही अधिक पश्चात्ताप भी होता। हर तरह से वह की हुई क्षति को पूर्ण करने की चेष्टा करते। क्रोध के पश्चात् कभी-कभी वह दिन-दिन-भर आँसू बहाते और प्रार्थना करते देखे गए।

उस सुबह वह क्रुद्ध होकर बैठे थे। न-जाने किस तरह उनकी बाइबिल की किताब के ऊपर रोशनाई बिखर गई थी।

उस असमय में जूनिया उनके पास आ पहुँचा।

पादरी साहब ने द्वार पर ही उससे कहा—"क्या है ?"

जूनिया ने पादरी साहब के स्वभाव में ऐसी कठोरता पहले कभी नहीं पाई थी। कहने लगा—"ग्रामर याद कर लाया हूँ।"

"क्या खाक ग्रामर याद कर लाए हो !"

"पूछ लीजिए।"

"क्या पूछ लूँ ? यह देखो, इंस्पेक्टर की रिपोर्ट, उन्होंने तुम्हारे लिये क्या लिखा है !"

"क्या लिखा है ?"

पादरी साहब ने रिपोर्ट निकालकर जूनिया के संबंध का अंश पढ़ा, और फिर उसका अनुवाद किया—"दूसरे दरजे में टीचर हिंदी पढ़ा रहा था। उसके पढ़ाने का उद्देश्य सिर्फ़ रटा देना था। लड़के समझते हैं या नहीं ; उसे इसकी कुछ भी चिंता न थी। टीचर के स्वभाव में कुछ सिड़ीपन भी प्रतीत होता था।"

जूनिया सुनकर घबराया, और मन में कहने लगा—"भूल की, जो आज यहाँ चला आया।"

पादरी साहब कहने लगे—"सुना ?"

"जी, लेकिन इंस्पेक्टर झूठा है।"

"चुप रहो, ऑफ़िसर के खिलाफ़ मत बको।"

"मैं मिहनत से पढ़ाता हूँ।"

"मिहनत से पढ़ाने का यह कदापि अर्थ नहीं कि तुम अच्छा भी पढ़ाते हो।"

"लेकिन—"

"चुप रहो।"

"मैं—"

"मैं कुछ भी न सुनूँगा।" कहकर साहब आवेश में कमरा छोड़कर चले गए।

जूनिया भी लाठी और किताब सँभाल चला आया।

चौथा परिच्छेद

पीटरलाल की मृत्यु

बारह बार अंधकार के शत्रु भगवान् भास्कर बारहो राशियों पर घूम गए। परंतु जूनिया को ऐसा ज्ञात हुआ, मानो वह केवल बारह नींदों से जागकर उठा हो।

महाकाल न-जाने कहाँ से आकर कितनी दूर कहाँ चला गया, परंतु जूनिया जहाँ था, वहीं रहा। वह आकांक्षा के साथ बूढ़ा हो चला था, पर उसकी ग्रामर की किताब बंद होकर उसकी आँखों की ओट में चली नहीं गई थी।

जूनिया फिर पादरी साहब के यहाँ अपनी तरक्क़ी की प्रार्थना करने नहीं गया। पादरी साहब जब उसे मिलते, तब उससे उसकी आत्मिक उन्नति के बारे में ज़रूर बातें करते। वेतन और दरजे की उन्नति का उन्होंने नाम न लिया, जूनिया ने भी दीनता छोड़ दी।

इंस्पेक्टर साहब ने अपने प्रत्येक निरीक्षण में जब जूनिया का उल्लेख किया, तब बुरे विशेषणों के साथ। जूनिया उनके लिये सिर्फ़ बाहरी आदर प्रकट करता था। वह इस बात को खूब अच्छी तरह समझ गया था कि अकेले इंस्पेक्टर साहब उसे उसकी नौकरी से निकलवा नहीं सकते। वह इस बात को भी जानता था कि पादरी साहब उसे अँगरेज़ी की मास्टरी न दें, पर वह उसे नौकरी से कभी निकालेंगे नहीं।

पीटरलाल ने एक दिन जूनिया से कहा था—"जाने भी दो उस मास्टरी को। उसमें रक्खा क्या है। दिन काटने हैं। इंस्पेक्टर

साहब की बुरी रिपोर्टों की उपेक्षा कर भी मिशन ने तुम्हें तुम्हारी जगह पर क़ायम रक्खा है, यही क्या कम बात है। तुम्हारे वेतन की वृद्धि भी जितनी उनसे हुई, उन्होंने की।"

जूनिया का वेतन समय-समय पर कुछ बढ़ा दिया जाता था। आजकल उसे पच्चीस रुपया प्रतिमास मिलता है। केवल पैसे ही पर जूनिया इतना नहीं टूटता था। वह अँगरेज़ी का मास्टर बनकर दरजों में प्रवेश करना चाहता था। वेतन चाहे उसे वही मिलता, कोई परवा की बात न थी।

इन बारह वर्षों में सानी हिंदी लिखने और पढ़ने लगी थी। पिछले दिनों से वह रोज़ रात को बाइबिल का एक अध्याय पढ़ती है। उसके फिर और कोई संतान नहीं हुई।

डेज़ी उस पर जो कुछ थोड़ा-बहुत स्नेह रखती थी, वह अवधि के बहुत बीत जाने पर भी पुराना नहीं पड़ा। डेज़ी के यहाँ जब कोई नई चीज़ आती, वह जेम्स के लिये ज़रूर ही रख छोड़ती थी।

जेम्स उसी स्कूल में छठे दरजे में पढ़ता है। उसका मन किताबों में कम और खेल में अधिक लगता है। वह जूनिया से अधिक अँगरेज़ी जान गया है। जूनिया कभी-कभी उसे अँगरेज़ी पढ़ते देखकर बहुत ख़ुश होता है, और कहता है—"कदाचित् पिता की इच्छाएँ बेटे के जन्म में परिपूर्ण होंगी।"

पादरी साहब की दी हुई ग्रामर और अँगरेज़ी की तीन किताबें जूनिया के पास अब भी बड़े यत्न से रक्खी हुई हैं। पर अब वह उन्हें अपने साथ जहाँ भी जाता है, वहाँ नहीं ले जाता। वे उसके कमरे में कभी संदूक़ में और कभी तकिए के नीचे रक्खी रहती हैं। कभी-कभी एकांत पाकर जूनिया उन्हें फिर पढ़ने की चेष्टा करता है,

और सानी उसकी कनपटियों पर के श्वेत बालों को देखकर गहरे विचारों में लीन हो जाती है।

पीटरलाल बूढ़े हो गए थे। अचानक बीमार पड़ गए। धीरे-धीरे बीमारी बढ़ने लगी। पाँच-छ दिन के ही सतत ज्वर ने उन्हें सुखाकर उनकी काया पलट दी।

जूनिया भी उनके असुख के समाचार सुनकर उनके पास जा पहुँचा। परभू चाचा ज्वर में प्रायः अचेत पड़े थे।

जूनिया उनके निकट बैठ गया, और उनके मस्तक पर हाथ रखकर कहने लगा—"परभू चाचा!"

पीटरलाल दुःख से कराहकर चुप हो गए।

जूनिया ने फिर कहा—"परभू चाचा! परभू चाचा! मैं हूँ जूनिया। कैसी तबियत है?"

पीटरलाल ने बड़े कष्ट से कहा—"कैसी तबियत बताऊँ बेटा, पर, ऐसा जान पड़ता है, कदाचित् अब यह बूढ़ा मर जायगा। ओफ़्, बड़ा कष्ट है!"

जूनिया ने चिंताकुल होकर कहा—"नहीं चाचा! ऐसा न कहिए। अभी आप कई वर्षों तक हमारे बीच में रहेंगे। अभी आपको अनेक दुःखों से सताए हुए लोगों की झोपड़ियों में मसीह का संदेश पहुँचाना है।"

"मेरी शक्ति में जो कुछ था, मैंने किया, पर अब नहीं, अब कुछ नहीं हो सकता। केवल मृत्यु की बाट जोह रहा हूँ। हे भगवान्, शीघ्र उठा ले।"

जूनिया गंभीर चिंता में पड़ा-पड़ा विचार करने लगा। कुछ देर में बोला—"दवा से कुछ फ़ायदा हुआ?"

"कुछ फ़ायदा नहीं। प्यास, बड़ी प्यास है। बेटा, एक गिलास भरकर घड़े से ठंडा पानी ले आ।"

जूनिया पानी लेने को उठने लगा।

एक परिचारक पास ही खड़ा था, उसने जूनिया की ओर इशारा कर कहा—"नहीं।"

उसने जूनिया को एक तरफ़ ले जाकर कहा—"डॉक्टर साहब ठंडा पानी देने की सख्त मुमानियत कर गए हैं।"

"ज़रा भी नहीं?"

"एक बूँद भी नहीं।"

जूनिया खड़ा-खड़ा सोचने लगा।

पीटरलाल बोला—"जूनिया! तुम भी नहीं लाए पानी! क्या तुम्हें भी इन लोगों ने सिखा दिया। ये पानी बिना तड़पा-तड़पाकर मुझे मार डालना चाहते हैं।"

परिचारक कहने लगा—"आज सुबह से इन्होंने दवा भी नहीं पी।"

"क्या कहते हैं?"

"कहते हैं, नहीं पिऊँगा।"

जूनिया को एक बात सूझी। उसने एक काँच के गिलास में दवा की एक खूराक उँडेली, और पीटरलाल के निकट पहुँचा।

पीटरलाल ने फिर कहा—"पानी!"

जूनिया बोला—"चाचाजी!"

पीटरलाल ने गिलास देखकर दर्द-भरी आवाज़ में कहा—"तू लाया पानी। मैं समझ ही रहा था, जूनिया मेरे निकट होता, तो मुझे पानी देता। तू बड़ा नेक है, तू दूसरे के कष्ट का अनुभव करता है। मैं मरने को तैयार हूँ, लेकिन पानी बिना तड़प-तड़पकर मरना नहीं चाहता।"

जूनिया उस गिलास को लेकर घबराने लगा। पीटरलाल ने बड़े कष्ट से बढ़कर, जूनिया की बाँह पकड़ गिलास अपने निकट किया, और कहने लगे—"परंतु यह बहुत थोड़ा है जूनिया, मेरे सिर पर

हाथ रखकर देख। मेरे सारे शरीर के अंदर ज्वालामुखी धधक रही है। उसे बुझाने के लिये बड़ों पानी चाहिए।"

जूनिया ने सहारा देकर गिलास पीटरलाल के मुँह में खाली कर दिया।

दवा कड़ई थी। पीटरलाल ने मुँह बनाकर बाक़ी थूक दिया और निराश स्वर में कहने लगा—"जूनिया!"

"जी, चाचाजी!"

"तू भी बाग़ियों में जा मिला। इन सबने मुझे बिना जल के मार डालने का षड्यंत्र रचा है। तूने भी मुझे पानी के धोखे में फिर वही दवा पिला दी।"

"चाचाजी, वह दवा न थी, पानी ही था।"

"जूनिया, तू भी बूढ़ा हो चला है, तेरे भी बाल सफ़ेद हो गए हैं, और एक दिन तू भी इसी तरह मर जायगा, सत्य ही हमारा साथी है, इसलिये सच बोल।"

जूनिया फिर झूठ बोला—"चाचाजी, ज्वर के कारण आपकी जीभ का स्वाद बिगड़ गया, आपको हर चीज़ कड़ई मालूम देने लगी है।"

पीटरलाल ने रुष्ट होकर जूनिया की ओर बड़े कष्ट से पीठ फेर ली, और फिर कुछ देर तक चुप रहे।

"हालत बड़ी गंभीर है।"

"हाँ, आज सुबह से जब से बोलना शुरू किया है, तो बोलते ही जा रहे हैं।"

"डॉक्टर साहब आए थे?"

"हाँ, अभी शाम को आए थे।"

"तुमने कहा था कि दवा नहीं पी।"

"हाँ। कहते थे, कोई हर्ज नहीं। रात के लिये दूसरी दवा भेजने को कह गए हैं।"

जूनिया चुपचाप पीटरलाल के पंखा झलने लगा।

अचानक पीटरलाल बोले—"यह कौन ठक-ठक कर रहा है!"

जूनिया ने कहा—"कोई नहीं, चाचाजी!"

"अरे है, ज़रूर है। लेकिन तू शैतान के दल में जा मिला है। इसीलिये साँच को ढक देना चाहता है। वह सुन, वह कितनी ज़ोर से मेरे सिरहाने हथौड़ा चला रहा है। अरे, इसे निकाल बाहर करो, नहीं तो यह मेरा सिर फोड़ डालेगा।"

जूनिया परिचारक की ओर पहेली-भरी निगाह से देखने लगा।

परिचारक कहने लगा—"यह कदाचित् प्रलाप में आकर बक रहे हैं, कल रात भी एक वक़्त ऐसा ही चिल्लाने लगे थे।"

अचानक जूनिया की निगाह मेज़ पर रक्खी हुई घड़ी पर गई। उसने परिचारक से उसे उठाकर दूसरे कमरे में रख देने को कहा।

जूनिया ने पूछा—"चाचाजी, अब तो ठक-ठक नहीं सुनाई देती न!"

पीटरलाल ने कुछ भी उत्तर नहीं दिया।

अँधेरा हो गया था। नौकर लालटेन जला, उसकी बत्ती कम कर द्वार की ओट में रख गया।

जूनिया ने नौकर को बुलाकर कहा—"मेरा घर देखा है न!"

"जी।"

"वहाँ जाकर मेरी स्त्री से कहो कि परभू चाचा की हालत बहुत ख़राब है। मैं आज यहीं रहूँगा।"

नौकर जाने लगा।

जूनिया ने उसे रोककर फिर कहा—"सुनो, मेरा खाना भी यहीं ले आना।"

नौकर चला गया। डॉक्टर के यहाँ से दवा आई, परंतु पीटरलाल ने किसी तरह नहीं पी।

रात-भर पीटरलाल की दशा बहुत ख़राब रही। जब बकने लगते, तो बकते ही रहते। परिचारक बीच-बीच में कई बार सो भी गया था, पर जूनिया की पलकें एक क्षण को भी नहीं लगीं।

बुख़ार ने एक क्षण के लिये भी पीटरलाल को नहीं छोड़ा। सुबह होते ही जूनिया ने पादरी साहब के पास संदेश भेजा—"पीटरलाल की हालत बहुत ख़राब है। अचेत पड़े हैं। किसी प्रश्न का उत्तर नहीं देते। दवा जो भी ज़बरदस्ती पिलाई जाती है, सब बाहर निकल आती है। इनके माता-पिता आदि जो कुछ हैं, आप ही हैं। आकर कुछ प्रबंध कीजिए।"

पादरी साहब बड़े डॉक्टर और हेडमास्टर साहब को लेकर आ पहुँचे। आते ही जूनिया से पूछा—"कैसी हालत है?"

"वैसी ही।"

डॉक्टर साहब ने बीमार की परीक्षा कर कहा—"टाइफ़ाइड है। नाड़ी की चाल चिंता-जनक है। वैसे और कोई डर की बात नहीं। मैं नुसख़ा लिख देता हूँ। अस्पताल से दवा मँगाकर दे दी जायगी।"

जूनिया ने पूछा—"पानी माँगें, तो दें?"

"हाँ, उबालकर और छानकर, पर थोड़ा-सा।"

पादरी साहब ने जूनिया का रात-भर जगा हुआ मुख देखकर कहा—"तुम रात में यहीं थे?"

"जी।"

"सोए नहीं?"

जूनिया निरुत्तर रहा। जूनिया और परिचारक को छोड़कर सब लोग चले गए।

पादरी साहब मार्ग में जाते-जाते सोचने लगे—जूनिया अच्छा आदमी है। उसमें पर-दुःखकातरता, धर्म-भीरुता और सरलता भरी हुई है। क्या ये सद्गुण उसे मनुष्य नहीं बना सकते? निश्चय ही ग्रामर की कसौटी पर वह खरा नहीं उतरता, तो क्या किसी भाषा के विशुद्ध ज्ञान पर ही मनुष्यता तोलनी उचित है?

जूनिया ने उस दिन स्कूल में छुट्टी का प्रार्थना-पत्र भेज दिया, और दिन-भर पीटरलाल की सेवा-सुश्रूषा करता रहा। डॉक्टर तीन-चार बार आकर, रोगी की परीक्षा कर चले गए।

रोगी समस्त दिन अचेत पड़ा रहा। उसने फिर पानी भी नहीं माँगा। बुखार बढ़ता ही गया, कम न हुआ। रात में पीटरलाल की हालत बहुत खराब हो गई, और प्रभात में, जब पूर्व में सूर्य भगवान् उदित हो रहे थे, पीटरलाल ने अपने प्राण छोड़ दिए!

जूनिया ने शोक-भरे हृदय से कहा—"हा भगवान्! हमें तुमने कैसी मिट्टी से बनाया है। उसका कैसा शोक-भरा अंत है!"

सब लोगों में पीटरलाल की मृत्यु का समाचार फैल गया, शाम को पादरी साहब, हेडमास्टर साहब आदि अनेक लोग शव को फूलों से सजाकर क़ब्रिस्तान की ओर चले।

पीटरलाल के मरने पर उनके सिरहाने एक पत्र मिला। वह पीटरलाल के अक्षरों से अंकित था। उसमें लिखा था—"मेरे सेविंग बैंक में तीन सौ रुपए हैं। वे मेरे मरने के बाद मेरी स्त्री को मिलें। मैंने गिरजे से विवाह किया था, कदाचित् इस बात को सब लोग जानते हैं। उसके सिवा मेरी जो कुछ और संपत्ति है, वह मिशन के अनाथालय को दे दी जाय।"

पूरी रस्मों के साथ पीटरलाल दफ़नाए गए। सब लोग लौट आए।

मार्ग में पादरी साहब ने जूनिया से कहा—"श्रीयुत जॉन, मैं

विचार कर रहा हूँ, पीटरलाल की मृत्यु से जो उपदेशक का स्थान रिक्त हुआ है, उस पर अगर तुम्हें नियुक्त किया जाय, तो क्या तुम उसे पसंद करोगे?"

जूनिया—"मैं विचारकर उत्तर दूँगा।"

पाँचवाँ परिच्छेद

प्रचारक

"हाँ, तो तू क्या कहती है सानी !"

"मैं क्या कहूँ ?" कहकर सानी विचार-मग्न हुई।

"मैं कहता हूँ, बुरा क्या है ? नए-नए जंगलों, पर्वतों, ग्रामों और मार्गों में प्रभु के राज्य का सुसमाचार सुनाते फिरेंगे। जिन ऊँचाइयों में रेल और तार नहीं पहुँचे हैं, वहाँ मनुष्य के पुत्र की महिमा फैलावेंगे, और दुःखों के भार से दबे हुए लोगों से कहेंगे, उठो, उसकी जय पुकारो, वह तुम्हें मुक्ति देने आ पहुँचा।"

जुनिया की इस भावुकता का सानी पर कोई प्रभाव प्रकट नहीं हुआ। उसने पूछा—"परभू चाचा को क्या वेतन मिलता था ?"

"परभू चाचा की मत कहो। वह मसीह के सच्चे चेले थे, जब प्रचार के लिये चलते थे, तो अपने साथ न झोला रखते थे, न बटुआ। पूरे फक्कड़ थे, लोग उन्हें पहचान नहीं सके, ज़रूरत भी उन्हें कुछ न थी। बंधन भी उनके कुछ न थे, न माता-पिता, न स्त्री-पुत्र, किसी की चिंता ही नहीं। उनका वेतन क्या, चाहते, तो पचास रुपया मासिक ले सकते थे। लेकिन अपनी गुज़र-भर के लिये महीने में सिर्फ़ पच्चीस ही रुपए लेते थे।"

"तुम्हें फिर उनकी नौकरी में जाने से फ़ायदा क्या हुआ ?"

"फ़ायदा, जो बैंकों में जमा है, पगली ! तू उसे कहेगी, या जो स्वर्ग में जमा होता है, वह है ?"

"स्वर्ग और नरक कौन देखकर आया है ? मरने के बाद क्या हो,

किसे ख़बर है स्वामी ! जो अपनी मुट्ठी के अंदर है, फ़ायदा वह है।"

"देखता हूँ, तुझे पढ़ाने-लिखाने की सारी मेहनत वेकार गई ! तेरा मन दुनिया में ऐसा चिपका हुआ है, जैसे गुड़ पर मक्खी।"

"मैं महीन खाने-पहनने की बात नहीं कहती। दुनिया में जनम लिया है। भूख भी लगती है, और जाड़ा भी मालूम देता है, कुछ तो चाहिए, और वह कुछ पैसा है, तो स्वर्ग भी है, नहीं तो कुछ भी नहीं।"

"प्रभु का वचन तूने क्या नहीं पढ़ा ? वह कहता है, मुझे अपने खाने-पहनने की क्या ऐसी चिंता है। अरी ! हवा की चिड़िया और पानी की मछली को देख। उनके न खेती है और न कहीं नौकरी। क्या तू समझती है, उनका पेट नहीं भरता। उस पिता की अपार महिमा है। वह भूखा जगाता है, लेकिन भूखा सुलाता नहीं।"

"तो मुझे इनकार कब है ?"

"अच्छी बात है, मैं पादरी साहब से कह देता हूँ कि राज़ी हूँ। वह बहुत दिनों बाद मुझ पर मिहरबान हुए हैं ! मेरी तरक़्क़ी के लिये ही ऐसा कह रहे हैं। उनके पास आदमियों का अकाल नहीं। मुमकिन है, कुछ मेरी तनख़्वाह भी बढ़ा दें।"

"तनख़्वाह बढ़ जाय, तब तो ज़रूर कुछ बात है।"

"फिर वही हाय दुनिया, हाय मतलब, हाय पैसा, हाय रोटी !"

"मुझे ही क्या, सभी को यह हाय-हाय है। आप परभू चाचा को देखते हैं। वह थे अकेली दम। जैसा चाहा, वैसा निभ गया।"

"अच्छा, तुम्हीं जीतीं। ज़रा हेडमास्टर साहब के पास तक हो आता हूँ। देखें, वह क्या सलाह देते हैं।"

सानी शाम की रोटी-तरकारी में लगी। जूनिया हेडमास्टर साहब के बँगले की ओर चला। जेम्स खेलने गया था।

हेडमास्टर साहब बरामदे की आराम-कुर्सी पर बैठे अखबार पढ़ रहे थे। जूनिया को आता देखकर काग़ज़ रख दिया, और कुर्सी की ओर इशारा कर बोले—"आइए, श्रीयुत जॉन।"

जूनिया ने विनीत भाव से कुर्सी ग्रहण की।

हेडमास्टर साहब बोले—"आपने पादरी साहब को कोई उत्तर दिया?"

"अभी कुछ नहीं।"

"क्या विचार है?"

"आप जैसी आज्ञा दें।"

"इसमें आज्ञा देने की कोई बात नहीं। यह तो आपकी सहूलियत और रुचि पर निर्भर है।"

"तो आप जैसी राय दें। मैं प्रचार करने में कामयाब हो सकूँगा?"

"हो क्यों नहीं सकते? दृढ़ इच्छा, सच्ची लगन और अटूट मिहनत से जो कुछ भी किया जाय, ज़रूर सफल होता है। फिर आपको तो इतवार के गिरजे में व्याख्यान देने का अभ्यास है, और अच्छा अभ्यास है। इसके अतिरिक्त आप अनेक वर्षों से शिक्षक का काम कर रहे हैं। शिक्षक और प्रचारक, इन दोनो का काम प्रायः एक-सा ही है।"

"तो मैं अभी जाकर पादरी साहब को स्वीकृति दे आता हूँ।"

"कल सुबह जाकर कह देना या स्कूल में ही उनसे मिल लेना। मुझे तुम्हारी उन्नति का मैदान इधर ही नज़र आता है।"

"हाँ, स्कूल में एक वह ग्रामर और दूसरे इंस्पेक्टर साहब, ये दो बड़ी बाधाएँ मेरे मार्ग में हैं। ग्रामर को आगे याद करता हूँ, तो पीछे भूल जाता हूँ। पीछे याद करता हूँ, तो आगे ग़ायब हो

जाता है। इंस्पेक्टर साहब सब ओर से याद रहते हैं, पर हर साल नया रास्ता दिखा जाते हैं।"

"बाइबिल तो तुम्हें खूब याद है?"

"हाँ, उसके पढ़ने में जी लगता है। स्वर्गीय वस्तु है, और ग्रामर, यह तो इंसान की गढ़ी हुई चीज़ है। एक क़ायदा नहीं, एक क़ानून नहीं। यहाँ कुछ, तो वहाँ कुछ है।"

हेडमास्टर साहब हँसने लगे।

जूनिया बोला—"परभू चाचा बड़े सफल प्रचारक थे।"

"इसमें ज़रा भी संदेह नहीं। मरते दम तक बड़ी ख़ूबी से उन्होंने अपना कर्तव्य पूरा किया।"

"कैसी सच्ची लगन थी। सारा ज़िला छान रक्खा था। ऐसी कोई जगह ही नहीं छूटी थी, जहाँ उन्होंने प्रभु का सुसमाचार न सुनाया हो।"

"प्रचारक का काम बड़ा कठिन है।"

"उन्होंने हर कठिनता को अपने धीरज से आसान कर लिया था। उन्होंने भूख-प्यास को जीत लिया था। सुस्ती और थकावट को कभी पास नहीं फटकने दिया।"

"इसके सिवा और भी बड़ी-बड़ी बाधाएँ हैं। संसार हर नई चीज़ का विरोध करता है। फिर धर्म-संबंधी बातों में तो मनुष्य और भी संकीर्णता से काम लेता है। संसार के धार्मिक युद्धों में जो मनुष्यों का बलिदान हुआ है, वह इस बात का साक्षी है।"

"मसीह को ही लीजिए। उसने एक नवीन संदेश का प्रचार किया था, लोगों को सहन नहीं हुआ। उसे पकड़कर सूली पर लटका दिया।"

"प्रचारक का पथ काँटों से बिछा हुआ है, और प्रत्येक दिशा से उस पर गालियाँ बरसती हैं।"

"सच बात है।"

"यह सब कुछ सहन कर लेने की शक्ति प्रचारक में होनी चाहिए। उसे मानापमान का ध्यान ही छोड़ देना चाहिए।"

"परभू चाचा में ये सब बातें थीं। अँगरेज़ी नहीं जानते थे, पर इन सब बातों के पूरे पंडित थे।"

"अक्षर का ज्ञान और मनुष्यता, ये दो अलग-अलग चीज़ें हैं।"

जूनिया ने बहुत गंभीर होकर सिर हिलाया।

हेडमास्टर साहब ने कुछ धीमे स्वर में कहा—"सच बात तो यह है कि प्रत्येक धर्म के मूल-सूत्र समान हैं। प्रचारक को इस बात पर ध्यान रखना चाहिए। वह अपने धर्म की श्रेष्ठता साबित करे, पर दूसरे के धर्म को नीचा बनाकर नहीं।"

जूनिया की समझ में यह बात नहीं आई, पर उसने मुख पर यह भाव प्रकट नहीं किया।

हेडमास्टर साहब से बिदा लेकर जूनिया घर आया। खा-पीकर रानी बाइबिल पढ़ने लगी, और जूनिया उसे सुनते-सुनते सो गया।

रात को उसने सपना देखा, सारा ज़िला उसके पीछे लाठी, पत्थर और भाले लेकर दौड़ रहा है, और जूनिया नदी, पर्वत, जंगल और कब्रिस्तानों में छिपने के लिये जगह ढूँढ़ता फिर रहा है।

दूसरे दिन वह जाकर पादरी साहब की सेवा में उपस्थित हुआ। पादरी साहब ने अपनी सहज सुकोमल मुसकान से उसका स्वागत किया।

जूनिया ने कहा—"मैं तैयार हूँ।"

"अच्छी तरह विचार कर चुके?"

"हाँ।"

"मार्ग की कठिनाइयों का ध्यान कर लिया?"

"खूब अच्छी तरह।"

"बहुत अच्छा। इस महीने के सात दिन और शेष हैं, अगले महीने से आप प्रचारक नियुक्त हुए। अट्ठाईस रुपया महीना आपको वेतन मिलेगा। ठीक है न?"

"आपके न्याय में मुझे कभी भ्रम नहीं दिखाई दिया। जूनिया का रोम-रोम आपका ऋणी है।"

पादरी साहब कुछ विचारकर बोले—"एक बात और है।"

"जी?"

"आपकी पत्नी बाइबिल पढ़ती हैं?"

जूनिया ने ज़ोर देकर कहा—"जी हाँ। रोज़ पढ़ती हैं।"

"गाने की ओर भी रुचि है न?"

"जी हाँ, इतवार के गिरजे में जितने भी भजन गाए जाते हैं, वे सब उन्हें मय ताल-स्वर के याद हैं।"

"हमें एक प्रचारिका की भी ज़रूरत है। प्रभु-संदेश स्त्रियों के लिये भी उतना ही आवश्यक है। हमारे प्रचारकों की आवाज़ यहाँ की महिलाओं तक नहीं पहुँच सकती। इसलिये बड़े पादरी साहब ने प्रचारिका की नियुक्ति सोची है। आपकी पत्नी को भी वेतन मिलेगा। क्या उनसे प्रचार हो सकेगा?"

"मिहनत से सब कुछ हो सकता है। फिर जहाँ उन्हें कठिनाई पड़ेगी, मैं उन्हें सिखा-पढ़ा लूँगा।"

"अच्छी बात है, आरंभ में उन्हें दस रुपया प्रतिमास दिया जायगा। आपको प्रचार के लिये विशेषकर गाँवों में ही जाना पड़ेगा, और उनका मुख्य क्षेत्र नगर ही होगा।"

जूनिया पादरी साहब के पास से बिदा हो मार्ग में सोचने लगा—अट्ठाईस में दस जोड़ दिया—अड़तीस रुपया प्रतिमास! इतने में तो हम कुछ और अच्छा खा-पहनकर कुछ बचाते भी रहेंगे।

शैतान जूनिया के मन में प्रवेश कर उसे रंग-बिरंगे चित्र दिखाने लगा। वह अपने मानस-संसार में इतवार के गिरजे में जाती हुई सानी को देखने लगा। उसके रेशमी वस्त्र मोददायी रंगों में रँगे हुए थे। प्रकाश की किरणें उन पर ठहर नहीं रही थीं। वे प्रतिफलित होकर जूनिया की आँखों में चकाचौंध पैदा करने लगीं।

जूनिया घर पहुँचा। स्त्री ने पूछा—"मिले पादरी साहब ?"

"हाँ, मिले।"

"तय कर आए ?"

"हाँ, और तेरे लिये भी ठीक कर आया।"

"मेरे लिये क्या ठीक कर आए ?"

"नौकरी।"

"नौकरी !"

"हाँ, अरी सुन, मैं प्रचारक बनूँगा, और तू बनेगी प्रचारिका। मैं पुरुषों को हाँककर ईमान के बाड़े में ले आऊँगा, और तू स्त्रियों को ! मैं बाज़ारों और वनों में मुनादी करता फिरूँगा, और तू घरों और आँगनों में प्रचार करेगी।"

"ऊँहूँ, मुझसे कुछ नहीं हो सकता।" कहते हुए सानी ने कई बार दाहने-बाएँ सिर हिलाया।

"हो कैसे नहीं सकता। पादरी साहब कहते हैं, हो सकता है। तू खूब अच्छी तरह नई और पुरानी धर्म-पुस्तकें पढ़ सकती है। तुझे कई भजन याद हैं। परमेश्वर की दसो आज्ञाएँ, प्रार्थना, मसीह के बारहो शागिर्दों के नाम, सब तेरी ज़बान की नोक पर हैं। हिम्मत रक्खो प्रिये ! परमेश्वर मदद करेगा, सब हो जायगा।"

"नहीं।"

"अरी, तनख्वाह भी मिलेगी तुझे अलग।"

सानी खुशी छिपाकर बोली—"कितनी ?"

"शुरू में दस रुपया प्रतिमास, फिर बढ़ा दी जायगी।"

सानी मूक रहकर कुछ विचारने लगी।

जूनिया बोला—"क्यों, राज़ी हो न ? हो जायगा न ?"

"कैसे हो जायगा ? घर-गृहस्थी कौन करेगा ?"

"घर-गृहस्थी तू ही करेगी। दिन-भर थोड़े काम करना होगा। जो नौकर पानी लाता है, उसे एक रुपया महीना और दे देंगे, वही बर्तन भी धो देगा।"

"और चूल्हा कौन फूँकेगा ?"

"तू, और कौन। तेरे सिर पर का गोबर, मिट्टी, पत्थर का भार उतार दिया, और तुझसे अब खाना भी नहीं पकाया जाता। कल को तेरे मुँह में निवाला रखने के लिये भी एक नौकर की ज़रूरत होगी। अरी, दूर क्यों जाती है। हेडमास्टर साहब के यहाँ देखा। मुझसे आठ-दसगुना अधिक वेतन मिलता है। तीन-चार नौकर-चाकर हैं, पर खाना उनकी मेम साहबा ही पकाकर पति और बच्चों को खिलाती हैं।"

सानी डेज़ी का उदाहरण पाकर कुछ लज्जित हुई, बोली—"आपका वेतन ?"

"अट्ठाईस रुपया प्रतिमास।"

"मेरे काम का समय ?"

"दस से चार तक, अधिक-से-अधिक। प्रचारिका बनोगी न ?"

सानी के मूक अधरों पर मुसकान खेल गई, जूनिया उसमें सम्मति के लक्षण पा खिल उठा !

चतुर्थ खंड

भा

ष्य

च

क्र

पहला परिच्छेद
गाँव में प्रचार

महीने की आख़िरी तारीख़ निकट आई, और उसी के साथ स्कूल में जूनिया का अंतिम दिन। उस दिन जूनिया की भावुकता का ठिकाना न था।

उस दिन उसने किसी भी दरजे में पढ़ाई नहीं की, जहाँ गया, वहाँ पहले कुछ उपदेश दिए, फिर उस स्कूल की अपनी जीवन-कथा सुनाई, फिर अपनी बदली और बिदाई का वर्णन किया। अंत में लड़कों से कहा—"प्यारे लड़को, इस तरह भरी आँखें और भारी हृदय लेकर मैं अपने प्यारे स्कूल से बिदा होता हूँ। इसमें नौकरी करते हुए मेरे बाल पक गए। जिन लड़कों को मैंने यहाँ तालीम दी, उनमें से अनेक आज भारी-भारी पदों पर हैं। बड़े नेक लड़के, जहाँ मिलते हैं, बड़े अदबसे सलाम करते हैं। ग़रीब जूनिया, उनको क्या पड़ी है कि उसे सलाम करें, परंतु नहीं, भलाई, जिससे विद्या पढ़ी है, उसका आदर करना सिखाती है। जूनिया आप लोगों को कभी नहीं भूल सकता, कल से मैं मिशन का उपदेशक नियुक्त हुआ हूँ। पहले कुछ दिन तक मुझे नगर में ही प्रचार करना पड़ेगा, फिर दौरे पर जाऊँगा। पुराने थाने के पास जो चौराहा है, जहाँ पानी की टंकी भी है, वहाँ कल सुबह और शाम मेरा उपदेश होगा। सुबह तो आप लोग नहीं आ सकते, स्कूल ठहरा, शाम को ज़रूर आइ-एगा। मैं नहीं कहता, आप ईसाई हो जायँ, लेकिन सुनना चाहिए। हरएक धर्म में अच्छी बातें हैं। भजन भी होंगे, और उपदेश के अंत

में रंगीन तसवीरें भी बाँटी जायँगी। मुझे आशा है, आप लोग सब आवेंगे।"

उस दिन आखिरी घंटे में सब लड़के स्कूल के हॉल में जमा किए गए, तमाम मास्टर लोग भी वहाँ एकत्र हुए। पादरी साहब ने श्रीयुत जॉन के कर्म-क्षेत्र के बदलने की बात सुनाई। हेडमास्टर साहब ने जॉन के विगत चौदह वर्षों से स्कूल की स्तुत्य सेवा का उल्लेख किया, और सेकेंड मास्टर ने जूनिया को फूलों की माला पहनाई, तथा स्कूल की ओर से एक जेब-घड़ी भेंट में दी। उसके भीतरी ढक्कने में श्रीयुत जॉन और स्कूल का नाम एवं तारीख के अक्षर अंकित किए गए थे। जूनिया ने गद्गद होकर सबको धन्यवाद दिया। सभा विसर्जन हुई।

जूनिया पादरी साहब के साथ उनके बँगले पर गया, पति-पत्नी का वेतन निश्चित हो चुका था, काम के घंटों को तय करना बाक़ी था, वह भी हो गया।

अभी कुछ दिन जूनिया को नगर में ही प्रचार करने की आज्ञा मिली। सुबह आठ से दस तक और शाम को चार से छ तक, इसके अतिरिक्त उसे बाइबिल की किताबें बेचने का भी काम मिला। सानी के प्रचार का समय बारह बजे से चार बजे शाम तक निश्चित हुआ। किताबें उसे भी बेचनी पड़ेंगी।

दूसरे ही दिन से उनका कार्यारंभ था। जूनिया बेचने के लिये कुछ बाइबिल की किताबें, बाँटने के लिये कई रंगीन कार्ड और परचे तथा उपदेश को आकर्षक बनाने के उद्देश्य से कुछ विलायती छपी लीथो की ईसा-चरित्र-संबंधी, रंगीन, बड़ी-बड़ी तसवीरें लेकर घर को चलने लगा।

पादरी साहब ने उसे सफलता के आशीर्वाद के साथ दो डायरियाँ देते हुए कहा—"श्रीयुत जॉन, ये दो डायरियाँ लीजिए। एक आपके लिये है, और एक आपकी पत्नी के लिये। इनमें हर काम के दिन

आपको दिन-भर की कारगुज़ारी लिखनी होगी, और रोज़ शाम को हेडमास्टर साहब के दस्तखत लेने पड़ेंगे।"

तमाम चीज़ें सँभाल जूनिया घर आया, और एक-एक कर सानी को समझा-बुझा दीं।

दूसरे दिन सुबह उसने रंगीन कार्ड और परचे, विक्रयार्थ कुछ किताबें, एक अपने उपदेश के लिये पूरी बाइबिल और एक भजनों की पुस्तक एक झोले में रख उसे गले में लटकाया। लीथो के रंगीन चित्रों को लपेट बग़ल में दबा लिया। हाथ में वही पुरानी लाठी ली, और अपने मित्र ढोलकिया का इंतज़ार करने लगा।

ढोलकिया जूनिया से उम्र में बहुत छोटा था। अनाथालय में चपरासी का काम करता था। ढोलक बड़ी सुंदर बजाता था। उसका कुछ अच्छा-सा नाम था, पर जूनिया उसे प्यार से ढोलकिया ही कहता था। जूनिया ने ढोलकिया को सुबह-शाम अपने साथ उपदेश में ढोलक बजाने के लिये राज़ी कर लिया।

ढोलकिया भी सोचने लगा, नौकरी दस से तीन तक की है। खाली वक्त है, चलो दो-चार घंटे मनोरंजन रहेगा। अगर किसी दिन पादरी साहब सुनकर रीझ गए, तो ज़रूर तनख्वाह बढ़ जायगी। ज़रा सुबह उठकर खाना पका-खा लेने की तकलीफ़ होगी।

ढोलकिया के आने पर दोनो मित्रों ने जाकर पानी की टंकी के पास, ज़रा सड़क से हटकर, प्रचार करना शुरू किया। प्रचार कर लेने के बाद जूनिया अपने घर आया, और ढोलकिया अनाथालय को चला। बारह बजे सानी को सिखा-पढ़ाकर जूनिया ने प्रचार को भेजा।

शाम को चार बजे दोनो मित्र सुबह उसी जगह पर आकर खड़े हुए। लीथो की बारह तसवीरें, ऊपर से सब एक में सी हुई थीं। बीच में उन्हें लटकाने के लिये एक डोरा बँधा था। जूनिया ने उसे

लाठी में लटकाया, और लाठी पानी की टंकी के ऊपर रख उसके ऊपर एक पत्थर जमा दिया। चित्र टंकी की दीवार पर लटक गए, और दूर सड़क पर से लोगों को आकर्षित करने लगे।

जूनिया ने भजन की पुस्तक खोलकर ढोलकिया की ढोलक पर रक्खी, और बाइबिल अपने हाथ में ली। ढोलकिया ने दादरा पीटना आरंभ किया, दोनो गाने लगे—

"जो तू चित्त से प्रभू को भजेगा,
तेरा पाप सब दूर होगा।
जो तू चित्त से प्रभू को भजेगा,
तेरा पाप सब दूर होगा।"

ढोलक ने एक समा बाँध दिया। चारो दिशाओं से भीड़ खिच-कर उनके इर्द-गिर्द जमा हो गई। संध्या का समय था, कोई घूमने, कोई खेलने, कोई सौदा खरीदने आ-जा रहे थे। तसवीरें पाने की आशा में कुछ स्कूल के लड़के भी आ गए थे।

भीड़ के बीच में ढोलक बज रही थी। झुन्नू भी अपने पाँच-सात मित्रों की टोली के साथ फ़ुटबॉल फूँकता हुआ खेल के मैदान को जा रहा था। भीड़ देख उसके अंदर घुसा, और मालूम कर अपने अन्य सखाओं से कहने लगा—"अरे कोई नहीं, वही जूनिया डूम है, जो कल तक हमारे स्कूल में मास्टर था। वहाँ से इंसपेक्टर साहब ने निकलवा दिया है।"

हठात् झुन्नू उस भीड़ में अपने दो-तीन और फ़ुटबॉल के साथी देख उनसे कहने लगा—"चलो, खेलने नहीं चलोगे, वक्त हो गया।"

एक बोला—"नहीं, आज नहीं आवेंगे।"

"यहाँ क्या करोगे, जूनिया का व्याख्यान सुनोगे? ईसाई बनोगे?"

दूसरा बोला—"हम कुछ करें, तुम्हें मतलब?"

वे रंगीन कार्डों की आशा में वहाँ खड़े थे।

मुन्नू ने कहा—"नहीं चलोगे?"

"शोर मत करो, कैसा सुंदर गाना हो रहा है। कह तो दिया, नहीं चलेंगे।"

मुन्नू क्रुद्ध हो, अपनी टोली लेकर भीड़ से निकला।

फड़कती हुई ढोलक के साथ गाना हो रहा था—

"कौन भरोसा है काया का,
जगत है जाला माया का,
साँच नहीं है, सब छाया का।"

मुन्नू ने भीड़ से बाहर आकर अपने साथियों को कुछ सिखाया, सब मिलकर चिल्लाए—"जूनिया डूम है।"

अनेक लोग सुनकर हँसने लगे। टोली फ़ील्ड की ओर भाग गई। जूनिया ने भी वह आवाज़ सुनी। उसने ढोलकिया से ख़ूब ज़ोर-शोर से ढोलक बजाने को कहा, और ख़ुद भी गला खखारकर गाने लगा—

"ईश्वर का तुझे प्यार मिलेगा,
जो तू चित्त से प्रभू को भजेगा।"

जूनिया ने समझा, वह शब्द उसके गीत में डूब गया। इसके बाद उसने मित्र और शत्रु दोनो के लिये प्रभु से प्रार्थना की। फिर उसने बाइबिल में से कुछ पढ़ा, और उसके अनंतर ख़ूब विस्तार-पूर्वक उन चित्रों में दिखाता हुआ मसीह का जीवन-चरित्र सुनाने लगा।

किसी प्रकार फिर गीत गाने और तसवीर तथा परचों को मुफ़्त बाँटने की आशा में उसने भीड़ का अधिकांश अपने इर्द-गिर्द क़ायम रक्खा।

जीवन-चरित्र सुनाने के बाद साफ़ा टँकी के ऊपर रख, पृथ्वी

में घुटने टेक, आँखें मूँद प्रार्थना करने लगा—"हे परम पिता, तू जो आसमान पर है, तेरे नाम की महिमा सारे जगत् में फैले। तूने हमारे समान पापियों के बीच में अपने प्रिय पुत्र को दुःख झेलने के लिये भेजा। हमें बुद्धि दे कि हम उसे पहचानें, और उस पर विश्वास लावें—"

झुन्नू अपने साथियों के साथ फ़ुटबॉल उछालता हुआ मैदान से लौट रहा था। टंकी पर भीड़ देखकर उसने फिर अपने साथियों को संकेत किया।

साथियों के साथ वह भी चिल्लाया—"जूनिया डूम है।"

प्रार्थना करते-करते जूनिया ने इस बार स्पष्ट सुना, और प्रार्थना में शामिल कर कहने लगा—"हे पिता! जूनिया डूम है? वह किसी का जूठा नहीं खाता, किसी का उधार नहीं खाता। जूनिया डूम ही है, तो क्या वह तेरी संतान नहीं?—"

और भी निकट आवाज़ आई—"जूनिया डूम है।"

जूनिया उसी प्रकार प्रार्थना कर कहने लगा—"हे पिता! ये नहीं जानते कि हम क्या कह रहे हैं। इन्हें क्षमा कर, और हम सबके पापों को भी क्षमा कर कि हम तेरे प्रकाश में बढ़ चलें। मसीह के नाम पर। आमीन।"

"आमीन" के साथ ही झुन्नू ने निशाना लगाकर फ़ुटबॉल में एक किक लगाई। फ़ुटबॉल टंकी पर रक्खे हुए जूनिया के साफ़े को भूमि पर गिराकर दूसरी सड़क पर चला गया। झुन्नू अपने साथियों को लिए उधर दौड़ा।

जूनिया अब तक बहुत कुछ सहन कर रहा था। साफ़े को भूमि पर कीचड़ में गिरते देख उससे न रहा गया। वह स्वर्ग-मर्त्य सब कुछ भूल झुन्नू के पीछे दौड़ा। सारी भीड़ में खलबली मच गई। ढोलकिया जूनिया का साफ़ा उठाने लगा।

झुन्नू बड़ी तेज़ी से भाग रहा था। जूनिया ने उसे पकड़ने में अपने को अक्षम देख, पैर से एक जूता निकालकर उसके ऊपर ज़ोर से फेका। झुन्नू तुरंत ही पास की गली में घुस गया। उसके तमाम साथी भी छू हो गए थे।

जूता पास के मकान की एक खिड़की में जा लगा, और शीशे को तोड़ मकान के अंदर हो रहा। दर्शक ख़ूब ज़ोर से हँसने लगे।

जूनिया दूसरा जूता भी वहीं छोड़ नंगे पैर ढोलकिया के पास आया। भीड़ तितर-बितर हो गई थी। उसने साफ़ा ले, अपनी चीज़ें सँभाल ढोलकिया से भाग चलने को कहा।

ढोलकिया—"एक गाना और होगा, कहते थे न! भीड़ का क्या है, चार हाथ ढोलक पर पड़े नहीं कि जमा हो जायगी।"

जूनिया—"अरे चल भाग, एक आदमी की खिड़की का शीशा तोड़ आया हूँ। चल, सरक चलें, नहीं तो लेने के देने पड़ जायँगे।"

दोनो अपने-अपने घर भाग गए।

जूनिया ने देखा, सानी दिन-भर की डायरी भर चुकी थी। जूनिया ने उसे पढ़ा, इस प्रकार थी—"आज तीन घरों में जा कुल मिलाकर चालीस स्त्रियों को सुसमाचार सुनाया। उन्होंने बड़े ध्यान-पूर्वक प्रभु का वचन सुना। आते वक़्त मुझे चाय-मिठाई और पान देने लगीं, पर मैंने इनकार कर दिया कि मैंने प्रभु का नाम किसी लालच के लिये नहीं सुनाया। चार मत्ती-रचित सुसमाचारों की बिक्री हुई। दस्तख़त—सानी।"

जूनिया ने भी डायरी लिखी—"आज सुबह दो घंटे प्रचार किया। लोगों ने चाव से सुना, शाम के प्रचार में ख़ूब भीड़ हुई। मेरे मित्र ढोलकिया की वजह से उपदेश में जान पड़ गई थी, पर प्रचार के अंत में शैतान ने एक लड़के को बहका दिया। उसने मेरा साफ़ा कीचड़ में गिरा दिया, फिर क्या था, मेरे सिर पर भी वही शैतान

सवार हो गया। मैंने अपना जूता खींचकर मारा। लड़का बच गया, और जूता एक भलेमानस की खिड़की का शीशा तोड़ उसके घर में घुस गया, वह जरूर मेरी तलाश कर रहा होगा। मैं कल से नगर में प्रचार के लिये नहीं जाऊँगा। इन लोगों में प्रचार से कोई लाभ नहीं। उपदेशकों की ज़रूरत गाँवों में है। मैं गाँवों में ही जाऊँगा, अगर मुझे कल ही से गाँवों में नहीं भेजा जाता है, तो यही मेरा इस्तीफ़ा समझा जाय, मैं शहर में हरगिज़ नहीं जाऊँगा।"

शाम को दोनो डायरियाँ लेकर वह हेडमास्टर साहब के पास दस्तख़त कराने के लिये गया। उन्होंने उसे बहुत कुछ समझाया, पर वह नहीं माना।

दूसरे दिन पादरी साहब ने उसे गाँवों में प्रचार के लिये जाने की आज्ञा दे दी।

सानी अपने पुत्र के साथ वहीं रही। जूनिया गाँव-गाँव सुसमाचार फैलाता हुआ चला। वह महीने में चार-पाँच दिन के लिये राजधानी में आता। अपने प्रचार की रिपोर्ट देता, और अगले महीने का प्रोग्राम ले फिर चला जाता।

इस प्रकार कई महीने बीत गए।

दूसरा परिच्छेद

मेले को

कुछ दिन प्रचार करने के बाद सानी गर्ल्स-मिशन-स्कूल में अध्यापिका बना दी गई। अब वह सप्ताह में केवल तीन दिन प्रचार के लिये जाती थी। उसके सिर का मुख्य भार अब अध्यापन ही हो गया।

जूनिया फिर प्रकृति की शून्यता में आनंद खोजने लगा। उसे नगर की प्रत्येक वस्तु से अरुचि हो गई, किंतु सानी और जेम्स अपने नगर-निवास को किसी भाव पर भी बेचने को तैयार न थे।

चीड़ और देवदारु के सुवासित वनों में प्रभु का यश-सौरभ उड़ाता हुआ, नदी-नालों से निनादित घाटियों में उसके स्तुति-गीत गाता हुआ और कँटीले बाड़ों से घिरे हुए पहाड़ी खेतों में उसी के वचन का बीज बोता हुआ जूनिया चल निकला।

जहाँ अँधेरा होने लगता, वहाँ जूनिया अपना झोला और कंबल कंधे से उतार देता। आस-पास से कुछ खरीदकर खा-पी लेता। एक जगह एक रात से अधिक न ठहरता। उसने अपने साथ झोला ज़रूर रक्खा था, पर झोले में दूसरा कुरता और दूसरे वक़्त का भोजन नहीं रक्खा था।

वह लाठी सदैव उसके साथ रही। जूता उस दिन के बाद उसने फिर नहीं ख़रीदा। वह प्रकृति की कठिनाइयों को अपने अभ्यास से जीतने लगा। उसने मार्ग के काँटे और तुषार की तीक्ष्णता के ऊपर अपना नंगा पैर रक्खा। उसने तृण की शय्या

और तारिकाओं की चादर का स्वागत किया। उसने उपवास को अपना सखा बनाया, और हिम-शीतल-वायु के आगे अपनी छाती खोल दी।

उपदेशक अपने ग्राम और नगर में नहीं पूजा जाता। बुरी आवाज़ के भय से जूनिया ने राजधानी छोड़ दी थी, और आदर की आशा ने उसके पैर जन्मभूमि की ओर न खींचे। जूनिया कहता था—"मैं आदर का भूखा नहीं, किंतु घृणा से कुचला जाना भी नहीं चाहता।"

अपरिचितों के बीच में जूनिया ने नए प्रभु के जन्म की कथा सुनाई। उन्होंने जूनिया की बात में संदेह किया, पर उसे घृणा की दृष्टि से नहीं देखा, उसकी छाया से भागे नहीं।

वह पर्वत की उँचाइयों को लाँघ गया, उसने सघन वनों में मार्ग ढूँढ़ लिया, वह दुस्तर पहाड़ी नदियों के पार चला गया। वहाँ के पथ कदाचित् परभू चाचा के पदांकों से अंकित नहीं हुए थे, वहाँ के प्रांतर शायद उनकी वाणी से प्रतिध्वनित नहीं हुए थे। जूनिया ने हिम के ऊपर नाचते हुए अनंत नक्षत्रों को देखा। उसे उन सबके सूत्र हाथ में लिए हुए महाकाल का बोध हुआ, जगत् उसके पैरों की धूल में समाया हुआ था। जगत् का मान और अपमान दोनो एक दूसरे में समाकर अंतर-हीन हो गए थे। जूनिया समझने लगा, मृत्यु के चरणों पर पड़े हुए धनी और निर्धन, दोनो के मस्तकों पर बैठे हुए जरा और मरण के पक्षी अपनी चोंचें चला रहे थे।

जूनिया का मन जन्मभूमि की ओर आकृष्ट हुआ। उसे बाल-काल की क्रीड़ा-भूमि की स्मृति अपनी तरफ़ बुलाने लगी। उसे बंधु-बांधवों का प्रेम अपनी ओर खींचने लगा।

उसने उधर ही मुख कर अपने पैर बढ़ाए। वह चौमुखिया

में जा पहुँचा। वह सबसे पहले अपने बग़ीचे और अपनी झोपड़ी खोजने लगा। बग़ीचे में घास, काँटे और बिच्छू के वृक्ष उगकर बढ़ गए थे। झोपड़ी की स्थिति का भी पता न था, उसके कुछ पत्थर लोग अपनी दीवारों में चुनने के लिये उठा ले गए, कुछ मिट्टी में मिल गए, और उसी में गड़ गए।

जूनिया मन में कहने लगा—"तब ग्रीष्म के मेघ-हीन आकाश के नीचे सानी यहाँ हरियाली उत्पन्न कर देती थी, वह हरियाली तमाम वर्षा-भर बढ़ती थी, शरद् में उसमें अधिक फूल खिलते, अंत में शिशिर के तुषार तक वह स्थिति रहती थी। उस हरियाली के बीच में मेरी वह सुंदर कुटीर थी, जो सानी के स्नेह की ज्योति से आलोकित थी। वह हरियाली कहाँ गई? क्या वह भूमि का गुण न था, सततवाही झरने के कारण न थी? निश्चय ही उसे सानी के अविराम परिश्रम ने प्रकट किया था।"

वह विचार-मग्न होकर आगे बढ़ा। विगत पंद्रह वर्ष की अवधि में उसे समस्त चौमुखिया बिलकुल बदला हुआ दिखाई दिया। अनेक नए मकानों ने पुराने मकानों को ढक दिया था। लोग भी उसे नए-ही-नए दिखाई दिए।

वह सीधा गुसाईंजी की दूकान की ओर चला। दूकान में घनी मूछों से युक्त एक युवक बैठा हुआ था। जूनिया धीर-संकुचित गति से दूकान के बरामदे में पहुँचा।

युवक ने उसे कुछ देर देखा, और पहचानते ही ज़ोर से कहने लगा—"ओ हो, जूनिया मास्टर हैं। इधर कभी मुड़कर न देखा। ख़ूब आनंद में हो?"

आवाज़ पहचानकर जूनिया ने कहा—"सलाम छोटे गुसाईंजी, मेरे मास्टर, मेरे उस्ताद हैं। बूढ़ा हो गया! बालों में सफ़ेदी और आँखों में अँधेरा बढ़ चला।"

जूनिया बरामदे में बैठने लगा था। दूकान के अंदर वह कभी नहीं बैठा था। उसकी हिचकिचाहट देखकर युवक ने कहा—"अंदर आइए, इस कुरसी पर बैठिए।"

"अंदर!"

"हाँ, उसमें हर्ज क्या है?"

जूनिया मन में सोचने लगा—बड़े गुसाईंजी ने ऐसी ममता कभी नहीं दिखाई थी!

"आप फिर रुक गए!"

जूनिया ने अंदर जा कुरसी पर बैठते हुए कहा—"बड़े गुसाईंजी नहीं दिखाई दे रहे हैं।"

युवक ने मलीन मुख कर कहा—"उन्हें स्वर्गवासी हुए तीन साल हो गए।"

जूनिया ने कातर भाव से कहा—"बड़े सत्पुरुष थे। मुझे आज यह दुःखद समाचार मालूम हुआ।"

"आजकल क्या धंधा करते हो? तुम तो राजधानी में शिक्षक थे न!"

"हाँ, अब प्रचारक हो गया हूँ।"

"क्या प्रचार करते हो! यही कि जाँति-पाँति का झगड़ा छोड़ो। सिर के सब बालों को काट-छाँटकर हमवार कर दो।"

"क्या प्रचार करता हूँ, कुछ प्रचार नहीं करता। पास में विद्या नहीं, धन नहीं। प्रभु का नाम लेकर पेट भरता हूँ। रात दिन-भर के पापों से भारी और तमोमयी दिखाई देती है।"

"जूनिया, सच कहो, ईसाई क्यों हो गए!"

जूनिया ने आकाश की ओर उँगली दिखाकर कहा—"प्रभु की इच्छा!"

"क्या सचमुच धर्म के लिये!"

जूनिया नीरव रहा।

"फिर, नौकरी के लिये, आजीविका के लिये ?"

जूनिया ने फिर भी कुछ उत्तर नहीं दिया।

"जूनिया ! चुप हो ?"

"हाँ, जूनिया के पाप इन पर्वतों से भी भारी हैं।"

युवक ने उस प्रचारक की ओर देखा, और कहा—"यहाँ काशी से एक शास्त्री आए हैं, उनसे शास्त्रार्थ करोगे ?"

"नहीं।"

"क्यों ?"

"मैं बहस करना ठीक नहीं समझता।"

"क्यों ?"

"क्योंकि उजला उजला ही है।"

"अच्छा, प्रचार तो करोगे न ?"

"हाँ।"

"यहीं, बाहर बरामदे में।"

"अच्छी बात है।"

जूनिया ने तत्क्षण ही एक भजन गाना आरंभ किया। लोगों ने आ-आकर जमा होना शुरू किया। जूनिया ने एक हाथ छाती पर कोट के दो बटनों के बीच में डाल दूसरा उठाकर उपदेश देना आरंभ किया।

कुछ बूढ़ों ने उसे पहचानकर कानाफूसी की—"अरे, वही जूनिया डूम है, जिसका यौवन यहाँ हल जोतने में बीता था।"

कुछ लड़कों ने छिद्र पाया, और चिल्लाने लगे—"जूनिया डूम है!"

जूनिया ने सिर पर आघात लेकर कहा—"हाँ, जूनिया निःसंदेह डूम है। यौवन में उसने खेत खोदकर बीज बोया था। उस बीज

को खाने से फिर भूख लग जाती थी। आज वह लोगों के हृदय-क्षेत्र में प्रभु के नाम का बीज बोता है। उसमें जो फल फलता है, उससे फिर भूख नहीं लगती।"

फिर आवाज़ हुई —"झूम है।"

जूनिया कुछ न बोला। विरोध न पाकर वह आवाज़ मिट गई। जूनिया ने सबके लिये प्रार्थना कर उपदेश समाप्त किया।

युवक गुसाईं ने उस बूढ़े प्रचारक को देखा। उसके पैर नंगे थे। उसके वस्त्रों में पथ की धूल पड़ी थी, और उसके मुख पर अनुभव और अवस्था ने करुण रेखाएँ खींच दी थीं। उसे याद पड़ा, जब युवक जूनिया उसके घुटनों के पास बैठकर उससे अँगरेज़ी सीखता था।

जूनिया उठा, और बोला—"जाकर अपनी जन्मभूमि के दर्शन कर आता हूँ।"

"वहाँ क्या रक्खा है, तुम्हारे पुराने गुसाईं मर गए, और उनके लड़कों में फूट है।"

"उनसे मुझे क्या लेना है। जन्मभूमि है, उसके दर्शन कर आता हूँ।"

"दर्शन ? मूर्ति-पूजक बनोगे ? जूनिया, तुम फिर अपने पहले धर्म में आ जाओ।"

जूनिया के मुख पर क्षीण हँसी उदित हुई, और वह धीरे-धीरे अपने गाँव के मार्ग पर उतरने लगा।

गाँव में जाकर उसनें सब लोगों से भेंट की। गुसाईं के बड़े लड़के ने दूसरे दिन उसके विदा होते समय कहा—"जूनिया, तुम्हारे विना गाँव सूना है, तुम फिर यहीं आ जाओ। कुछ भूमि हम तुम्हें ही दे देंगे, तुम्हारे ही नाम से कर देंगे।"

जूनिया के मुख पर यहाँ भी उदास हँसी प्रकट हुई। उसने कहा—'गुसाईंजी, अब मरते समय क्या तृष्णा बढ़ाऊँ।"

जूनिया विदा होकर राजधानी को चला। उसे वहाँ महीने-भर से अधिक हो गया था।

संध्या-समय वह राजधानी पहुँच गया। गले में किताबों से भरा हुआ झोला, झोले के ऊपर कंबल, शरीर पर अस्त-व्यस्त साफ़ा और माथे पर पसीने की बूँदें लेकर जूनिया अपने घर के निकट आया। उसके हाथ में लाठी थी, और पैरों में जूता न था।

सानी और जेम्स बातें कर रहे थे, जब जूनिया ने धीर गति से कमरे में प्रवेश कर देहरी पर पड़े हुए टाट से अपने पैरों की धूल पोंछनी आरंभ की।

सानी तेज़ी से पति के निकट गई।

जूनिया ने थके स्वर में कहा—"जेम्स, अच्छे हो?"

सानी ने कहा—"महीने-भर से कितने दिन अधिक हो गए, कोई समाचार नहीं, कोई पत्र नहीं!"

जेम्स ने पिता के कंधे से झोला और कंबल निकालकर रख दिए।

जूनिया—"फ़ुरसत भी नहीं, फिर उन निर्जन स्थानों में इतने डाकखाने भी नहीं।"

सानी ने जेम्स से कहा—"जा बेटा, चूल्हे पर पानी गरम करने को रख दे। पापा के हाथ-मुँह धोने के काम भी आएगा, और चाय भी तैयार करूँगी।"

जेम्स विनय के साथ उठा। उसने अपने मुख के प्रत्येक भाव से यही प्रकट किया कि पिता की अनुपस्थिति में वह माता का विशेष आज्ञाकारी रहा, और नित्य ही सूर्य छिपने से पहले खेल का मैदान छोड़ आता था।

सानी ने जूनिया के पैरों को देखकर कहा—"हूँ, जूता फिर नहीं खरीदा! मैं जानती थी।"

"उन पहाड़ी मार्गों में जूता पहनकर ही रपट जाने का अधिक

भय है। इसके अतिरिक्त मेरे समान रात-दिन के बटोही के पैर जूते के छालों से भर जाते हैं। तुम बाबू लोगों की बात कहती हो, वे चलते ही कितना हैं?"

"क्या यहाँ भी जूता नहीं पहनेंगे?"

जूनिया ने निश्चय से कहा—"नहीं।"

"नहीं!"

"क्या जरूरत है? कृत्रिमता जितनी कम हो सके, अच्छा है।"

"पादरी साहब से मिलने नंगे ही पैर जाओगे?"

"हाँ सानी, ठीक याद दिलाई। जल्दी करो, अभी जाऊँगा, समय है।"

सानी ने जाकर जेम्स को, पिता के लिये, एक जोड़ा जूता खरीदने के लिये बाज़ार भेज दिया, और स्वयं पानी गरम करने लगी।

जूनिया ने मुँह-हाथ और पैर धोए, फिर चाय पी। वह लाठी उठा पादरी साहब के यहाँ जाने लगा।

जेम्स तब नहीं आया था।

सानी ने पति की राह रोककर कहा—"इसी तरह नंगे पैर!"

"और क्या?"

"नहीं, मैं न जाने दूँगी!"

"अरी पगली! तू नहीं जानती। वेश का प्रभाव मूर्खों पर पड़ता है। पादरी साहब इन सब बातों को नहीं देखते।"

"मार्ग में अनेक मूर्ख भी तो दिखाई देंगे?"

"वे पीठ पीछे और मुँह के सामने जो चाहें कहें। जूनिया उन्हें क्षमा कर देगा।"

"नहीं, स्वामी! लोग कहते होंगे, जॉन जितना अधिक कमाने लगे हैं, उतने ही अधिक पैसे के लोभी होते जा रहे हैं।"

जूनिया ने आवेश में कहा—"पर जूनिया पैसे का लोभी नहीं।"

सानी ने जेम्स को आता हुआ देख लिया। वह कुछ प्रसन्न हो कहने लगी—"आपके कह देने ही से काम नहीं चलेगा, कुछ साबित भी तो कीजिए।"

जूनिया बहक गया था। कहने लगा—"बाज़ार होकर ही जाऊँगा। जूता ख़रीद लूँगा।"

इसी समय जेम्स ने पिता के पैरों में जूता पहनाते हुए कहा—"पापा, मैं तो समझता हूँ, यह आपके पैर में बिलकुल फ़िट है।"

जूनिया ने हँसकर जूता पहना, और कहा—"हाँ, ठीक है। पर बहुत दिनों से बिना जूते चलने के कारण ऐसा जान पड़ता है, मानो बेचारा पैर बिना अपराध के ही अंध कारागार में ठूँस दिया गया है।"

जूनिया ने पादरी साहब के पुस्तकालय में प्रवेश कर अभिवादन किया। पादरी साहब ने प्रसन्न होकर उसका स्वागत किया, और कुरसी दी।

"इस बार ख़ूब लंबा दौरा किया?"

"जी।" कहकर जूनिया ने अपनी डायरी उनके समीप रक्खी।

"लोग मसीह के उपदेश सुनते हैं?"

"हाँ, सुनते हैं। इस बार मैं कई नए स्थानों तक हो आया, और कदाचित् वहाँ मसीह का पवित्र नाम सबसे पहले उच्चारित कर मेरी ही रसना धन्य हुई।"

पादरी साहब ने जूनिया की डायरी के पृष्ठ उलटकर कहा—"अगले हफ़्ते में नहान का मेला है, रेणुगंगा के किनारे सारे ज़िले के हज़ारों मनुष्य एकत्र होंगे।"

"जी, प्रांत का कदाचित् सबसे बड़ा मेला है।"

"आपके अगले महीने के पहले सप्ताह का प्रोग्राम यही है, कल या परसों यहाँ से चल दीजिए। एक दिन जाने में लगेगा, और

एक दिन वहाँ जाकर स्थिर होने में। चार दिन मेले में प्रचार कीजिए, और सातवें दिन यहाँ आ जाइए। उसके बाद का प्रोग्राम यहाँ आने पर फिर आपको बताया जायगा। अपनी पत्नी को भी ले जाइए। वह भी स्त्रियों में प्रचार करेंगी। मैजिक लालटेन ले जाइए, दरी ले जाइए, साइनबोर्ड-चित्र साथ रखिए। रहने और सामान रखने के लिये छोलदारी ले जाइए। सत्य को फैलाने के लिये भी विज्ञापन देने की ज़रूरत है। संसार की रुचि भी तो देखी जायगी न ?"

जूनिया ने अपने नए जूते के क़ैदी पैर को सांत्वना दी, और मन में कहा—सानी भी जबसे अध्यापिका बनी, बड़ी समझदार हो गई।

पादरी साहब ने कहा—"समझ गए न ? और भी जो कुछ ज़रूरी समझो, साथ ले चलो।"

"जेम्स को भी साथ ले चलूँगा। उसके स्कूल में छुट्टियाँ हैं। कुछ हाथ बँटावेगा, कुछ काम देखेगा, और सीखेगा। कल ही चल दूँगा।"

"खर्च और आवश्यक सामान ?"

"सुबह ले लूँगा। कहकर जूनिया ने अपनी डायरी पर हाथ रखकर पादरी साहब की ओर देखा।

"ले जाइए।"

जूनिया डायरी लेकर चला, और कमरे के बाहर आया। पादरी साहब ने देखा, उसने बरामदे में सिगरेट् जलाई, और दियासलाई वहीं फेंककर चला गया।

पादरी साहब नाराज़ होकर उठे, और बरामदे में आए। उन्होंने उस दियासलाई को उठाया और दूर फेंक दिया। वह कभी सिगरेट् न पीते थे।

तीसरा परिच्छेद

उपद्रव

ढोलकिया भी साथ चलने के लिये राज़ी कर लिया गया। मेला देखने की उमंग में वह भी अपनी डफली, ढोलक और बिस्तरा बाँधकर दूसरे दिन सुबह जूनिया के मकान पर हाज़िर हुआ।

जूनिया ने मेले चलने के लिये तीन लद्दू घोड़े किराए पर ठहरा लिए थे। एक पर छोलदारी और शेष दो पर खाने-पीने के बर्तनों का बोरा, मैजिक लालटेन का बॉक्स, किताबों का संदूक़, कपड़े-बिस्तर का गुंठा और ढोलकिया का लटा-पटा लाद दिए गए।

जूनिया ने कहा—"जेम्स, पैदल चल सकोगे न ?"

"हाँ पापा, क्यों नहीं।"

घोड़े सात बजे रवाना कर दिए गए। शेष लोग खा-पीकर नौ बजे चले। शाम को मेले पहुँच गए। मेला तीसरे दिन से शुरू था, और चार दिन रहता था, पर अभी से वहाँ भीड़भाड़ होने लगी थी।

दूकानदारों का सामान आने लगा था, और वे लकड़ी-कपड़े-पत्तों से भूमि खोद कच्ची दूकानें खड़ी कर लेने में दत्तचित्त थे।

चारो ओर पर्वतों से घिरी हुई एक समतल भूमि थी। वहाँ रेणुगंगा अपनी सहायिका रेखावती से मिली थी। उन दोनो के संगम पर अनेक देवी-देवतों के मंदिर बने हुए थे। उनके स्थापत्य में कदाचित् किसी विशेष शैली का आभास न था, पर मूर्तियाँ निःसंदेह बौद्धकालीन शिल्प से प्रभावित थीं।

संगम के उत्तर की ओर एक छोटी-सी बाज़ार थी, और आस-पास छोटे-छोटे चार-पाँच पहाड़ी ग्राम थे। चारो ओर खेत-ही-खेत थे। रेणु और रेखा अपने सुमधुर निनाद से खेती को सींचती और पनचक्कियों के पहिए घुमाती हुई बही जा रही थीं।

स्त्री-पुत्र और ढोलकिया को मार्ग में छोड़कर जूनिया मेले में जगह तलाश करने गया। कच्ची-पक्की दूकानों की भीड़भाड़ से दूर, पानी के निकट, रेणु की रेती में, अभी स्थान अधिकृत नहीं हुआ था।

जूनिया को वह स्थान पसंद आया। जल्दी से अपने स्त्री-पुत्र को बुला लाया, और वहाँ बहुत दूर तक जगह घेरकर बैठ गया। कोई आकर वहाँ जमना चाहता, तो जूनिया अपनी दोनो आँखें निकालकर कहता—"राजधानी से बड़े पादरी साहब ने भेजा है। मेले के ऑफ़िसर के लिये कमिश्नर साहब की चिट्ठी लाया हूँ। यहाँ जगह नहीं है। रोज़ उपदेश होगा। आदमियों की भीड़ जमा होने के लिये लंबा-चौड़ा मैदान चाहिए, हज़ारों लोग आवेंगे। मैजिक लालटेन का भी तमाशा होगा।"

ढोलकिया मार्ग में बैठा-बैठा घोड़ों का इंतज़ार कर रहा था। जूनिया उसे अपने ठिकाने का सूत्र दे आया था, और असबाब के आ जाने पर तुरंत ही वहाँ चले आने की हिदायत दे आया था।

घोड़ों के आने पर जूनिया, उसकी पत्नी, पुत्र और ढोलकिया ने मिलकर सब सामान खोल डाला, और छोलदारी खड़ी कर दी। सानी रात के खाने-पीने का प्रबंध करने लगी। जेम्स थक गया था, विश्राम करने लगा। ढोलकिया लकड़ी, पानी और बाज़ार का सौदा जमा करने लगा। जूनिया मेले के ऑफ़िसर को चिट्ठी देने चला गया।

मेले के ऑफ़िसर ने जूनिया की छाँटी हुई जगह को स्वीकार

किया, और उसके बिदा होते समय कहा—"निर्भय होकर आप वहाँ प्रचार कीजिए। कोई आपसे कुछ नहीं कहेगा।"

जूनिया के लौट आने पर सबने भोजन किया। मार्ग में जूनिया को उसकी बिरादरी का एक आदमी मिल गया। जूनिया उसे बर्तन मलने और रात को चौकीदारी करने के लिये अपने साथ बुला लिया। चार आने रोज़ उसे देना स्वीकार किया गया। रात को सब लोग छोलदारी के अंदर सोए, और वह चौकीदार तंबू से कुछ हटकर, एक बकायन के वृक्ष की छाया में ख़ूब आग जला कंबल बिछा बैठ गया। मालूम नहीं, उस दिन वह रात-भर बैठा रहा या सो गया।

दूसरे-दिन दिन-भर जूनिया को अवकाश था। यद्यपि लोग आज कुछ अधिक संख्या में आने लगे थे, पर उनमें व्यवसायी ही ज़्यादा थे। उन्हें चार दिन के मेले में साल-भर का ख़र्च वसूल कर लेने की चिंता थी। उन्हें किसी के उपदेश सुनने की फ़ुरसत ही कहाँ।

जूनिया ने खा-पीकर तंबू का मुँह सड़क की ओर करने का विचार किया कि उस पर से गुज़रनेवाली भीड़ का ध्यान उधर आकर्षित हो। तुरंत ही सबने मिलकर जूनिया के विचार को कार्य में बदल डाला।

इसके बाद उसने पेड़ों में रस्सियाँ बाँधकर उनमें तरह-तरह से लिखे हुए बाइबिल के आदर्श वाक्य लटकाए। एक पेड़ के सहारे मैजिक लालटेन का परदा खोलकर तान दिया कि लोगों में अभी से उत्सुकता बढ़े।

तीसरे दिन चाय पीकर बड़े सवेरे ही से ढोलकिया ने अपनी ड़फली बजानी शुरू की। भीड़ जमा होने पर एक ओर जूनिया ने पुरुषों को मसीह का जीवन-चरित्र सुनाना आरंभ किया, दूसरी ओर

सानी ने स्त्रियों को। बीच-बीच में जूनिया कहता था—"उपदेश बराबर चार रोज़ होगा, और रात को साढ़े छ से साढ़े आठ तक मैजिक लालटेन का तमाशा दिखाया जायगा। कोई चंदा नहीं, कोई फ़ीस नहीं, कोई टिकट नहीं। सबको मुफ़्त। जो चाहे, वह देख सकता है। जो पहले आवेंगे, उन्हें बैठने को दरी भी मिलेगी, जो देर से आवेंगे, उन्हें भूमि पर खड़ा रहना पड़ेगा।"

बारह बजे उपदेश बंद कर सबने खाया-पिया। तीन बजे शाम से साढ़े पाँच तक फिर उपदेश हुआ।

साढ़े पाँच बजे से ही मैजिक लालटेन का तमाशा देखनेवालों की भीड़ जुटने लगी।

जूनिया भोजन करने बैठा ही था कि जेम्स ने एक रंगीन नोटिस लिए प्रवेश किया।

सानी बोली—"दोपहर से गया हुआ अब आया है।"

जूनिया ने कहा—"जाने भी दो, बच्चा है, मेला देखता होगा।"

पिता का सहारा पाकर जेम्स बोला—"पापा, देस से एक सरकस-कंपनी आई है। बड़े-बड़े शेर हैं। शेर और गाय एक ही बर्तन में पानी पीते दिखाए जायँगे। एक दो सिर का आदमी भी दिखाया जायगा। तलवारों पर नाच भी होगा।"

जूनिया और सानी दोनो ने आश्चर्य प्रकट किया।

जेम्स—"सब सच है पापा, यह नोटिस लाया हूँ, देखिए। एक रुपया, आठ आने और चार आने के टिकट हैं पापा।"

जूनिया—"हुआ करे बेटा! हम नौकर आदमी ड्यूटी पर हैं। इस तरह खेल-तमाशा देखने जायँगे, तो पादरी साहब क्या कहेंगे। अभी साढ़े छ से हमें स्वयं मैजिक लालटेन का खेल दिखाना है। उसी को देखना।"

जेम्स—"नहीं पापा, उसमें क्या रक्खा है, वह तो रोज़ का

देखा हुआ है। तार पर बाइसिकिल चलेगी पापा! जायँगे पापा! रात साढ़े नौ बजे के खेल में चलेंगे पापा! साढ़े आठ में ही आपकी मैजिक लालटेन समाप्त हो जायगी।"

सानी—"चलें न। रोज़-रोज़ ऐसा अवसर नहीं आता।"

जूनिया—"ला, तो नोटिस तो दिखा।"

जूनिया ने नोटिस पढ़ा। कंपनीवालों के आकर्षक मज़मून ने उसे भी विचलित कर दिया। कहने लगा—"अच्छी बात है, चलेंगे।"

ठीक साढ़े छ बजे से जूनिया ने मैजिक लालटेन का तमाशा दिखाना शुरू किया। खूब भीड़ इकट्ठी हो गई थी। भोले-भाले ग्रामवासी दर्शक थे। प्रभु ईसा मसीह के जन्म, बाल्यकाल, यौवन, उनके आश्चर्य-जनक काम, उनके उपदेश, उनके पकड़े जाने, सूली पर लटकाए जाने, गाड़े जाने और फिर जी उठने से संबंध रखनेवाले रंगीन चित्र परदे पर दिखाए गए। बीच-बीच में जूनिया समझाता भी जाता था।

ढोलकिया, सानी और जेम्स भी साथ थे। जहाँ स्लाइड अटक जाती या कार्बाइड का लैंप बुझ जाता, वहाँ ढोलकिया ढोलक बजाना शुरू करता, और जूनिया, सानी और जेम्स गाना आरंभ करते।

जेम्स का मन सरकस-कंपनी में लगा हुआ था। किसी प्रकार तमाम स्लाइड समाप्त हुए, और खेल खत्म हुआ। जूनिया आदि ने उच्च कंठ से घोषित किया—"मुक्तिदाता की जय!"

भीड़ तितर-बितर हुई।

जेम्स ने कहा—"चलिए पापा, देर हो गई।"

"ठहरो न, अभी नौ भी नहीं बजे। फिर कंपनी पास ही तो है।"

"देर हो जायगी, टिकट नहीं मिलेगा।"

"जेम्स, ज़रा भी धीरज नहीं। दरी लपेटेंगे, मैजिक लालटेन अच्छी तरह रक्खेंगे, स्लाइडें सँभालेंगे, या सब इसी तरह छोड़-छाड़कर चल दें।"

जेम्स ने किसी प्रकार धीरज रक्खा।

सब चीज़ें सँभाल ली गईं। छोलदारी मज़बूती से बाँध दी गई।

जूनिया ने सरकस-कंपनी जाते वक़्त चौकीदार से कहा—"भाई, ज़रा चौकस होकर रहना, नींद न आने पावे। हम दो-तीन घंटे में लौट आवेंगे। छोलदारी के आस-पास हमने किसी को डेरा नहीं डालने दिया। देखो, सावधान रहना, चोरी न होने पावे।"

चौकीदार—"कुछ न होगा, आप निश्चिंत होकर जहाँ चाहे जावें।"

जूनिया, सानी, जेम्स और ढोलकिया सरकस देखने चले।

चौकीदार ने आग जला दी थी। उसने उसमें कुछ लकड़ियाँ और डालकर उसे ख़ूब तेज़ किया। कुछ ही देर में वहाँ एक आदमी आ पहुँचा। आदमी बात करने में बड़ा चतुर था। उसने आते ही चौकीदार के सिर पर लकड़ी फिरा दी। दो-चार क़िस्से सुनाकर उसे लोट-पोट कर दिया।

चौकीदार ने पूछा—"दोस्त, तुम्हारा घर कहाँ है?"

उसने पास ही के गाँव की ओर इशारा कर कहा—"चिलम ही निकालो। तंबाकू पी लें। एक दूकानदार ने नया नमूना दिया है।"

चौकीदार ने उस आगंतुक को चिलम दी। आगंतुक ने चिलम भरी और दोनो ने पी।

ज़रा देर बाद चौकीदार बोला—"माथा घूमता-सा मालूम

देता है। दोस्त, कुछ तंबाकू में मिलाकर तुमने पिला तो नहीं दिया ?"

"रात-भर के जागे हो, इसी से। चलो, पास ही के खेत में एक नटनी का नाच हो रहा है। ज़रा देर उसे देख लो, जी बहल जायगा।"

चौकीदार ने झूमते हुए कहा—"यह चौकीदारी ?"

"वहीं से देखते रहना। ऐसा सुंदर गला है उसका, वाह ! यहीं पर तो है। वह जो उजाला दिखाई दे रहा है।"

आगंतुक उसे ज़बरदस्ती न-जाने कहाँ ले गया। चौकीदार मंत्र-मुग्ध की भाँति उसके पीछे-पीछे जाकर दूरी में अदृश्य हो गया।

इसके बाद चार आदमी आए, और तंबू के अंदर का सारा सामान लेकर चल दिए। एक घंटे बाद फिर आए, और इस बार छोलदारी उखाड़-लपेट, उसे भी लादकर न-जाने किधर चल दिए।

घंटे-भर बाद चौकीदार बहकता हुआ उधर निकल आया, और कहने लगा—"मेले के चारो ओर मैं घूम रहा हूँ, या मेला मेरे चारो ओर घूम रहा है। पेड़ यही तो है। इसके पास यह आग मैंने ही जलाई थी। कुछ ठीक-ठीक याद नहीं आता। एक चीज़ यहाँ और भी थी। क्या थी ? ज़रा सोच लूँ।"

चौकीदार भूमि पर माथा पकड़ बैठ गया, और कहने लगा—"शायद पहले जन्म की बात है। इस आग के पास कुछ और चीज़ ज़रूर थी। बेईमान ! न-जाने तंबाकू में मिलाकर मुझे क्या पिला गया।"

चौकीदार फिर चुप हो गया। विशाल पत्थरों पर टकराते हुए रेणु का जल बह रहा था, और उस रात की शून्यता को मेले का आनंद-जागरण बाधा पहुँचा रहा था।

उधर जूनिया आदि सरकस का आनंद ले रहे थे। सरकस का विदूषक अपने साथी को खींचकर एक चाँटा मारने के लिये अपने एक पैर को भूमि में जमा उस पर घूमा, साथी ने सिर झुका लिया। विदूषक ने वह चाँटा अपने निकटतम गाल पर जमा दिया! ज़ोर की आवाज़ हुई—"चट्ट!"

दर्शक खिलखिला उठे। जूनिया ने भी होंठ खींचकर खोल दिए, और सानी ने भी अपनी हँसी पर अपनी ओढ़नी का कोना खींच लिया। जेम्स की हँसी का तो सिरा ही नहीं मिलता था। उसने शेर और बकरी को एक ही बर्तन में पानी पीते देखा। अनेक प्रकार की कलाबाज़ियाँ देखीं, झूलों पर नाच देखा, तार पर साइकिल चलती देखी। गेंद, छुरे और तश्तरियों के खेल देखे। जेम्स सबसे अधिक ख़ुश उस बंदर को देखकर हुआ, जो जलते हुए घेरे के बीच से फाँद, एक सफ़ेद भालू की पीठ पर सवार हो उसकी रास पकड़ लेता था।

सरकस के मैनेजर ने बड़े अदब-क़ायदे और रस्म-रिवाज के साथ सिर झुका खेल की समाप्ति घोषित की। विदूषक ने भी अपनी दोनो टाँगों के बीच में सिर दिखा सलाम किया, और कनपटी पर एक हाथ रख आँखें बंद कर मस्तक भूमि के समानांतर झुका दिया। उसने बिना शब्दों के प्रयोग के प्रकट किया—"जाइए, अब सो रहिए।" उसने फिर तर्जनी पर अँगूठा तीन बार उछालकर अपनी जेब में रखकर ज़ाहिर किया—"पैसा अब हमारा हो चुका।"

दर्शकगण अंतिम हँसी हँसकर उठ खड़े हुए, और जाने लगे।

साढ़े ग्यारह हो चुके थे। जूनिया भी उठकर, अपने साथियों को ले छोलदारी की ओर चला। उस वक़्त से कदाचित् घंटे-भर पहले ही बदमाशों ने उसकी छोलदारी के समस्त चिह्न, बालू पर पड़े हुए पदांकों की तरह, मिटा डाले थे, और उसके हर खूँटे के छेद पर मिट्टी डाल दी थी।

मार्ग में जूनिया ने कहा—"भाई ढोलकिया, सफ़ाई अच्छी थी, तख्ते के आगे उस स्त्री को खड़ी कर उस खिलाड़ी ने आठ-दस छुरे खींचकर मारे, और वह हवा में मानो तैरते हुए उस स्त्री के सिर के चारो ओर तख्ते में गड़ गए, बिलकुल सिर का स्पर्श करते हुए। फेंकते वक़्त बाल-भर का अंतर हो जाता, तो या वह स्त्री अपनी आँख गँवाती या उसकी नाक कटती। सानी ने तो डरकर मुँह छिपा लिया था।"

सानी ने पति की बात का विरोध कर कहा—"ज़रूर जादू था।"

ढोलकिया बोला—"नज़र बाँध दी थी, और जादू क्या था?"

जूनिया ने जहाँ पर छोलदारी देखने की कल्पना की थी, वहाँ उसका पता न था। बकायन के पेड़ के नीचे आग की लपटों का निशान भी न था, और अंगारों के ऊपर राख पड़ गई थी।

जूनिया ने घबराकर कहा—"रास्ता?"

सानी—"ठीक तो है।"

ढोलकिया—"हैं, छोलदारी?"

जेम्स—"पापा! बड़े ज़ोर की नींद लगी है।"

चारो अपने कैंप के निकट आ गए थे। प्रायः बुझी आग के पास चौकीदार अचेत होकर पड़ा था। छोलदारी मय सामान के ग़ायब थी!

जूनिया ने आँखें मलकर फिर देखा, सपना न था। उसने अपना नाख़ून गाल पर चुभाया, उसकी चेतना ठीक-ठीक काम कर रही थी।

सानी ने चिल्लाकर कहा—"हमारी छोलदारी!"

ढोलकिया ने कहा—"यही जगह है! मैंने अपने हाथ से यहाँ खूँटा गाड़ा था।"

जूनिया ने निराशा के स्वर में कहा—"हा भगवान्! अब

क्या होगा ? पादरी साहब को कैसे मुँह दिखाया जायगा, सोसाइटी का सारा सामान ग़ायब करा दिया, लपेट में अपना लोटा-कंबल भी जला गया।"

सानी ने उदास होकर कहा—"और मेरा ट्रंक ! रुपए भी उसी में रक्खे थे। हाय बेईमान ! पानी पीने का वह टूटा टीन भी तो उठा ले गए !"

जेम्स भूमि पर लेटते हुए बोला—"मामा, बड़े ज़ोर की नींद लगी है।"

चौथा परिच्छेद

झूठी रिपोर्ट

ढोलकिया ने चौकीदार को पेड़ के नीचे पड़ा देख लिया था। उसने उस सुप्त मनुष्य को उठाते हुए कहा—"अरे उठ, हमारा सर्वस्व लुटाकर किस नींद में पड़ा सो रहा है?"

जूनिया बोला—"खूब अच्छी चौकीदारी की! माल का माल गँवाया, और अब इस रात की परेशानी का क्या ठिकाना है?"

ढोलकिया ने उसे झकझोरकर कहा—"सुनता नहीं रे बेईमान और विश्वासघाती! दूँ तेरे एक ठोकर!"

सानी ने जेम्स से कहा—"इस तरह भूमि पर न सोओ बेटा, ऊपर से ओस गिर रही है। चलो, उस पेड़ के नीचे।"

सानी बेटे को उठाकर उसी पेड़-तले चली। जूनिया भी वहाँ पहुँच चुका था।

चौकीदार ने अपनी नींद में ही दुःख-भरी लंबी साँस छोड़ी।

जूनिया घबराहट में चौकीदार की ओर बढ़ते हुए बोला—"ढोलकिया, नाड़ी तो ठीक-ठीक है न?"

"बाल भी बाँका नहीं हुआ है बेईमान का। नखरे करता है।"

सानी ने आस-पास से कुछ लकड़ियाँ बीनकर पेड़ के नीचे की आग पर डालीं। कुछ आँच उसमें मौजूद थी। सानी ने फूँक-फाँककर लपट पैदा की, और उसके निकट, जेम्स का सिर गोद में लेकर, बैठ गई।

"तू आसानी से नहीं उठेगा। करता हूँ तेरा इलाज।" कहता हुआ ढोलकिया नदी से अपनी टोपी में पानी भर लाया।

इस अवकाश में जूनिया के परिश्रम से चौकीदार उठकर बैठ गया था।

जूनिया उससे पूछ रहा था—"क्या मामला है?"

चौकीदार विस्मय की दृष्टि से चारो ओर देखकर कुछ समझने का प्रयास कर रहा था।

ढोलकिया ने एक हाथ में जल लेकर ज़ोर से उसके मुख पर फेंका।

चौकीदार को चेतना मिली, वह उठ खड़ा हुआ।

जूनिया ने कहा— "कहाँ हो? छोलदारी किधर गई?"

चौकीदार ने मानो कुछ पाया। बैठते हुए कहने लगा—"हाँ, छोलदारी! बताता हूँ। मेरा क़सूर कुछ भी नहीं है।"

वह धरती पर बैठ गया, और कहने लगा—"आप लोगों के जाते ही यहाँ एक बदमाश आया। उसने तंबाकू में न-मालूम मुझे क्या भरकर पिला दिया कि मैंने अपनी सुध-बुध खो दी। तब से अब होश में आया हूँ। छोलदारी और उसके अंदर का सब सामान ज़रूर उसी ने उड़ाया है!"

जूनिया बोला—"उसे पहचानते हो?"

"नहीं। कहता था, इसी सामने के गाँव में रहता हूँ। प्राण बच गए; अब भी सिर में चक्कर आ रहा है।"

ढोलकिया कहने लगा—"झूठा है, बेईमान! यह ज़रूर चोरों से मिला हुआ है, और उसमें हिस्सा लेने के लिये जाल रच रहा है।"

सानी ने चिंतित होकर कहा—"हे भगवान्! अभी सारी रात पड़ी हुई है। कैसे कटेगी? मेरा बच्चा कभी धरती पर नहीं सोया।"

ढोलकिया ने चौकीदार का हाथ पकड़कर उसे उठाया, और उसके एक चपत जमाकर कहा—"बता सच-सच, नहीं तो तुझे अभी पुलिस की चौकी पर ले जाकर तेरी अच्छी मरम्मत कराता हूँ।"

"मैं ख़ुद मर रहा हूँ, मुझे मारकर हत्या न लो। भगवान् के नाम पर दया करो। मैं निर्दोष हूँ।" कहकर वह फिर बैठ गया।

भगवान् का नाम सुनकर जूनिया बीच में पड़ा, और कहने लगा—"अरे नहीं, वेचारा ऐसा नहीं है।"

सानी ने भी बैठे-बैठे कहा—"नहीं, मारो मत।"

जूनिया ने आस-पास किसी को भी डेरा नहीं डालने दिया था। जूनिया की छोलदारी के ऊपर शून्य सड़क थी, और नीचे रेणु-गंगा का प्रबल प्रवाह, दूर दाहनी तरफ़ ऊन के व्यापारी और कारीगर कुछ लामा लोगों के डेरे पड़े थे, एवं बाईं ओर कुछ भोटिए अपनी बकरियों के झुंड और सुहागे के थैले लेकर ठहरे हुए थे।

जूनिया ने दोनो दिशाओं में संकेत कर कहा—"इन लोगों से पूछा ?"

चौकीदार ने करुण कंठ से कहा—"कहाँ से, मैं तो अब होश में आया हूँ न।"

सानी और जेम्स को वहीं छोड़ वे तीनो लामाओं के डेरों पर पहुँचे। चौकीदार आगे-आगे चला। दो दिशाओं से दो भोटिए ख़ूँख़ार कुत्ते भयानक स्वर से भूँकने लगे, और तीन-चार लामा जो कुछ हाथ पड़ा, उसे उठा डेरों के बाहर निकल आए।

चौकीदार सिर पर पैर रखकर भागा। ख़ैर हुई, कुत्ते ज़ंजीरों से बँधे थे। जूनिया और ढोलकिया जहाँ तक पहुँचे थे, वहीं पैर जमाकर खड़े हो गए।

लामा बोले—"कौन है ?"

"हमारी छोलदारी भी देखी ?"

"नहीं, इधर नहीं आई।"

जूनिया उस दुख में भी हँस पड़ा। कुत्तों की तरफ़ देखता हुआ दो-चार क़दम और आगे बढ़ गया। ढोलकिया भी उसकी छाया का आश्रय लेता हुआ चला।

जूनिया ने कहा—"लामा भाई! वह सामने, जहाँ आग जलती दिखाई दे रही है, हमने अपनी छोलदारी लगाई थी। चौकीदार को वहाँ छोड़ हम मेले में गए। कोई बदमाश आकर सब कुछ उठा ले गया। चौकीदार को कुछ खिला-पिलाकर बेहोश कर गया। तुमने तो उधर किसी को आते-जाते नहीं देखा ?"

"ऊँहूँ। नहीं।" कहकर लामा अपने-अपने डेरों के अंदर जाने लगे।

जूनिया ने आग्रह के साथ कहा—"भाई, हमारे साथ एक बच्चा है, उसे एक कोने में रात-भर सो रहने के लिये जगह दे दो।"

"ऊँहूँ, यहाँ तिल रखने की जगह नहीं है।" एक लामा बोला।

"ओढ़ने को एक कंबल ही दे दो।"

"सब कंबल बिक्री का है। रात का वक़्त है। इस वक़्त कोई ग्राहक नहीं। पंद्रह का माल दस में दे देंगे। लाओ निकालो।"

वहाँ किसी के पास कोई पैसा भी न था।

लामा बोला—"करोगे सौदा ?"

"दाम इस वक़्त नहीं हैं।"

"तो जाओ। कहीं कुत्ता खुल गया, तो आफ़त आ जायगी। चले जाओ।"

उस अर्द्ध-रात्रि में आकाश का पूर्ण चंद्र चमक रहा था।

जूनिया

लामा बोला—"करोगे सौदा ?"

गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस, लखनऊ

जूनिया आदि निराश होकर भोटियों के पड़ाव की ओर चले। वहाँ भी कुछ पता न चला। भोटिए स्वयं खुले आकाश के नीचे पड़े थे, वे क्या किसी को आश्रय देते।

सब सानी के पास आए। सानी ने पूछा—"कुछ पता लगा?"

जूनिया—"कुछ नहीं सानी! हम जाकर मेले के ऑफ़िसर को सूचना देते हैं। तुम्हें डर तो नहीं लगेगा? चौकीदार को यहीं छोड़ जाते हैं। यह कुछ लकड़ियाँ बटोरकर आग स्थिर रक्खेगा। रात किसी तरह कट जायगी।"

जूनिया ढोलकिया को साथ लेकर मेले के ऑफ़िसर के निवास पर पहुँचा। साहब सो चुके थे, पर उनका खानसामा मेला देखकर उसी वक़्त लौटा था। कहने लगा—"कौन है?"

"साहब से मिलना है, बड़ा ज़रूरी काम है।"

"सो गए, कल सुबह राजधानी जायँगे। नहीं मिल सकते। क्या काम है?"

"भाई, हमारा सब माल-असबाब चोर चुरा ले गए!"

"तुम कहाँ थे?"

"चौकीदार के सुपुर्द कर मेला देखने गए थे। चौकीदार को बेईमानों ने नशा पिला बेहोश कर दिया।"

"तो साहब क्या करेंगे? चौकी पर जाकर रिपोर्ट लिखाओ।"

जूनिया निराश होकर वहाँ से चला, और कहने लगा—"ढोलकिया भाई! जूनिया कभी खेल-तमाशे देखने नहीं जाता था। आज ही गया, और आज ही किस मुसीबत में फँस गया, देख ही रहे हो। अभी इसका अंत होनेवाला भी नहीं। और तुम भी मेरी बला में फँस गए।"

"यह कोई बड़ी बात नहीं। दोस्त का कर्तव्य मदद करना है। लेकिन मुझे अपनी उस ढोलक के जाने की ज़रा भी परवा नहीं।

फूट गई थी, मैंने मोम से उसकी दरार कौशल-पूर्वक भर रक्खी थी, मगर वह डफली मैंने सीधे बंबई से मँगाई थी। फ्रांस की बनी थी। उसके किनारों पर जड़े हुए मँजीरों के जोड़े कैसे सुरीले और चमकते थे!"

"क्या किया जाय! अफ़सोस है। मुझे अपने माल-असबाब के जाने का कुछ भी दुःख नहीं। लेकिन मिशन की छोलदारी, बड़ी दरी, तमाम किताबें और वह मैजिक लालटेन, इनके जाने की बड़ी भारी चिंता है। पादरी साहब के पास कौन-सा मुख लेकर जाऊँ?"

जूनिया ने चौकी में जाकर रिपोर्ट लिखाई, और पुलिस को साथ लेकर अपनी जगह पर आया।

रात का वक़्त था। पुलिस ने यथाशक्ति आस-पास खोज की। कुछ पता न चला। जाते समय वह चौकीदार को साथ ले गए, और उससे भेद मालूम करने के लिये उसे हवालात में बंद कर दिया।

ढोलकिया ने कहा—"अब क्या होगा?"

जूनिया—क्या होगा? अब इस समय कहाँ जायँ? किसी तरह रात बिता देनी है। चलो, कुछ लकड़ी और खोजकर जमा कर लें।"

किसी प्रकार आग जला-जलाकर रात काट दी गई।

सुबह जूनिया ने कहा—"भाई ढोलकिया, जूनिया यहाँ से कहीं न जायगा। वह भूखा इसी पेड़ के नीचे अपना बाक़ी तीन दिन का प्रोग्राम पूरा करेगा। ज़रा जेम्स की चिंता है। तुम्हारी जहाँ इच्छा हो, जा सकते हो। मैं अपनी आफ़त तुम्हारे सिर मढ़ देना उचित नहीं समझता।"

ढोलकिया बोला—"राजधानी को समाचार भेजकर खर्च आदि मँगा लो।"

"नहीं, मैं यह मूर्खता की कथा स्वयं वहाँ ले जाऊँगा।"

"दिन में खाओगे क्या, रात काटोगे कैसे ?"

"परमेश्वर मालिक है, एक-दो रुपए सानी की जेब में होंगे। दिन में चने चबाकर प्रभु के नाम का प्रचार करूँगा, और रात में आग जलाकर उसी का स्मरण करूँगा। यह सब उसी की माया है। वह जुनिया के धीरज की परीक्षा कर रहा है।"

ढोलकिया बोला—"मैं अपने साले के पास हो आता हूँ। वह यहाँ आया हुआ है। शायद हमारी कुछ मदद कर दे। उपदेश रोज़ होगा न ?"

"हाँ, हर हालत में।"

"ढोलक का भी इंतज़ाम कर लाऊँगा।"

ढोलकिया ने जाकर साले से सारी कथा कही। वह उससे पंद्रह रुपए उधार माँग लाया। तीन-चार दिन के लिये दो कंबल और एक ढोलक भी साले ने एक जगह से उसे दिला दी।

जुनिया के पास जाकर उसने वे चीज़ें रखकर कहा—"आप कष्ट में हैं, लीजिए, इन रुपयों से काम चलाइए। राजधानी पहुँचकर ऋण चुका दिया जायगा। ये दो कंबल ले आया हूँ। एक लकड़ी के डंडों पर तानकर आश्रय बना लेंगे, और दूसरा बिछा लेंगे। ओढ़ने के लिये परमेश्वर मालिक है।"

सानी ने पूछा—"खाने-पीने का क्या होगा ?"

जुनिया—"अब क्या चिंता है। रुपए पास हैं। एक-दो हाँडियाँ मँगा लेते हैं। नदी-किनारे दोनो वक्त खिचड़ी उबाल देना। जंगल से पत्तियाँ तोड़, बिछाकर उनमें खा लेंगे, और चुल्लू से पानी पी लेंगे।"

ऐसा ही किया गया। खा-पीकर जुनिया उपदेश देने खड़ा हुआ,

और ढोलकिया ने ढोलक बजानी आरंभ की। कुछ लोग जमा होने लगे, पर पहले दिन की-सी भीड़ न थी।

जूनिया ने किसी तरह अपना कर्तव्य निभाकर संध्या की। रात को कंबल के डेरे में, बाहर से ख़ूब आग जला, सावधान हो सब लोग आराम करने लगे।

उधर उस दिन मेले के ऑफ़िसर किसी ज़रूरी काम से राजधानी जाने की तैयारी कर रहे थे। वह खाना खाने लगे थे, और खानसामा ने उन्हें उदार भाव में पाकर कहा—"हुज़ूर, कल रात बारह बजे वह आपसे मिलने आया था।"

"कौन?"

"वही, जो परसों कमिश्नर और पादरी साहब की चिट्ठियाँ आपके पास लाया था।"

"वह मिशन का प्रचारक?"

"जी हुज़ूर। कहता था, चोर मय सामान के मेरी छोलदारी उठा ले गए।"

"और वह कहाँ था?"

ख़ानसामा ने कुछ भूल की, और कहीं के सिरे कहीं मिलाकर कहा—"हुज़ूर, उसने कुछ साफ़-साफ़ तो कहा नहीं, पर मैं ताड़ गया।"

"क्या?"

"कि वह शराब पीकर कहीं नटनी का नाच देखने चला गया, और चोर मौक़ा पा उसका सब कुछ टाँचकर चंपत हो गए।"

ऑफ़िसर साहब संध्या-समय राजधानी पहुँचे। संयोग की बात है, ठंडी सड़क पर उन्हें घूमते हुए पादरी साहब मिल गए।

पादरी साहब ने कहा—"मैंने प्रचारक के हाथ पत्र भेजा था।"

"जी।"

"आपने उसे सहायता पहुँचाई होगी?"

"जी। लेकिन सुना है, कल रात उसने ख़ूब शराब पी, और नाच-मेले में मस्त हो गया।"

पादरी साहब ने चकित होकर कहा—"हैं, हमारे उपदेशक की जब यह दशा है, तो उपदेश में क्या खाक प्रभाव होगा? आपको सच-सच ख़बर है?"

"जी, उसकी इस मस्ती का यह फल हुआ कि रात को चोर आए, और सब छोलदारी के सारा सामान उड़ा ले गए!"

पादरी साहब जूनिया की सूरत याद कर जल उठे। कहने लगे—"देखने में ऐसा सीधा, और करतूतें ऐसी काली!"

दोनो एक दूसरे से बिदा हुए, और पादरी साहब रास्ते-भर जूनिया का बहुत बुरा रूप याद करते हुए घर आए, और उसके मेले से लौटने का इंतज़ार करने लगे।

जूनिया ने नाना प्रकार के कष्ट सहकर तीसरे और चौथे दिन भी प्रचार किया। चौथे दिन रात-भर उसे नींद नहीं आई। वह पादरी साहब के सामने जाकर क्या कहेगा, यही उसकी मुख्य चिंता थी।

सानी बोली—"नींद नहीं आती स्वामी?"

"नहीं सानी!"

"भय क्या है। जो कुछ मिशन का सामान खो चुके हैं, वेतन से कटाकर भर देंगे। चिंता छोड़िए, आराम कीजिए।"

जूनिया ने कहा—"हाँ सानी, चिंता कुछ भी नहीं। परमेश्वर की कृपा है। वह हमारे पापों को क्षमा करता है, हमें भी अपने क़सूर करनेवालों को क्षमा करना चाहिए।"

सानी को नींद आ गई; पर जूनिया फिर भी करवटें बदल रहा था।

मेला उखड़ चुका था। तमाम दर्शक विदा हो गए थे, पर अभी अनेक व्यापारी सामान बाँध कुलियों को खोज रहे थे।

चोरों का कुछ पता न चला। पुलिस ने चौकीदार को निर्दोष समझकर रिहा कर दिया।

पाँचवाँ परिच्छेद

झगड़ा

पाँचवें दिन सुबह ढोलकिया ने इधर-उधर की चीज़ें सौंप दीं। सानी ने दो हाँडियों में खिचड़ी उबालकर, गूलर के पत्तों में रखकर सबको खिलाया।

खा-पीकर सब चलने को तैयार हुए।

सानी ने पूछा—"जेम्स!"

"मामा, मैं भी पैदल ही चल सकूँगा। देख लेना। क्या उस दिन नहीं चला था?"

जूनिया ने कहा—"नहीं, तो कह दो यहीं। एक क़ुली बुला लेते हैं, तुम्हें कंधे पर ले चलेगा। मार्ग में थक गए, तो कदाचित् क़ुली मिलने में अड़चन पड़ जायगी।"

"नहीं पापा, मैं मनुष्य को घोड़ा नहीं बनाऊँगा। पैदल ही चलूँगा।"

"चलो फिर।"

भार गँवा देने से रस्सी और क़ुलियों का बंधन न था। जूनिया ने लाठी उठाई और मन में विचार किया—यह सूखी हुई लकड़ी स्नेह-मयी प्रतीत होती है। इस दुर्दिन में भी यह मुझसे विलग नहीं हुई।

ढोलकिया ने सबसे पहले पैर बढ़ाकर कहा—"चलो।"

उसके बाद जेम्स की उँगली पकड़कर सानी चली। अंत में जूनिया ने मोह-भरी दृष्टि से रेणु की नीलिमा-प्रतिफलित तरंगों को देखा, कुछ सोचा, और चल पड़ा।

जूनिया रिक्त हाथ, खाली जेब, विगत-श्री और उत्साह-विहीन होकर चला। उसके मन में किसी भारी पराजय का बोध हुआ।

एक दिन और भी जूनिया ने अपने जीवन में हार का अनुभव किया था। वह थी सानी के कड़ों को जुए में हार जाने की रात। सचमुच वड़ी भयानक रात थी। जूनिया सोचने लगा—वह हार अपनी ही कमज़ोरी का फल थी, और यह पराजय—इसमें मेरा क्या दोष? सरकस देखने चला गया, तो क्या हुआ? सारा मेला गया था। अनेक साहब लोग भी वहाँ मौजूद थे, और पादरी साहब भी यहाँ होते, तो ज़रूर जाते। फिर चौकीदार नियुक्त कर गया था। उसकी मज़दूरी मैंने अपनी जेब से दी थी। उसका ही क्या क़सूर? यही कि वह वेश के अंदर चोर को नहीं पहचान सका!

चार-पाँच मील प्रायः समतल भूमि पर ही उन्होंने अपना मार्ग तय किया। रेणु-गंगा वहीं छूट गई थी, पर रेखावती अभी उनके पथ के निकट ही थी। पथ के ऊपर और नीचे हरे-भरे खेत थे। कहीं-कहीं छोटे-छोटे गाँव थे। चारो ओर अनेक गाँवों, खेतियों, नदियों और घाटियों को आश्रय में लिए हुए पर्वतों की श्रेणियाँ थीं। प्रभात के सूर्य के कारण उनकी बढ़ी हुई छाया उनकी रूप-रेखा को अधिक स्पष्ट किए हुए थी।

इसके बाद उन लोगों ने पाँच-छ मील की चढ़ाई पार की। मार्ग चीड़ के सघन वन से होकर गया था। वहाँ अभी तक धूप नहीं आई थी। जाड़ों में शायद ही वहाँ सूर्य भगवान् के दर्शन होते होंगे। उत्तर की ओर हिमालय-पर्वत की श्रेणियाँ दिखाई देने लगीं। चीड़ के हरे-भरे वृक्षों की आड़ से प्रभात-रवि की किरणों में जगमगाता हुआ वह सनातन हिम पथिक को विस्मय-मुग्ध कर देता है।

जूनिया और ढोलकिया बातें करते हुए उस चढ़ाई की चोटी पर पहुँच चुके थे।

ढोलकिया ने कहा—"जेम्स बहुत पीछे रह गया।"

"चढ़ाई, और फिर उसे कभी चलने का अभ्यास नहीं।"

दोनो ने चोटी पर बैठकर विश्राम करने का विचार किया।

रानी जेम्स को भाँति-भाँति के आश्वासन देकर ले आ रही थी।

चोटी के ऊपर एक दूकान थी। वहाँ कुछ मनुष्य बैठे हुए विश्राम कर रहे थे। जूनिया और ढोलकिया भी उधर ही बढ़े। एक बेंच बाहर खाली पड़ी हुई थी।

एक युवक बेंच पर बैठा हुआ हाथ और स्वर ऊँचा कर मेले में की गई अपनी बहादुरी का वर्णन कर रहा था—"मंदिर के पास रेणु-गंगा की गहराई का कुछ अंत नहीं। बहुत-से लोग तो कहते हैं, वहाँ संगम से भी अधिक गहराई है। पर्व का दिन था। मैं नहा-धोकर तट पर धोती निचोड़ रहा था। एक सत्रह साल का लड़का, कदाचित् तैरना जानता था, बड़ी बेफ़िक्री से जल को चीरता हुआ आगे बढ़ने लगा। मैंने उसे सावधान किया कि आगे न जाओ, लहर में बड़ा वेग है।—"

जूनिया और ढोलकिया भी बैठकर सुनने लगे।

"लड़के ने न माना, और मेरी चेतावनी को निस्सार साबित करने पर तुल गया। वह गज़-भर भी आगे न बढ़ा होगा कि प्रखर प्रवाह में डूबने और चिल्लाने लगा। उसके माता-पिता तट पर ही थे। ममता के बंधन में वह अपनी योग्यता का विचार न कर पानी में लड़के को बचाने के लिये कूद पड़े, और अथाह जल में स्वयं असहाय हो गए। उनकी पत्नी ज़ोर से रोने लगीं। बदन की धोती कस और हाथ की धोती फेककर मैं जल में कूद पड़ा। आनन-फ़ानन में एक-एक कर दोनो को पानी से खींचकर मैंने तट पर रख दिया। लड़के की माता अपने समस्त आभूषण निकालकर मुझे देने लगी।—"

तमाम श्रोता वाह-वाह करने लगे थे।

जूनिया मन में सोचने लगा—इस युवक को ज़रूर कहीं देखा है। इसकी वाणी भी यद्यपि कुछ मोटी पड़ गई है, पर निश्चय कभी सुनी है।

"मैंने कहा, रखिए माताजी, पधान के लड़के को यह सब कुछ नहीं चाहिए।"

जूनिया के स्मृति-सरोवर में तरंगें उठीं—"पधान का लड़का!"

"अगर आप मेरी सेवा से प्रसन्न हैं, तो मुझे इस लड़के से कुछ कहने की आज्ञा दीजिए। माता-पिता दोनों ने सहर्ष अनुमति दी।" कहकर उस युवक ने साँस ली।

समुत्सुक श्रोताओं में से अनेकों ने पूछा—"आपने उस लड़के से क्या कहा?"

"कहता क्या? मैंने उसके कान खींचकर एक ज़ोर की चपत के साथ कहा, मैंने तुम्हें सचेत किया था न? भाग्य से इस बार बच गए, भविष्य में याद रखना।"

ढोलकिया ने पथ की ओर दृष्टि कर कहा—"जेम्स अभी नहीं आया? बहुत पीछे रह गया क्या?"

जूनिया का ध्यान उस युवक पर ही था। धीरे-धीरे उसकी समझ में आ गया। वह पधान का लड़का वही था, जिसने उससे सानी के कड़े जीत लिए थे।

जूनिया ने उसके निकट जाकर कहा—"सलाम।"

पधान के लड़के ने उसे नहीं पहचाना, लेकिन उत्तर दिया—"सलाम। आनंद में हो? मेले से आ रहे हो?"

जूनिया बोला—"हाँ, आपने मुझे पहचाना नहीं?"

पधान के लड़के ने कुछ लज्जित होते हुए कहा—"नहीं, आपका घर कहाँ है?"

"मैं जूनिया हूँ, पंद्रह-सोलह साल पहले चौमुखिया में था न ?"

पधान के बेटे को सब कुछ याद आया। वह अपने साथियों को छोड़ जूनिया के निकट गया, और कहने लगा—"जूनिया, तुम्हें तो मैं ज़िंदगी-भर खोजता ही रह गया। एक-दो वक्त राजधानी में भी तुम्हारी तलाश की, पर तुम तो वहाँ बाबू बने हुए न-जाने कहाँ विराजमान थे !"

"मैंने भी आपको कई बार याद किया।"

"तुम्हारे वे दोनो कड़े, तुम्हारे कहने के अनुसार, अभी तक मेरे पास सुरक्षित रक्खे हुए हैं। कहो, उन्हें छुड़ाने का विचार है ?"

"हाँ, है।"

"तो कड़े मेरे घर पर रक्खे हुए हैं, रुपए लेकर किसी दिन उस तरफ़ आओ, और उन्हें ले जाओ। सूद भी दोगे न ?"

"हाँ-हाँ, क्यों नहीं।"

सानी जेम्स के साथ दूर पथ पर आती हुई दिखाई दी।

पधान का लड़का अपने साथियों-सहित बिदा हुआ। उस चोटी से उसका मार्ग जूनिया के मार्ग से विभक्त हो गया था। सानी और जेम्स भी आकर विश्राम करने लगे।

उन कड़ों के हार जाने की घटना जूनिया की स्मृति में एक बहुत बड़ा घाव था। उन्हें छुड़ा लेने से वह घाव भर जाता। जूनिया ने अनेक बार उन्हें छुड़ा लेने का विचार किया, पर कभी रुपए नहीं जुड़ सके, और कभी स्थान की दूरी ने उसे सफल-मनोरथ नहीं होने दिया। अंत में धीरे-धीरे वह उन कड़ों की ओर निराश हो सोचने लगा—अब कहाँ किसके पास वे कड़े रक्खे हैं, समय के प्रवाह में न-जाने कहाँ के कहाँ बह गए होंगे। न-जाने कितनी बार आग में तपकर कितनी नई-नई आकृतियों में ढल चुके होंगे।

कभी-कभी जब सानी उससे नाराज़ हो जाती, तो उन कड़ों की हार का उल्लेख ज़रूर कर देती। उस समय जूनिया सोचता—

यदि सर्वस्व देकर भी कहीं से उन कड़ों को ला सकता, तो उन्हें सानी के सामने पटक देता, और अपने जीवन-पृष्ठ से उस काले धब्बे को मिटा डालता।

आज अचानक उस मनोरथ-पूर्ति की आशा से वह प्रसन्न हो उठा।

सानी बोली—"जेम्स थक गया है।"

जेम्स—'नहीं पापा, खुद नहीं चल सकी, मेरा नाम लेती है।"

जूनिया बोला—"अब कुछ चिंता नहीं। अब तो बराबर मैदान और उतराई चली गई है। सिर्फ़ घर पहुँचने के वक़्त दो-तीन मील की चढ़ाई मिलेगी।"

कुछ देर विश्राम कर सबने फिर रास्ता पकड़ा।

चलते-चलते जूनिया ने कहा—"सानी!"

सानी बोली—"हाँ।"

"तुम्हारे कड़े सुरक्षित हैं। राजधानी पहुँचने पर अगली तनख्वाह से मैं उन्हें छुड़ा लूँगा। कुछ सूद भी दे दूँगा।"

"सूद देकर छुड़ाने की क्या ज़रूरत है?"

"तुम बार-बार उनका उल्लेख कर मुझे शर्मिंदा करती हो।"

सानी ने कुछ हँसकर कहा—"अब से नाम भी न लूँगी।"

जूनिया को विश्वास न हुआ, कहने लगा—"नहीं, छुड़ा ही लूँगा। खो जाता है, गिर जाता है, छीज जाता है, और देख ही रही हो, इस तरह चुरा लिया जाता है। दे डालूँगा, कुछ सूद भी दे डालूँगा।"

सानी आभूषणों का पहनना छोड़ चुकी थी, कहने लगी—"मुझे उनका कुछ भी मोह नहीं। ऐसा फ़ालतू रुपया कहाँ जमा है कि इस तरह बहाते फिरो। कड़े बीस ही रुपए के तो थे। बीस रुपए दोगे, ऊपर से सूद दोगे! वाह!'

जूनिया फिर नीरव हो गया।

संध्या के साथ-साथ वे लोग राजधानी के निकट आ पहुँचे। ज्यों-त्यों कर उन्होंने अंतिम चढ़ाई शेष की, और नगर में प्रविष्ट हुए।

जूनिया के पैर बड़ी कठिनता से आगे पड़ते थे। रह-रहकर उसे पादरी साहब का ध्यान आने लगा। वह सोचने लगा—पादरी साहब को किस तरह, किन शब्दों में इस घटना का समाचार दूँगा।

सूर्य छिपते-छिपते जूनिया अपने क्वार्टर में पहुँच गया। वह ढोलकिया को साथ ले आया था। उसे चाय पिला, उसने एक पुराना कंबल देकर विदा करते हुए कहा—"लो भाई, इससे काम चलाना।"

सानी ने कहा—"पादरी साहब के पास ?"

"नहीं सानी, इस समय जाने की कोई ज़रूरत नहीं।"

"चोरी की खबर दोगे न ? ज़रूरी बात है। नौकरी ठहरी।"

"नौकरी है, मैं मानता हूँ। इसीलिये उतने दिन बालू में खुले आकाश के नीचे पड़ा रहा। चोरी होनी थी, हो गई। पुलिस का सारा परिश्रम व्यर्थ गया। अब पादरी साहब को खबर देने से थोड़े चोर यहाँ माल उगल देंगे ?"

"वह नाराज़ होंगे।"

"तो मैं क्या करूँ सानी ! मेले में सोने-खाने का ठिकाना न रहा। तमाम रास्ता पैदल चलकर आया हूँ। एक-एक हड्डी दुख रही है। मैंने जी लगाकर प्रचार किया है। सामान खो गया, तो मैं क्या करूँ ? मेरा भी तो बहुत कुछ उसके साथ चला गया। सुबह चला जाऊँगा। अभी डायरी भी तो लिखनी है।"

"हेडमास्टर साहब से ही मिल आओ। उनका बँगला तो दूर नहीं है।"

जूनिया राज़ी होकर हेडमास्टर साहब के पास गया। उनके

पास भी वह झूठी रिपोर्ट पहुँच चुकी थी। उन्होंने बहुत रूखेपन से कहा—"श्रीयुत जॉन, यह बात बड़े शर्म और बड़े कलंक की हुई।"

जूनिया उदास होकर घर लौट आया, और दूसरे दिन सुबह ही पादरी साहब के यहाँ गया।

पादरी साहब ने जूनिया को तीव्र दृष्टि से देखकर कहा—"आ गए तुम मिशन की बदनामी कर?"

जूनिया ने निडर होकर कहा—"कैसी बदनाम? मैंने हज़ारों मनुष्यों को प्रभु का पवित्र नाम सुनाया।"

पादरी साहब सोचने लगे—पाप कैसा प्रबल है!

जूनिया ने दोनो डायरियाँ उनकी मेज़ पर रक्खीं। पादरी साहब उत्तेजित होकर कुरसी से उठे, और दोनो डायरियाँ हाथ में ले फ़र्श पर पटक दीं!

"जूनिया भी कुरसी से उठ पड़ा, कहने लगा—"आखिर बात क्या है?"

पादरी साहब क्रोध से रक्तिम होकर बोले—"तुम्हारे-जैसे मनुष्य जब मिशन के प्रचारक हुए, तो लोग आ चुके मार्ग पर।"

"मेरा अपराध?"

"चुप रहो, मैं सब सुन चुका हूँ। उस पर अब कोई पैवंद नहीं लग सकता। तुम्हारे सारे छिद्र प्रकट हो गए।"

"आपको ग़लत खबर मिली है।"

"नहीं!" साहब ने मेज़ पर हाथ पटककर कहा।

"मैंने ईमानदारी से अपना काम किया है। चोरी हो गई, तो क्या मैंने की?"

"चुप रहो शैतान! कह दिया, मत बोलो।"

जूनिया के सिर पर मानो आकाश टूट पड़ा। वह सोचने लगा—हे भगवान्, इतनी मिहनत से नौकरी की, क्या इसी दिन के लिये!

पादरी साहब क्रोध से काँपने लगे थे। जूनिया ने भी जब उन्हें अपनी सफ़ाई सुनने के लिये बहरा पाया, तो वह भी क्रुद्ध हो गया। वह उत्तेजित होकर, पादरी साहब को सलाम किए विना ही, कमरे के बाहर चला गया। उसकी ठोकरों से फ़र्श पर पड़ी हुई डायरियाँ और भी अस्त-व्यस्त हो गईं।

पंचम खंड

शां

ति

पहला परिच्छेद

त्याग-पत्र

जूनिया अत्यंत क्रोध और तेज़ी के साथ पादरी साहब के कमरे से निकला। बरामदे में गुलाब की ऊपर से लटकती हुई डाली में उसका साफ़ा अटक गया, और खुलकर भूमि पर गिर पड़ा। वह साफ़े को भागते-भागते लपेटता चला।

पादरी साहब का कुत्ता सदैव जूनिया के स्नेह-संबोधन पर पूँछ हिलाता हुआ उसके निकट आ जाता था। आज लटकते हुए साफ़े के साथ जूनिया को असाधारण रीति से भागता हुआ देखकर भूँकते हुए उसका अनुसरण करने लगा।

जूनिया जला-भुना तो था ही। उसने मार्ग से एक पत्थर उठाया, और खींचकर कुत्ते के मारा। कुत्ता चुप होकर, सिर बचा भाग गया। पत्थर एक फूल के गमले पर पड़ा, जिससे उसका किनारा टूटकर भूमि पर गिर पड़ा।

वह उसी तेज़ी से राजमार्ग पर आया। न-जाने क्या बड़बड़ाता हुआ जा रहा था कि पीछे से एक लड़का चिल्लाया—"जूनिया डूम है!"

जूनिया ने पास की दीवार से एक पत्थर उखाड़कर लड़के पर फेंका। लड़का भाग गया। पत्थर ने म्युनिसिपैलिटी के लैंप का शीशा तोड़ डाला, और कदाचित् अपने दाम वसूल कर लेने तक उसमें मिट्टी का तेल नहीं भरा गया।

जूनिया और भी तेज़ी से भागकर अपने घर के निकट पहुँचा।

जेम्स प्रवेश-द्वार पर खड़ा था। जूनिया के आने पर उसे रास्ता छोड़ने में ज़रा देर हुई। बस, फिर क्या था, जूनिया ने ज़ोर से एक चपत उसके सिर में मारी। जेम्स रोता हुआ किचन में सानी के पास चला गया।

सानी ने पूछा—"क्या हुआ?"

"पापा ने मार दिया। कोई क़सूर नहीं किया। दरवाज़े पर चुप-चाप खड़ा था।"

"उन्हें तो बस यही सूझता है। न जाओ उनके निकट, यहीं बैठे रहो।"

जूनिया के मस्तिष्क में महाभयंकर उथल-पुथल मची हुई थी। वह बैठक में आकर पादरी साहब की दी हुई ग्रामर और अँगरेज़ी की किताब तलाश करने लगा। वे न-जाने कहाँ रख दी थीं। वह अनेक चीज़ों को गिराने और पटकने लगा।

गड़बड़ सुनकर सानी परदे की ओट से झाँकने लगी। देखा, पति-देवता की नाराज़ी का अंत न था। उन्होंने फ़र्श पर बहुत-सा सामान बिखरा दिया था। एक तसवीर की चौखट का शीशा तोड़ डाला था। एक प्लेट और दो चीनी के प्याले भूमि पर गिरकर टूट गए थे।

इतना उलझा हुआ और इतना चिड़चिड़ा जूनिया कभी नहीं दिखाई दिया था। उसने पादरी साहब की दी हुई ग्रामर और किताब खोज ली, और फाड़कर, उनके टुकड़े-टुकड़े कर फ़र्श पर फेक दिए। मुखाकृति से वह अभी अतृप्त ही दिखाई दे रहा था। उसकी दृष्टि मेज़ पर रक्खी हुई बाइबिल पर पड़ी। जिल्द पर अंकित सुनहरे अक्षरों में उसने पढ़ा—'धर्म-पुस्तक'।

जूनिया कहने लगा—"धर्म! धर्म कोई चीज़ नहीं। संसार की सरल और सीधी आबादी को ठगने के लिये एक शब्द। और ईश्वर! उसे भयभीत बनाए रखने के लिये एक शस्त्र!"

जूनिया के ऊपर उस समय अविश्वास की सघन छाया पड़ गई थी। स्वर्ग और मर्त्य सब उसे झूठे दिखाई देने लगे थे। वह बाइ-बिल की ओर लपका।

सानी यह सब कुछ चुपचाप ओट से देख रही थी। अब न रह सकी।

जूनिया ने बाइबिल पर हाथ रक्खा।

सानी घबरा उठी! उसने उसी क्षण कमरे में प्रवेश कर कातर कंठ से कहा—"स्वामी!"

जूनिया ने काँपकर हाथ खींच लिया।

सानी ने जूनिया के दोनो हाथ पकड़कर कहा—"तुम्हें क्या हो गया?"

"तू भी कहती है, तुझे क्या हो गया? मुझे कुछ भी नहीं हुआ है। सानी! तूने जूनिया के पैर नहीं देखे? तुषार ने उनमें खड़ी-पड़ी, आड़ी-तिरछी हर तरह की रेखाएँ खींच दी हैं। काँटों ने उनका प्रत्येक तिल छेद डाला है। उनमें रहने के लिये ठोकरों ने खोहें बनाई हैं, और उनमें बसने के लिये छालों ने गुम्मदें उठाई हैं।"

"स्वामी, आज आप यह क्या कह रहे हैं?"

"मैंने खाने-पहनने की चिंता न की। धूप की तेज़ी और हवा की तीक्ष्णता की ज़रा भी परवा न की। मैंने जीवन का मोह छोड़कर घने जंगलों से मार्ग निकाला, और मृत्यु का उपहास कर पहाड़ी की चोटियों पर पैर रक्खा।"

" आप पादरी साहब के पास गए थे?"

"मैंने प्रांत के चारो कोनों में प्रभु के वचन का बीज बोया। मैंने आलस नहीं किया। मैंने सदा अपने पापों के लिये क्षमा-प्रार्थना की है।"

"पादरी साहब ने क्या कहा?" सानी ने अधीर होकर पूछा।"

जेम्स प्रवेश-द्वार पर खड़ा था। जूनिया के आने पर उसे रास्ता छोड़ने में ज़रा देर हुई। बस, फिर क्या था, जूनिया ने ज़ोर से एक चपत उसके सिर में मारी। जेम्स रोता हुआ किचन में सानी के पास चला गया।

सानी ने पूछा—"क्या हुआ?"

"पापा ने मार दिया। कोई क़सूर नहीं किया। दरवाज़े पर चुप-चाप खड़ा था।"

"उन्हें तो बस यही सूझता है। न जाओ उनके निकट, यहीं बैठे रहो।"

जूनिया के मस्तिष्क में महाभयंकर उथल-पुथल मची हुई थी। वह बैठक में आकर पादरी साहब की दी हुई ग्रामर और अँगरेज़ी की किताब तलाश करने लगा। वे न-जाने कहाँ रख दी थीं। वह अनेक चीज़ों को गिराने और पटकने लगा।

गड़बड़ सुनकर सानी परदे की ओट से झाँकने लगी। देखा, पति-देवता की नाराज़ी का अंत न था। उन्होंने फ़र्श पर बहुत-सा सामान बिखरा दिया था। एक तसवीर की चौखट का शीशा तोड़ डाला था। एक प्लेट और दो चीनी के प्याले भूमि पर गिरकर टूट गए थे।

इतना उलझा हुआ और इतना चिड़चिड़ा जूनिया कभी नहीं दिखाई दिया था। उसने पादरी साहब की दी हुई ग्रामर और किताब खोज ली, और फाड़कर, उनके टुकड़े-टुकड़े कर फ़र्श पर फेंक दिए। मुखाकृति से वह अभी अतृप्त ही दिखाई दे रहा था। उसकी दृष्टि मेज़ पर रक्खी हुई बाइबिल पर पड़ी। जिल्द पर अंकित सुनहरे अक्षरों में उसने पढ़ा—'धर्म-पुस्तक'।

जूनिया कहने लगा—"धर्म! धर्म कोई चीज़ नहीं। संसार की सरल और सीधी आबादी को ठगने के लिये एक शब्द। और ईश्वर! उसे भयभीत बनाए रखने के लिये एक शस्त्र!"

जूनिया के ऊपर उस समय अविश्वास की सघन छाया पड़ गई थी। स्वर्ग और मर्त्य सब उसे झूठे दिखाई देने लगे थे। वह बाइ-बिल की ओर लपका।

सानी यह सब कुछ चुपचाप ओट से देख रही थी। अब न रह सकी।

जूनिया ने बाइबिल पर हाथ रक्खा।

सानी घबरा उठी! उसने उसी क्षण कमरे में प्रवेश कर कातर कंठ से कहा—"स्वामी!"

जूनिया ने काँपकर हाथ खींच लिया।

सानी ने जूनिया के दोनो हाथ पकड़कर कहा—"तुम्हें क्या हो गया?"

"तू भी कहती है, तुझे क्या हो गया? मुझे कुछ भी नहीं हुआ है। सानी! तूने जूनिया के पैर नहीं देखे? तुषार ने उनमें खड़ी-पड़ी, आड़ी-तिरछी हर तरह की रेखाएँ खींच दी हैं। काँटों ने उनका प्रत्येक तिल छेद डाला है। उनमें रहने के लिये ठोकरों ने खोहें बनाई हैं, और उनमें बसने के लिये छालों ने गुम्मदें उठाई हैं।"

"स्वामी, आज आप यह क्या कह रहे हैं?"

"मैंने खाने-पहनने की चिंता न की। धूप की तेज़ी और हवा की तीक्ष्णता की ज़रा भी परवा न की। मैंने जीवन का मोह छोड़कर घने जंगलों से मार्ग निकाला, और मृत्यु का उपहास कर पहाड़ी की चोटियों पर पैर रक्खा।"

" आप पादरी साहब के पास गए थे?"

"मैंने प्रांत के चारो कोनों में प्रभु के वचन का बीज बोया। मैंने आलस नहीं किया। मैंने सदा अपने पापों के लिये क्षमा-प्रार्थना की है।"

"पादरी साहब ने क्या कहा?" सानी ने अधीर होकर पूछा।"

"वही जूनिया के समस्त किए-धरे पर हरताल फेर देना चाहते हैं। वह नहीं जानते, जूनिया फिर सिर पर बोझ ले जाने और जूठा खाने को तैयार हो जायगा, लेकिन अपमानित होकर यहाँ रहना नहीं चाहता।"

"उन्होंने क्या कह दिया ?"

"कहते हैं, ठीक तरह काम नहीं करते, बदनामी कराते हो। और भी न-जाने क्या-क्या कह दिया। कुछ सुना नहीं, कुछ समझने से भी रह गया।"

सानी के मुख पर चिंता के भाव प्रकट हुए।

"बहुत नाराज़ हुए। मुझे शैतान तक कह डाला !"

"हैं, वह तो बड़े नेक प्रसिद्ध हैं !"

"जब मनुष्य क्रोध से अंधा हो जाता है, तब फिर सारी नेकी धरी रह जाती है। मेरा तो ऐसा अनुभव है सानी ! जब तक आदमी ख़ुद शैतान के क़ाबू में नहीं आ जाता, तब तक दूसरे को शैतान नहीं कहता।"

"तुमने पूछा नहीं कि मेरा क़सूर क्या है ?"

"क्यों नहीं पूछा ?"

"फिर ?"

"कहने लगे, चुप रहो।"

"तब क्या सोचा है ?"

"सोचा क्या है। जूनिया को नौकरी की परवा नहीं। मैं अभी इस्तीफ़ा लिखकर दे आता हूँ। तुम भी साथ चलो, जेम्स भी चलेगा। इन नगरों में क्या रक्खा है ? छल-कपट, डाह और जलन ! गंदी हवा और गँदला पानी !"

"आपको हो क्या गया स्वामी। जेम्स पढ़-लिखकर आदमी बन रहा है, उसे स्कूल छुड़ाकर आप कहाँ ले जायँगे ? पादरी साहब ने

कुछ कह दिया, तो क्या हो गया। ऑफ़िसर हैं, बड़े आदमी हैं। क्रोध शांत हो जायगा, फिर उसी प्रेम से मिलने लगेंगे।"

जूनिया काग़ज़-क़लम ढूँढ़ते हुए कहने लगा—"तू जूनिया के स्वभाव से परिचित है सानी! वह बराबर सहन करता हुआ चला जाता है, पर सहनशीलता की भी कोई हद होती है। तू जानती है, मैंने मेले में किस तरह प्रचार किया। कभी लालच नहीं किया, तनख्वाह बढ़ा देने की प्रार्थना नहीं की।"

"यह क्या लिखने लगे?"

"तुम्हारा और अपना इस्तीफ़ा लिख रहा हूँ।"

सानी रोने लगी।

"तू कमज़ोर दिल की है, इसी से रोने लगी। जूनिया अपने निश्चय का पक्का है। मैं अभी दो बैलगाड़ियाँ किराए पर ले आता हूँ, और सारा सामान लादकर चल देता हूँ।"

सानी जूनिया के पैरों पर गिरकर बोली—"नहीं।"

"तू पगली है। नौकरी की जड़ पत्थर पर है। यह घर हमारे बाप-दादों का नहीं। एक दिन ज़रूर ही यहाँ से जाना है, आज ही क्यों न सही।"

"कहाँ जायँगे स्वामी! बाप-दादों का बनाया घर कहाँ रक्खा है? पादरी साहब ने आपसे नौकरी छोड़कर चल देने को थोड़े कहा है।"

"तो क्या तू चाहती है कि मैं तब तक यहाँ पड़ा रहूँ, और उनकी ठोकरों से निकाला जाऊँ?"

"स्वामी!" कहकर सानी फिर जूनिया के पैरों पर पड़ी।

जूनिया ने उसके हाथ झटक उसे एक ओर गिरा दिया, और कहने लगा—"मैं लिखने लगा हूँ, अगर कुशल चाहती है, तो चुप रह।"

सानी रोती हुई डेज़ी के पास चली गई। जूनिया ने एक इस्तीफ़ा लिखा, उसे फाड़ डाला। फिर लिखा, फिर फाड़ डाला। तीसरी बार लिखा, और उसे लिखकर हेडमास्टर साहब के पास ले चला। वहाँ जाकर देखा, उनके समीप सानी को लेकर डेज़ी खड़ी थी।

जूनिया को आते देखकर सब चुप हो गए। जूनिया ने बहुत गंभीर होकर हेडमास्टर साहब को वह पत्र दिया।

वह बोले—"यह क्या है ?"

"मेरा और मेरी स्त्री का इस्तीफ़ा।"

"कारण ?"

"इसमें साफ़-साफ़ लिखा है, पढ़ लीजिए।"

"आपको हो क्या गया मिस्टर जॉन। लोग हज़ारों रुपया ख़र्च कर अपनी संतान की शिक्षा का प्रबंध करते हैं। ईश्वर की कृपा से आपके यहाँ सब कुछ है। धीरज से काम लीजिए। कहीं ऐसा न हो, आपकी जल्दी से जेम्स का जीवन नष्ट हो जाय !"

डेज़ी ने भी कहा—"आप भूल कर रहे हैं, पीछे पछताना पड़ेगा।"

जूनिया ने कुछ विचारकर कहा—"तो जेम्स यहीं रहे, लेकिन जूनिया अब यहाँ नहीं रहेगा। उसका अन्न-जल उठ गया।"

डेज़ी कहने लगी—"फिर तो सानी भी यहीं रहेगी।"

"लाइए, मैं इस्तीफ़े से उसका नाम काट देता हूँ।" कहकर जूनिया ने अपना इस्तीफ़ा उठाया, और जहाँ-जहाँ सानी का उल्लेख था, उसे काट दिया।

डेज़ी सानी को लेकर अपने कमरे में आई, और कहने लगी—"मिस्टर जॉन बहुत क्रोध में हैं। जाने दो, दो-चार दिन इधर-उधर घूम आएँगे। तबियत दुरुस्त हो जायगी, फिर लौट आएँगे।"

सानी डेज़ी के प्रति कृतज्ञता प्रकट कर चली।

हेडमास्टर साहब ने जूनिया से कहा—"देखिए, मिस्टर जॉन, क़ायदे के अनुसार आपको यह इस्तीफ़ा पादरी साहब को ही देना चाहिए।"

"मैं उनके पास अब नहीं जाऊँगा। आप कृपा कर भेज देंगे, ऐसा विश्वास करता हूँ।"

"पादरी साहब आपसे नाराज़ हैं। उन्होंने आपके खिलाफ़ कुछ बुरी बातें सुनी हैं।"

"मैंने कभी उनके ख़ुश होने की परवा नहीं की, मुझे उनकी नाराज़ी का भी भय नहीं। यह इस्तीफ़ा उनके पास भिजवा दीजिएगा। मैं चला। विदा, सलाम।" कहकर जूनिया एकाएक उठा, और तुरंत चला गया।

हेडमास्टर साहब सोचने लगे—आदमी सनकी है, पर मिहनती है। पादरी साहब ने इसके ख़िलाफ़ कुछ बातें ज़रूर सुनी हैं, पर पूछने पर बताईं नहीं।

जूनिया ने घर पहुँचकर पुकारा—"जेम्स!"

जेम्स विनीत भाव से सामने आकर खड़ा हुआ।

जूनिया ने कहा—"जेम्स, मैं चला।"

"कहाँ पापा?"

"उसके नाम का प्रचार करने।"

"कहाँ?"

"जहाँ पैर ले जायँगे।"

प्रचार करने को जाने की बात सुनकर सानी ने समझा, कदाचित् वह हेडमास्टर साहब से कोई समझौता कर आए हैं। वह भी तुरंत वहाँ आ पहुँची।"

जूनिया ने कहा—"बेटा, जूनिया की पाँचो आज्ञाओं को भूल

भी जाओ, तो कोई परवा नहीं, पर परमेश्वर की दसो आज्ञाओं की चिंता करना।"

सानी बोली—"आपने इस्तीफ़ा वापस लिया?"

"नहीं, सानी!"

"फिर प्रचार कैसा?"

"प्रभु के नाम का।"

"नौकरी?"

"वह सिर का भार है। वेतन का लालच उसे और भी भारी कर देता है।"

सानी कुछ न समझी, पर इतना ज़रूर समझी कि उसका क्रोध कुछ शांत ज़रूर हो गया है।

जूनिया ने कहा—"खाना तैयार है?"

"हाँ।"

खा-पीकर जूनिया ने कहा—"सानी! अब वक़्त नहीं। मेरा झोला लाओ।"

सानी झोला लेने गई, और जूनिया ने फ़र्श पर बिखरे हुए उन पुस्तकों के फटे पत्रों को देखा, और आह भरकर कहा—"अब ये न जुड़ सकेंगे, और इनके बीच में दूरी बराबर बढ़ती ही जायगी।"

जूनिया ने कंधे पर झोला डालकर कहा—"बाइबिल?"

सानी ने मेज़ पर से बाइबिल उठाकर पति को दी। जूनिया ने उसे झोले में रखकर कहा—"सानी! जेम्स! बिदा, जाता हूँ।"

सानी की आँखों में आँसू भर आए।

जूनिया बोला—"अपने पति की इस शुभ यात्रा को मोह के आँसुओं से अपवित्र न करो।"

जेम्स अधीर होकर बोला—"पापा!"

"हाँ बेटा, दूर जंगल में उसकी आवाज़ है। वह कहता है,

चला आ, मैं तेरे पापों का भार हलका कर तेरे पैर के घावों में मरहम-पट्टी लगाऊँगा। उसी ने फिर पुकारा, तू सुख-दुख के जाल को कब तक बुनता रहेगा। आ, मेरे पीछे हो ले, मैं तुझे मुक्ति दूँगा। उसकी कैसी प्रेम-भरी वाणी है, उसका कैसा शांतिदायक और श्रांतिहर स्पर्श है। तुम सुनती हो सानी!"

सानी विस्मय-मुग्ध खड़ी रही।

"तुम सुनते हो जेम्स, कितने निकट, कितने पास!"

जेम्स भी नीरव था।

जूनिया ने लाठी उठाई, नंगे पैर मार्ग में बढ़ा दिए, और कहने लगा—"हे प्रभु! तुम्हें स्वयं आना पड़ा। जब तुम सामने हो, तो मुझे मुड़कर घर की ओर देखने की क्या आवश्यकता?"

जूनिया मार्ग में आगे बढ़ गया। सानी और जेम्स उसे टक लगाकर देखते रहे।

दूसरा परिच्छेद

गाँव की ओर

राजधानी के क्वार्टर में जूनिया केवल इतना ही सोच सका था कि जाऊँगा। अब चलते हुए उसने मन में विचारा, कहाँ जाऊँ?

वह जाते-जाते नगर के बाहर एक टीले पर आया। एक सुविशाल तून के पेड़ के चारो ओर एक चबूतरा बना हुआ था। वहाँ बैठ गया। सामने पर्वत-श्रेणी की चोटी पर बसी हुई राजधानी दिखाई दे रही थी। आकाश के आगे ऊँची-ऊँची अट्टालिकाओं की रेखाएँ दृष्टिगोचर थीं।

नगर का समस्त रव एक दूसरे में मिलकर कुहासे की भाँति राजधानी के ऊपर पड़ा था। उसके ऊपर स्कूल का मृदु-मोहक गति से बजता हुआ घंटा जूनिया के नगर-विरक्त मन से मानो कह रहा था—"आ, आ, चला आ!"

अनेक दिनों तक नगर के कोलाहल को दबाकर उसने स्वयं भी वह घंटा बजाया था। फिर अनेक वर्षों तक जूनिया उसका आज्ञाकारी रहा। फिर पादरी साहब की बात मान लेने के लिये उस घंटे की अवहेलना कर दी।

जूनिया फिर उस घंटे में उसकी पुकार सुनने लगा, वह प्रेम-मृदु कंठ से मानो कह रहा था—"आ, आ, चला आ! चला आ जूनिया! यहाँ तेरे स्नेहमय स्त्री-पुत्र हैं, मित्र, सहकारी और स्वामी हैं, एवं परिचित जनता है। वहाँ कहाँ जायगा। ग्रीष्म के हरियाली-विहीन पथों में और हेमंत के छायावृत तुषार में! काँटे

जूनिया
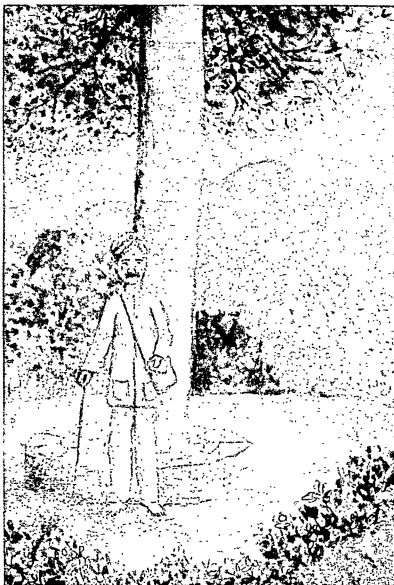
वह राजधानी की ओर पीठ किए सोचने लगा—"किधर जाऊँ ?"

गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस, लखनऊ

के ऊपर नंगा पैर और बरसात के नीचे नंगा सिर लिए ? लौट आ जूनिया ! तेरी चिंताएँ पादरी साहब अपने हृदय में रखते हैं, और तेरी उन्नति हेडमास्टर साहब अपने मस्तिष्क में।"

जूनिया मन-ही-मन कहने लगा—शैतान ! तू मेरे सामने से दूर हो, तू मुझे बहकाने आया है ?

घंटा अभी बंद नहीं हुआ था। जूनिया मानो उसमें फिर सुनने लगा—अंत में किसके लिये ? पादरी साहब ने कुछ कह दिया, तो हो क्या गया ? उनकी नेकी नहीं देखता ? आ, आ, चला आ ! संसार सर्वत्र एक-सा ही है। कुछ छोड़कर, कुछ नहीं मिलता। कहाँ जायगा ? ठोकर तेरे पैर में है, दुःख तेरी छाया में और अशांति तेरी साँस में।

जूनिया ने उठकर कहा—"तू फिर आ गया, झूठा है। तू न जायगा, मैं ही चल देता हूँ।"

जूनिया ने राजधानी की ओर पीठ की। सब कुछ अंतर्हित हो गया। सामने चीड़ के हरित वन में बादामी रंग का पहाड़ी पथ उतर रहा था। उससे दूर, धूसर पर्वतों के ऊपर, रेशमी बादलों के टुकड़े, सिर पर आकाश की उज्ज्वल नीलिमा में उड़ते हुए पक्षी थे, और वनों में चरते हुए पशु।

वह राजधानी की ओर पीठ किए सोचने लगा—किधर जाऊँ ?

स्कूल का घंटा उसे सुनाई ही दे रहा था—"ठन-ठन-ठन !"

जूनिया की इच्छा पीछे मुड़कर देख लेने को हुई, पर उसने पैर आगे बढ़ा ही दिया, और बराबर पथ में उतरने लगा। चीड़ की रेखाओं ने बढ़कर सारी राजधानी को ढक लिया, और घंटे का रव पर्वतों की गहराई में डूब गया।

नए देश और नए दृश्य ने जूनिया के विचारों को हटाकर

अपनी ओर आकर्षित किया। वह बराबर उतराई में चलता गया। अब उसे पहाड़ों के निम्न-भाग में बहती हुई दो नदियों के प्रवाह की प्रतिध्वनि सुनाई देने लगी थी। उसके चारो ओर खेत दिखाई देने लगे थे, और चारो ओर बिखरे हुए गाँवों के समूह।

जूनिया मन में कहने लगा—कैसी स्वर्गीय शांति है। बड़ी आकांक्षा यहाँ मनुष्य के मस्तक पर आग नहीं रखती। ये भूमि में बीज बोकर आकाश की ओर देखते हैं; और जब बाल पक जाती है, तो भिखारी की झोली में भी कुछ रखते हैं। इनका दिन इनके परिश्रम से पूर्ण होता है, और इनका परिश्रम इनके भोलेपन से।

जूनिया की उतराई समाप्त हुई, और वह गाड़ी की सड़क पर आया, और सड़क की दीवार पर बैठ गया। दाहनी तरफ़ तीन-चार दूकानें और बाईं ओर नदी का विस्तृत पाट। नदी के किनारे नाज का भार सिर पर रखकर कोई पनचक्की को जा रहा था, कोई पशुओं को पानी पिला रहा था, कोई कपड़े धो रहा था, और कोई रस्सी और हँसिया बग़ल में दबाए, वंशी में स्वर भरते हुए वन का पथ ले रहा था। एक मछुआ नदी के बीच में एक सुविशाल पत्थर पर बैठा जाल बुन रहा था।

गाड़ी की सड़क पर किराने से लदी हुई कई बैलगाड़ियाँ जा रही थीं। उनके पहियों की अलस चूँ-चूँ को बैलों के गलों में बँधी हुई घंटियाँ अपने सुमधुर नाद से प्रोत्साहन दे रही थीं। वह गाड़ीवान अपने पथ-विचलित बैल से कह रहा था—"ठहर-ठहर, तू गड्ढे में गिरे, तुझे बाघ खाय!"

कुछ गाड़ीवान दूकानों की बग़ल में बैलों को विश्राम देकर खुले आकाश के नीचे रोटियाँ पका रहे थे। कुछ लोग दूकानों में बैठकर बातें कर रहे थे, कुछ तंबाकू पी रहे थे, और शेष सौदा खरीद रहे थे।

जूनिया के निकट ही सड़क के किनारे, एक पेड़ के नीचे, एक अंधा अपनी मैली और ठीक बीच में फटी चादर बिछाए बैठा था। पथिकों के पैर की आहट पाकर कह रहा था—"आँखें बड़ी नियामत हैं। हे आँखवालो! इस अंधे पर भी दयार्द्र दृष्टि डालो।"

जूनिया ने बैठे-बैठे सोचा—इस मरु-जगत् में जूनिया भी ठीक इसी भिखारी के समान है। वह अंधा है, उसने अपनी फटी और मैली चादर सड़क के किनारे बिछा रक्खी है। कुछ लोग दया कर उसके कपड़े में दाना-पैसा फेंक जाते हैं। शाम को वह अपनी चादर के कोने समेट, सब कुछ गिरा घर लौटता है। वह अपनी चादर का छिद्र नहीं देखता, और अपने फूटे भाग के लिये रोता है!

जूनिया को समीप ही खाँसते हुए सुनकर अंधा कहने लगा—"बाबा! कुछ अंधे को भी।"

जूनिया अपनी जेब से एक पैसा निकालकर अंधे के निकट गया, और कहने लगा—"अंधे! तू चादर पर पैसे तो जमा करता है, पर तुझे उसका हाल भी मालूम है?"

अंधे ने विस्मय की हँसी हँसकर कहा—"नहीं!"

"तेरी यह चादर बीच में फटी है, निश्चय ही तुझे दिन-भर में जितना मिलता है, उतना शाम को तेरे घर नहीं पहुँचता।"

अंधे ने निश्चय के साथ कहा—"लेकिन मैं इस पर कुछ जमा नहीं करता। मेरे कान तेज़ हैं, और मेरी उँगलियाँ स्पर्श से मालूम कर लेती हैं। जो भी इस पर पड़ता है, मैं उसे उसी समय टटोलकर रख लेता हूँ।"

जूनिया ने उसे पैसा देकर कहा—"अंधे, तू जूनिया से अधिक सुखी है। तू आँख गँवाकर भी देखता है, और जूनिया आँखों के रहते हुए भी अंधा है।"

अचानक सिरे की दूकान से आवाज़ आई—"जूनिया मास्टर ! जूनिया मास्टर !"

जूनिया दौरा करते समय अक्सर उस मार्ग से आता-जाता था। एक दूकानदार से उसका विशेष परिचय हो गया था। उसी ने आवाज़ दी थी।

जूनिया ने हँसते हुए उसकी ओर देखा।

दूकानदार फिर कहने लगा—"क्यों भाई ! ऐसी नाराज़ी ?"

जूनिया दूकान की ओर बढ़ता हुआ बोला—"जूनिया पथ का सबसे दुर्बल प्राणी, वह किसी से कब नाराज़ होने लगा ?"

"आओ बैठो, तंबाकू पियो।" कहकर दूकानदार ने उसे बैठने को एक तिपाई दी।

जूनिया कृतज्ञता स्वीकार करते हुए बैठ गया।

दूकानदार ने पूछा—"क्या आज घर का दौरा है ?"

जूनिया मार्ग में केवल चला आ रहा था। कुछ निश्चय नहीं था कि कहाँ जायगा। दूकानदार से प्रेरणा पाकर कह उठा—"हाँ, लेकिन इस ग़रीब का घर कहाँ है ? कहीं नहीं।"

"अरे भाई, जन्म-भूमि तो होगी, कोई भाई-बिरादर तो होंगे ?"

कुछ देर इधर-उधर की बातें कर जूनिया ने एक दियासलाई की डिबिया ख़रीदी। पथ निश्चित हो गया था, और उसने चौमुखिया का मार्ग लिया।

वह दिन-भर चलता रहा, और शाम को जाकर चौमुखिया में पहुँच गया। वह सीधा गुसाईंजी के बेटे की दूकान की ओर चला। उसने उसे दूर ही से पहचानकर कहा—"आओ जी, जूनिया मास्टर, सलाम। आज कहाँ का दौरा है ?"

"सलाम गुसाईंजी, आप ही की सेवा में आया हूँ।"

गुसाईं ने जूनिया के नंगे पैरों की ओर देखकर कहा—"यह

क्या हाल है ? निन्नानवे के फेर में पड़ गए मालूम देते हो। आओ, बैठो।"

जुनिया बैठ गया, और कहने लगा—"कोई हेर-फेर नहीं। मैं नौकरी छोड़कर आ गया।"

"बाल-बच्चे ?"

"लड़का स्कूल में पढ़ता है। सानी लड़कियों के स्कूल में अध्यापिका है। मैं तो दोनो को भी लिए चला आ रहा था, पर लोगों ने राय नहीं दी।"

"नौकरी क्यों छोड़ दी ?"

"वक्त आ गया।"

"मालिकों ने बुरा बर्ताव किया ?"

"ऐसा भी कहने को जी नहीं चाहता।"

"जगह तोड़ दी गई ?"

"नहीं, यह भी नहीं।"

"फिर ?"

"भाई, शहर में रहते-रहते घबरा गया। प्रकृति के एकांत में कदाचित् कुछ शांति मिले।"

"क्या काम करोगे ?"

"पेट भरने के लिये कुछ-न-कुछ काम करना ही पड़ेगा। शेष समय में प्रभु के गुण गाऊँगा, और उसी के नाम का प्रचार करूँगा।"

"अरे, क्या नाम का प्रचार करोगे ? तुम्हें मिल गया, और अब दूसरों को भी मिलेगा !"

"गुसाईंजी, इसमें असंतुष्ट होने की बात ही क्या है। लोगों से सच बोलने और बरतने को कहूँगा, छल-कपट से दूर रह दीन-दुखियों की सहायता करने की प्रार्थना करूँगा। क्या

सभी धर्म एक ही केंद्र में नहीं मिल जाते हैं। संसार में सच्चाई और ईमानदारी बढ़ जायगी, तो क्या प्रभु का राज्य निकट न आ जायगा ?"

"लेकिन तुम्हारे पादरी लोग तो कहते हैं, केवल एक मसीह की शरण में जाने से ही मुक्ति मिलेगी, अन्यथा नहीं।"

"मसीह का अर्थ मुक्तिदाता है, जो भी मुक्ति दे, वही मसीह है। भाषा की भिन्नता से प्रभु में भेद नहीं पड़ सकता। 'केवल एक मुक्तिदाता' इन शब्दों में केवल एक पर इसीलिये ज़ोर दिया जाता है कि मन में दुविधा न हो, और विश्वास बढ़े।"

"जूनिया, देखता हूँ, तुम दार्शनिक हो गए हो। कहने का साहस तो होता नहीं, बात तुम्हारे लाभ की है।"

"क्या, कहिए न ?"

"भाई, जब से तुम गए, झरने के निकट हमारे खेत सूखे ही रह गए। जब यहाँ रहने का विचार कर ही आए हो, तो फिर उन्हें हरा-भरा करो, और अपने पेट की चिंता से मुक्ति पाओ। अरे, स्वर्ग की मुक्ति से यह मुक्ति ही प्रधान है।"

"गुसाईंजी, आपके वे खेत सब सानी ही ने आबाद किए थे। मेरी शक्ति के बाहर की बात है।"

"हाँ, तुम तो हल चलाना तभी छोड़ चुके थे, अब तो बाबू साहब हो, उपदेशक हो !"

"नहीं, हल चलाने को बुरा नहीं समझता। संसार के सब छोटे कामों में परमेश्वर का वरदान है, और वे संतोष के पसीने से पवित्र हैं।"

"फिर ?"

"थोड़ा-बहुत राजधानी में स्कूल का काम किया है, वही यहाँ भी करूँगा। कहीं एक कमरा दे दीजिए। दिन में पाँच-सात लड़कों को

घेरकर वहाँ पाठशाला खोलूँगा, और रात को उसी में विश्राम करूँगा।"

"हाँ, बात तो ठीक है। मेरे भी दो छोटे-छोटे लड़के हैं। स्कूल यहाँ से दूर है, फिर मैं अभी उन्हें वहाँ भेजना भी नहीं चाहता। मैं सोच ही रहा था कि कोई मास्टर मिले, तो उन्हें घर ही पर पढ़ाऊँ।"

"तब फिर क्या चिंता है। मेरे रहने का ठिकाना कर दीजिए।"

गुसाईंजी ने विचारकर कहा—"रहने का ठिकाना भी हो जायगा।"

"अभी हो जाता, तो और भी उत्तम बात थी।"

गुसाईंजी ने कहा—"हमारी उस सामने की दूकान में, जहाँ दरज़ी बैठता है—"

"उसके बग़ल का कमरा?"

"हाँ। जब तक वह किराए पर नहीं उठता, तब तक वहाँ रहो, फिर किसी दूसरी जगह तुम्हारा इंतज़ाम कर दिया जायगा।"

दूसरे ही दिन से चौमुखिया में जूनिया की पाठशाला खुली। धीरे-धीरे उसके पास पंद्रह-बीस लड़के आने लगे। जूनिया दस से तीन बजे तक उन्हें बड़े स्नेह और परिश्रम से पढ़ाता। वह प्रार्थना कर स्कूल आरंभ करता, और प्रार्थना कर शेष करता। वह हिंदी और गणित के अतिरिक्त उन्हें अँगरेज़ी भी पढ़ाता। इतवार के दिन पाठशाला बंद रखता, और उस दिन सुबह एक घंटा लड़कों को बिना पुस्तकों के जमा कर गिरजा करता। वह गाना गाता, और लड़कों से भी गवाता। कुछ उपदेश करता, कुछ पढ़ता और गिरजा समाप्त कर देता था।

इसी प्रकार तीन-चार महीने बीत गए। आरंभ में कुछ लड़कों के अभिभावकों को जूनिया की प्रचार-वृत्ति खटकने लगी। पर जब

उन्हें उसके अंदर कोई कुचेष्टा नहीं दिखाई दी, तो वे निश्चिंत हो गए।

चौमुखिया में एक नया दूकानदार आ बसा। जूनिया के परिश्रम और सरलता ने उसका ध्यान खींचा। वह नित्यप्रति जूनिया के यहाँ आने-जाने लगा। वह उसके इतवार के गिरजे में भी शामिल होता। वह जूनिया को शुद्ध कर हिंदू बना लेने की चिंता में था। जूनिया के तैयार न होने पर वह जूनिया से बहस करता, उसे बनाता और चिढ़ाता था।

जूनिया उससे कभी बहस में नहीं जीतता था, और हर रोज़ धार्मिक प्रश्नों को बहस से परे रखने का निश्चय करता। लेकिन वह दूकानदार जूनिया की दुर्बलताओं से परिचित हो गया था, कुछ इस प्रकार बातों का सिलसिला जारी करता कि जूनिया लाचार होकर बहस के दलदल में फँस जाता।

उस दिन उसने फिर आकर जूनिया से कहा—"जूनिया, आश्चर्य है, तुम शुद्धि के लिये क्यों तैयार नहीं होते?"

"भाई, जब मैं नित्य ही प्रभु के पैरों पर अपने पापों की क्षमा माँगने के लिये गिड़गिड़ाता हूँ, तो क्या उससे शुद्ध न हो जाऊँगा?"

"तुम्हें हिंदू बनाकर अपने दल में मिला लेंगे।"

"इस प्रकार मेरे विश्वास को चूर-चूर कर आपको क्या लाभ होगा?"

"अपना एक भाई और बढ़ेगा।"

"क्या भाई बनने के लिये एक ही धर्म का होना भी आवश्यक है। फिर धर्म तो सब एक ही हैं। आप मुझे क्यों अपना भाई नहीं समझते? मैं तो आपको भाई समझता हूँ, फिर आप मेरे लिये क्यों अपने मन में घृणा का भाव रखते हैं?"

"क्योंकि तुम हिंदू नहीं हो।"

"हिंदू सच बोलने को कहते हैं, मैं भी सच बोलने की कोशिश करता हूँ, तो फिर हिंदू क्यों नहीं।"

"तुम्हारे सिर पर चोटी नहीं।"

जूनिया ने दीर्घ श्वास लेकर सिर पर से अपना साफ़ा उतारा, और कहा—"ये धर्म के बाहरी लक्षण हैं।"

"बाहर का भीतर के साथ अटूट संबंध है।"

"पर शोक है, जूनिया का यौवन उसे धोका देकर चला गया। वृद्धावस्था ने उसके सिर के बालों को उड़ाकर उसे गंजा बना दिया है। उसमें अब किस प्रकार चोटी उगाई जा सकती है।" कहते हुए जूनिया ने अपने गंजे और चमकीले सिर पर हाथ फेरा।

दूकानदार पहली बार पराजित हुआ। जूनिया अपनी सूझ के लिये मन-ही-मन प्रसन्न हो उठा।

दूकानदार ने बहुत नाराज़ होकर कहा—"अच्छा, देखना जूनिया, तेरी पाठशाला न उजाड़ दूँ, तो कहना। चौमुखिया में तेरा रहना दुश्वार न कर दूँ, तो नाम बदल देना। फिर होगा तेरा प्रचार!"

तीसरा परिच्छेद

पश्चात्ताप

उस दूकानदार ने सचमुच जूनिया को बहुत तंग करना शुरू कर दिया। जूनिया जब उसकी दूकान पर जाता, तब वह उसका साफ़ा गिरा उसकी चमकती हुई नरम खोपड़ी को चपतियाता। देखा-देखी उसकी दूकान पर बैठनेवाले लोगों ने भी उसमें हाथ बँटाना शुरू किया।

जंगल, पथ, पानी के सोते, दूकान, खेत आदि में जहाँ भी जूनिया उन्हें मिल जाता, वे उससे छेड़खानी करते। जूनिया ने लाचार हो घर से बाहर निकलना बहुत कम कर दिया। वह अपने मन में कहता—दिन-भर इतने लड़कों में विद्या का प्रचार करता हूँ, उन्हें ईमानदारी करने का उपदेश देता हूँ। यह क्या मेरे लिये कम काम है। मुझे उन लोगों से मिलने की ज़रूरत ही क्या है? वे बातों में ही इतना अमूल्य समय काट डालते हैं, और देखते नहीं, उनके ऊपर शैतान के परों की छाया है।

उन लोगों की दृष्टि से बचने के लिये जूनिया रात ही उठ जाता, और जंगल की ओर चला जाता। शौचादि से निवृत्त हो घर आते समय कुछ लकड़ियाँ बीन लाता। घर आकर चाय बनाता, और आठ बजे तक धार्मिक किताबें पढ़ता। फिर खाना बनाता, और खा-पीकर दस बजे से अपना स्कूल आरंभ करता।

उस दिन जूनिया की लालटेन में तेल नहीं रहा। वह गुसाईंजी की दूकान पर आया। वहाँ तेल नहीं मिला, और भी कहीं नहीं

मिला। जूनिया को विवश होकर उसी दूकानदार के पास जाना पड़ा।

दूकानदार ने जूनिया को देखकर कहा—"आइए मुक्तिदाताजी, आज बोतल लिए कहाँ डोल रहे हो?"

"आप व्यर्थ ही प्रभु के नाम का उपहास करते हैं। देखिए, समस्त कुएँ, बंबे, नदी, नाले, ताल, बावली, लोटे, गिलास, कमडल, टंबरल आदि में एक ही मेघ का पानी है।"

दूकानदार ने कहा—"और इस बोतल में?"

"मिट्टी का तेल दे दो।"

"जब कहीं न मिला, तब यहाँ आते हो।"

"गुसाईंजी दे देते हैं, बहुत दिनों से उन्हीं के यहाँ से खाता चला आया हूँ।"

"मुफ़्त थोड़े देते हैं; उनके लड़कों को पढ़ाता भी तो है।" एक दूसरा आदमी बोला।

दूकानदार कहने लगा—"महीने में कुल स्कूल की फ़ीस कितनी हो जाती है? हो जाती है तीस रुपए?"

"जूनिया को इतने रुपए से क्या करना है? गुज़र हो जाती है। उस भगवान् की महिमा है।" कहकर उसने बड़े भक्ति-भाव से आकाश की ओर निहारा।

दूकानदार ने धीरे-धीरे कहा—'सिड़ी होऽऽ।"

जूनिया—"क्या कहते हो?"

"कुछ नहीं, कहता हूँ, कितना तेल लोगे?" कहकर दूकानदार ने अपनी दूकान पर बैठे हुए एक मित्र को भ्रू-कुंचन कर बुलाया।

"यह बोतल भर दो।"

"लेकिन एक बात है। मेरा तेल निकालने का पंप बिगड़ गया।

तुम तेल का कनस्तर उठाकर उँडेलो। मैं तुम्हारी बोतल में फूल लगाकर उसे भर दूँगा।"

"तेल भूमि पर गिर जायगा।"

"नहीं गिरेगा, मैं वहाँ भी बर्तन लगा दूँगा।"

जूनिया दोनो हाथों से कनस्तर उठा तेल उँडेलने लगा। उसके चिकने सिर से साफ़े का एक घेरा खिसककर उसकी भौंहों पर आ गया। दूकानदार ने मित्र को कुछ मूक भाषा में समझाया। उसने जूनिया के पीछे आ, बिजली की गति से उसका साफ़ा खींच, आँखों पर उस घेरे की पट्टी बना दी, और उसके सिर में दो-चारों को और बुलाकर तड़ातड़ चपत जड़ दिए। दूकानदार भी एक चपत लगा, भोला मुँह बनाकर बैठ गया। सब लोग भाग गए।

त्रस्त हो, मुँह फुलाकर जूनिया ने चारो ओर देखा। वह कनस्तर ज़मीन पर पहले ही रख चुका था। साफ़ा सँभलते हुए बोला—"अच्छी बात नहीं, कौन था?"

हँसी दबाकर दूकानदार बोला—"मालूम नहीं, कौन था। मेरा ध्यान तो इधर तेल पर था।"

जूनिया ने शंकित मुख कर अपनी खोपड़ी पर हाथ फेरा। सिर पर कुछ चिकनाई अधिक मालूम दी। हाथ मलकर सूँघा, तो मिट्टी के तेल की बू पाई। कहने लगा—"आप भी थे?"

"कभी नहीं।"

"आपका हाथ मिट्टी के तेल से सना है, मेरे सिर में भी महँकता है।"

"तुम्हारा हाथ ख़ुद मिट्टी के तेल में लगा है, वही महँकता है। लो, तुम्हारी बोतल मैंने भर दी।"

जूनिया ने बोतल ली। पैसे देते हुए कहने लगा—"देखो, इस तरह प्रभु के सेवकों को नहीं छेड़ा जाता।"

जूनिया घर लौटा। मार्ग में सोचने लगा—मुझे इन शैतानों की गली में जाने की क्या ज़रूरत? मैं अँधेरे ही में बैठा रहूँगा, मुझे स्वीकार है, पर उनकी ओर कभी न जाऊँगा। कान पकड़ता हूँ। कभी न जाऊँगा।

घर आ, लालटेन जलाकर जूनिया कहने लगा—"हे भगवान्! मैंने इस दूकानदार का क्या बिगाड़ा है? इसकी दूकान से सौदा नहीं ख़रीदता हूँ, क्या यह इसीलिये मुझसे चिढ़ता है?"

उस दिन से जूनिया उन लोगों के बीच में कभी नहीं गया।

तीन-चार दिन बाद एक दिन जूनिया जब अपने स्कूल में पढ़ा रहा था, उसके गाँव के गुसाईंजी का लड़का उसे खोजता हुआ चला आया।

जूनिया चटाई बिछा, लड़कों को बिठाकर पढ़ा रहा था। उसके कमरे से मेज़-कुरसियों का पलायन हो गया था। वह ख़ुद भी एक कंबल पैरों के नीचे डालकर फ़र्श ही पर बैठा था।

गुसाईंजी के लड़के ने आते ही कहा—"क्योंजी, तुम्हें इतने महीने यहाँ आए हो गए, तुम्हें एक दिन के लिये भी अपनी जन्म-भूमि का मोह नहीं हुआ?"

जूनिया ने उठकर उनका स्वागत किया, और कहा—"सलाम गुसाईंजी। क्या कहूँ, अनेक बार आप लोगों के दर्शन की इच्छा होती है। कुशल-समाचार तो आने-जानेवाले लोगों से पूछता ही रहता हूँ। छ दिन स्कूल ही हुआ, सातवें दिन जिसने छ दिन तक जीवित रक्खा, उसके गुण गाता हूँ। विराजिए।"

गुसाईंजी का लड़का इधर-उधर देख कुछ धीमे स्वर में कहने लगा—"जूनिया मास्टर! मेरी समझ में तो यह आता है, तुम अपना सारा स्कूल ही उठाकर वहाँ ले चलो। तुम्हारे पितरों की

जन्म-भूमि है । तुम्हारा रहा हुआ वह पुराना मकान और उसके आस-पास की सारी ज़मीन तुम्हारे नाम करा दूँगा ।"

जूनिया ने कुछ धीरज रखकर फिर कहा—"आप विराजिए न ।"

"नहीं, इस समय अभी एक जगह बड़े ज़रूरी काम से जाना है । चार-पाँच ही दिन के अंदर चले चलो ।"

"स्कूल लेकर ?"

"हाँ, स्कूल लेकर ।"

"यहाँ से वहाँ कैसे ले चलूँ । वहाँ चले जाने पर यहाँ का कोई भी लड़का नहीं आवेगा ।"

"आवेगा कैसे नहीं ? जिसे ग़रज़ होगी, वह ज़रूर आवेगा । इतनी मिहनत से पढ़ाते हो, फिर इतनी सस्ती फ़ीस ! मैं पंद्रह-बीस लड़के अपने गाँव और उसके आस-पास से ही तुम्हारे लिये जुटा दूँगा ।"

जूनिया बोला—"भाई, बात तो ठीक कह रहे हो । देखो, जैसा भी हो जाय ।"

"नहीं, पक्की हुई । मैं तुम्हारे मकान की मरम्मत करा लेता हूँ, और तुम शीघ्र ही तैयार हो जाओ ।" कहकर गुसाईंजी का लड़का बिदा हुआ ।

सानी बहुत दिन तक पति के लौट आने की राह देखती रही । वह समझती थी, समय के अंतर से क्रोध धुँधला पड़ जायगा, फिर मिट जायगा, और स्वामी लौट आवेंगे । इसी विश्वास से उसने जूनिया की बिदाई का घोर प्रतिरोध नहीं किया था ।

तीन महीने बीत गए, पर उनका कुछ भी पता नहीं । सानी कहाँ जाय, क्या करे । पति की चिंता में घुलने लगी । सोचती—मैं उनसे अगर चार-पाँच वक्त और कहती, रोकर कहती, ताड़ना दिखाकर कहती, उनके पैर पकड़ लेती, उनके पथ में गिर जाती, तो कदाचित् वह मेरी बात मान लेते ।

तीन महीने बाद जूनिया का क्रोध ज़रूर कुछ कम हुआ, लेकिन उसके पैर राजधानी की ओर आकृष्ट नहीं हुए। हाँ, उसने एक पत्र जेम्स के नाम भेज दिया कि मैं सकुशल चौमुखिया में हूँ, और यहीं रहूँगा।

पति के समाचार पाकर सानी की कुछ चिंता दूर हुई। जूनिया के वेतन के पच्चीस रुपए बाक़ी थे, वे मिशन से सानी को मिले थे। सानी ने उन्हें उसी दिन मनीऑर्डर द्वारा पति के पास भेज दिया।

पादरी साहब ने जब सुना कि जूनिया सब कुछ छोड़-छाड़कर चला गया, तो उनका दिल धड़कने लगा। वह मन में कहने लगे—कदाचित् मैंने जॉन से कठोरता से कुछ अधिक कह दिया।

हेडमास्टर साहब ने जब उन्हें जूनिया का इस्तीफ़ा दिया, तो पादरी साहब ने चिंता से पूछा—"जॉन आखिर चले कहाँ गए ?"

"किसी से भी कुछ नहीं कह गए।"

"स्त्री-पुत्र को भी कोई पता नहीं दिया ?"

"नहीं।"

"बड़ा अजीब मनुष्य था।"

"लेकिन मिहनती—"

"—ज़रूर था।"

"हेडमास्टर साहब, आपका क्या खयाल है, वह शराब पीता था ?"

"कुछ निश्चित नहीं कह सकता।"

"कभी देखा या कभी उसके बारे में सुना ?"

"नहीं, कभी नहीं।"

"उसकी संगति कैसी थी ?"

"उसकी कोई संगति ही नहीं थी। काम के बाद वह अधिकतर अपने घर ही पर दिखाई देता था।"

"लेकिन मेले के ऑफ़िसर साहब ने मुझसे बहुत ही स्पष्ट शब्दों में कहा था, चोरी की रात जॉन ख़ूब शराब पीकर नटनी का नाच देखने चला गया था, मैं आज आपसे कह रहा हूँ।"

"आपने यह जॉन से भी कहा था? उसने क्या सफ़ाई दी?"

"उसने कोई सफ़ाई नहीं दी, मैंने उससे बात भी पूरी खोलकर नहीं कही थी।"

"तो जान पड़ता है, कदाचित् कुछ भूल हो गई।"

"हम भूल के ही बने हुए हैं। उसके मालूम होने पर मुझे निःसंदेह पश्चात्ताप करना चाहिए। लेकिन ऑफ़िसर साहब को झूठ बात कहने से लाभ?"

"कोई लाभ नहीं। उन्होंने सुनी-सुनाई बात आपसे कह दी होगी। सानी चोरी की रात की घटना कुछ और तरह से बयान करती है।"

"क्या कहती है?"

"वह कहती है, रात को वे लोग सरकस देखने गए थे। छोल-दारी पर एक चौकीदार नियुक्त किया गया था। चोर या चोरों ने आकर, उस चौकीदार को कुछ खिला-पिलाकर बेहोश कर दिया, और सारा माल लेकर चंपत हो गए!"

"हूँ: ऐसी बात है!" कहकर पादरी साहब चिंता-मग्न हो गए।

"रात ही को पुलिस बुलाई गई थी। उसकी रिपोर्ट देखकर यथार्थ हाल जाना जा सकता है।"

"पुलिस को उस रात जॉन किस हालत में मिला?"

"रिपोर्ट से यह भी ज्ञात हो सकेगा।"

"सानी क्या कहती है?"

"सानी तो कहती है, जॉन स्वयं पुलिस को बुलाकर लाया, और रात-भर बहुत परेशान रहा।"

"उसने चौथे दिन आकर मुझे यहाँ मुँह दिखाया। उसे तीन दिन तक इस तरह छिपे रहने की क्या ज़रूरत थी?"

"वह छिपा नहीं, उसने वहाँ अपना प्रोग्राम पूरा किया।"

"प्रोग्राम पूरा किया?"

"हाँ, वहाँ के पटवारीजी ने आकर मुझसे सब हाल कहा था कि जॉन माल-असबाब खोकर, वहाँ बड़े कष्ट से रहकर भी प्रचार में पूरा उत्साह दिखाता रहा।"

पादरी साहब ने ठंडी साँस भरकर कहा—"तब ज़रूर कुछ भूल हो गई है, हेडमास्टर साहब!"

"हाँ, मैं भी यही समझता हूँ।"

"आप शीघ्र ही जॉन का पता लगाइए।"

"अच्छी बात है।" कहकर हेडमास्टर साहब विदा हुए।

पादरी साहब को जूनिया की डायरी की याद आ गई। उन्होंने उस दिन, क्रोध कुछ कम हो जाने पर, उन्हें फ़र्श पर से उठाकर रखवा दिया था, लेकिन कभी पढ़ा नहीं था। उन्होंने दोनो डायरियाँ निकालीं, और पढ़ने लगे। डायरियों से हेडमास्टर साहब के कथन की पुष्टि हुई। इसके बाद पादरी साहब ने पुलिस की रिपोर्ट की प्रतिलिपि मँगाने के लिये पत्र लिखा।

यथासमय रिपोर्ट आई, और उसने डायरी के लेख का ठीक-ठीक समर्थन किया। जूनिया के नशे में होने का कहीं भी उल्लेख न था, पर चौकीदार के बेहोश पाए जाने की बात का ज़िक्र ज़रूर था।

पादरी साहब ठंडी साँस भरकर कहने लगे—"एक अफ़वाह का विश्वास कर मैंने एक निर्दोष मनुष्य को बड़ा दंड दिया है। हे परमेश्वर, मुझे क्षमा कर।"

एक दिन हेडमास्टर साहब जूनिया का पता लेकर पादरी साहब के पास आए, और बोले—"जॉन चौमुखिया में है, उसका अपनी पत्नी के लिये पत्र आया है।"

पादरी साहब प्रसन्न होकर कहने लगे—"बड़ी ख़ुशी की बात है, कृपा कर जॉन के लिये पत्र लिखिए कि मुझसे भूल हो गई है, वह परमेश्वर के लिये मुझे क्षमा करें, और फ़ौरन् ही यहाँ चले आवें।"

जूनिया को सानी का पत्र और मनीऑर्डर मिले। मनीऑर्डर देखकर एक बार वह विचारने लगा, रुपयों से मुझे क्या करना है। फिर सोचा, सानी के कड़े अभी तक नहीं छुड़ा सका हूँ। जीवन की वह भूल अब तक ठीक हो जानी चाहिए थी।

उसने रुपए सँभाले, और उसी दिन स्कूल बंद कर पधान के गाँव चल दिया। शरीर कुछ भारी था, उसने परवा नहीं की।

पधान का लड़का जूनिया को देख, प्रसन्न हो बोला—"आओ, जूनिया मास्टर, अंत में तुम्हें कड़ों की याद आ ही गई।"

जूनिया बोला—"हाँ।"

"तुम्हारी पत्नी के हैं?"

"हाँ।"

"रुपए लाए हो?"

"हाँ, लाया हूँ।"

"सूद?"

"वह भी।"

पधान का लड़का जूनिया की सरलता से मुग्ध होकर कहने लगा—"लेकिन मैं तुमसे सच-सच कह देता हूँ। सूद कुछ भी न लूँगा।"

"क्यों?"

"बात ऐसी है। उनकी चाँदी खोटी तो नहीं, पर कुछ कड़ी ज़रूर है। मुझे उनके बीस रुपए देने को कोई भी तैयार नहीं हुआ, इसी से वे अब तक रक्खे रहे।"

जूनिया ने साश्चर्य कहा—"ऐसी बात है!"

पधान का लड़का कड़े निकाल लाया, और उन्हें जूनिया को देते हुए कहने लगा—"जुए में कदाचित् इनके बीस रुपए मुझे मिल जाते, लेकिन—"

जूनिया ने उसे बीस रुपए देते हुए कहा—"सूद भी कहो, तो मैं देने को तैयार हूँ।"

"नहीं, सूद न लूँगा।"

"तुम कुछ कह रहे थे?"

"हाँ, यही कि जुए में मुझे इनके बीस रुपए मिल जाते, लेकिन मैंने उसी रात प्रण किया कि अब कभी जुआ न खेलूँगा।"

"ठीक किया।"

जूनिया उसी समय चौमुखिया लौट गया, और तब अँधेरा हो गया था, जब वह अपने घर पहुँचा।

चौथा परिच्छेद

जन्म-भूमि

लौटकर उसे एक अजीब थकावट मालूम दी। सिर पहाड़ की भाँति कंधों पर भारी, हाथ-पैर मानो शेष अंग से अलग कर दिए गए हों। खाने को कुछ भी भूख नहीं। रास्ते-भर वह ठंडे सोतों का पानी पीता चला आया था।

लालटेन जलाकर उसने उजाला किया। उसे बड़ा जाड़ा मालूम देने लगा। खाना बनाना स्थगित कर उसने द्वारों पर साँकल चढ़ाई, और बिछाकर सो गया।

इसी समय किसी ने बाहर द्वार खटखटाया। जूनिया ने मुँह ढके-ढके पूछा—"कौन है?"

"अजी जूनिया मास्टर, सो गए क्या? अभी तो सात भी नहीं बजे हैं।"

जूनिया ने मुँह खोला। बाहर दो-तीन आदमी बातें कर रहे थे। जूनिया ने उनमें उस दूकानदार की आवाज़ पहचानकर मुख पर बड़ा कड़ुवा भाव अंकित किया।

"द्वार खोलो, तुम तो पूरे कुंभकर्ण बन गए!"

जूनिया ने पड़े-पड़े कहा—"भाई, आज जी अच्छा नहीं है। क्या काम है?"

"बड़ा ज़रूरी काम है, द्वार तो खोलो।"

जूनिया मन में कहने लगा—इनका ज़रूरी काम कुछ भी नहीं है। इन्हें मुझे छेड़ने में आनंद आता है। मैं अब

इनके बीच में नहीं जाता, इसीलिये ये मुझे दिक़ करने यहीं आ पहुँचे हैं।

वे फिर द्वार खटखटाने लगे।

जूनिया बोला—"बड़ी ज़ोर का बुख़ार चढ़ रहा है।"

लेकिन उन्हें विश्वास नहीं हुआ। वे फिर द्वार खटखटाकर बोले—"अजी, तुम्हारी शुद्धि की बातचीत करने आए हैं, बुख़ार भी दूर कर देंगे।"

जूनिया ने सोचा—ये इस तरह न जायँगे, द्वार खोलना ही पड़ेगा।

उसने उठकर द्वार खोला। लालटेन जल ही रही थी। तीन मनुष्यों ने प्रवेश किया, जिनमें से एक दूकानदार था। तीनो अंदर चटाई पर बैठ गए। जूनिया ओढ़कर दीवार के सहारे बैठा।

दूकानदार ने शेष दो मनुष्यों में से एक को इंगित कर कहा—"यह महाशय तुमसे बहस करने आए हैं। अगर तुम बहस में हार गए, तो तुम्हें शुद्धि करानी होगी, और अगर जीत गए, तो हम तीनो तुम्हारे चेले बन जायँगे।"

जूनिया कष्ट-पूर्वक कहने लगा—"देखो भाई, न तो मैं गुरुओं की खोज में हूँ, और न मुझे चेलों की ही तलाश है। मैं धर्म को बहस की चीज़ नहीं समझता। धर्म का अर्थ है सचाई। वह जहाँ भी है, मैं उसके आगे अपना माथा झुकाता हूँ।"

"अच्छा, तब तुम्हारी शुद्धि कर दें।"

"आप मुझे अशुद्ध क्यों समझते हैं? क्या जूनिया ने कभी किसी को झूठ बोलकर ठगा है? उफ़्! बड़ा जाड़ा लगता है।" कहकर जूनिया ने ओढ़कर सिर भी ढक लिया।

दूकानदार ने जूनिया के माथे पर हाथ रक्खा, और उसे इतना

गरम पाया कि सारी शरारत भूल गया; और साथियों से सरक जाने का संकेत करने लगा।

जूनिया ने फिर सिर खोला और कहने लगा—"जूनिया निःसंदेह अशुद्ध है। अगर आप लोग उसे ऐसा शुद्ध कर सकें कि उसे कभी कोई रोग न सता सके, ज़रा उसे मलीन न कर सके, और काल उस पर अपनी परछाईं न डाल सके, तो जूनिया भी शुद्धि के लिये तैयार है। बोलो, तुम्हारे मुँह में ज़बान है, तो उत्तर दो।"

सब चुप थे। दूकानदार ने कहा—"मास्टर, आज तुम्हारी तबियत ठीक नहीं। तुम आराम करो।"

जूनिया कहता जा रहा था—"धन्य हैं वे, जो विश्वास करते हैं। उन्होंने जैसा विश्वास किया, उनके लिये वही कर दिया गया। मसीह ने बीमारों के ऊपर हाथ रक्खा, और कहा, तुम्हें तुम्हारे ही विश्वास ने अच्छा किया, और वे बरसों के बीमार उसी क्षण उठकर अपने-अपने घर गए।"

दूकानदार उठते हुए कहने लगा-"ठीक है मास्टर, आराम करो। इस तरह से ज़ोर-ज़ोर से बातें करने से तुम्हारी तबियत और भी खराब हो जायगी। हम जाते हैं, लो, दरवाज़े में साँकल चढ़ा लो।"

जूनिया बोला—"अभी उठकर चढ़ा लूँगा। आप लोग तब तक उन्हें वैसे ही बंद कर चले जायँ।"

तीनो धीरे से दरवाज़ा ढककर चुपचाप खिसक गए।

जूनिया ओढ़कर फिर सो गया, और ज्वर से कराहते हुए विचार करने लगा—"इनसे पीछा छुड़ाने के लिये इनकी राह चलनी छोड़ दी, ये अब मेरा घर ही घेरने लगे हैं। बड़ी मुश्किल है! कहाँ जाऊँ? अगर किसी दिन मेरे स्कूल के वक़्त आ गए, और इन्होंने मुझे लड़कों के सामने परेशान किया, तो बड़ी आफ़त हो जायगी,

फिर लड़के मेरे क़ाबू के भी नहीं रहेंगे। जान पड़ता है, चौमुखिया का दाना-पानी भी समाप्त हो गया।"

वह रात-भर बुख़ार से बेचैन रहा। उसे उठकर साँकल चढ़ा लेने की भी सुधि न रही, और वह लालटेन बुझाना भी भूल गया।

दूसरे दिन इतवार था।

सुबह होते ही जूनिया के गाँव के गुसाईं का भेजा हुआ नौकर उसके यहाँ आया। जूनिया का बुख़ार बहुत कुछ कम हो गया था, वह उठ बैठा था।

नौकर बोला—"गुसाईंजी ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है। तुम्हारे मकान की मरम्मत करा दी गई है। उन्होंने तुमसे आज ही चले आने के लिये कहा है। बर्तन-बिस्तर जो कुछ भी है, मेरे सिर पर रख दो। मैं ले चलूँगा।"

"आज ही?" कहकर जूनिया उठ खड़ा हुआ, मानो वह रात-भर सुख से सोया हो।

"हाँ, बल्कि अभी। भोजन की व्यवस्था वहीं कर लोगे, यह भी उन्होंने कहा है।"

बुख़ार की दुर्बलता को दबाकर जूनिया बोला—"अच्छी बात है, पर मुझे ज़रा चौमुखिया के गुसाईंजी से जाते समय भेंट कर लेनी उचित है न?"

"लेकिन आप मुझे बोझ दे दीजिए, मैं सिर पर तब तक ले चलूँगा। नहीं तो गुसाईंजी नाराज़ हो जायँगे। कहेंगे, बड़ी देर लगा दी।"

जूनिया ने कहा—"अच्छी बात है। चटाइयों को छोड़कर और जो कुछ यहाँ रक्खा है, उसे ले जाओ। भारी तो न होगा, एक ही बार ले जा सकोगे न? घड़ा भी यहीं छोड़ जाना, तेल की बोतलें, लालटेन और वह किताब मैं ले चलूँगा।"

"बाँधने को यह रस्सी खोल लूँ।"

जूनिया ने बाइबिल बग़ल में दबाई। एक हाथ में पथ के समानांतर लाटी का मध्य बिंदु लिया, और उसी में लालटेन लटकाई, दूसरे से सरसों और मिट्टी के तेल की दो बोतलों के मुखों पर बँधी हुई डोरियाँ पकड़ीं।

जूनिया गुसाईंजी के पास जाकर उनसे विदा माँगने लगा।

गुसाईंजी कुछ नाराज़ होकर बोले—"तुम्हारी इच्छा है। जहाँ चाहो, जा सकते हो। लेकिन मैं अपने बच्चों को वहाँ नहीं भेजूँगा। मेरे छोटे-छोटे बच्चे, अगर मुझे आँखों की ओट में ही करने होंगे, तो नगर के स्कूल में न भेज दूँगा।"

जूनिया ने भी उदासीन होकर कहा—"जैसी आपकी इच्छा हो। बच्चे मुझसे हिल-मिल गए हैं; वहाँ दूर भी कुछ ऐसा नहीं है। बच्चों के लिये कुछ शारीरिक श्रम भी प्रतिदिन चाहिए ही।"

"तुम्हें तो सनक सवार हो जाती है। जिसने कुछ तारीफ़ों के पुल बाँधकर जो राह दिखा दी, तुम उसी पर चलने के लिये कमर कस लेते हो। आगे देखते हो, न पीछे।"

"लेकिन गुसाईंजी, मैं और भी एकांत में जाना चाहता हूँ। उसी के लिये राजधानी छोड़ आया हूँ—अपनी ही इच्छा से, किसी ने जाओ नहीं कहा। उसी इच्छा के वश होकर आज चौमुखिया छोड़ चला।"

"यहाँ तुम्हें क्या कमी नज़र आई? आनंद से विद्या का प्रचार कर रहे थे, गुज़र के लिये दो रोटी कमा रहे थे, और अपने प्रभु का स्मरण कर रहे थे। संसार की बुराई-भलाई से अलग अपना शांति-पूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे थे, वहाँ गाँव में क्या रक्खा है? पैसा होने पर भी तो कुछ नहीं मिल सकता। यहाँ दूकान में चाय

भी है, चीनी भी है, तेल भी है, तंबाकू भी है। वहाँ देखना, कैसा कष्ट भुगतोगे।"

"देखी जायगी गुसाईंजी। कष्ट तो ज़रूरत बढ़ा देने से है। जो कुछ न मिलेगा, मैं उसे ही छोड़ दूँगा। सेवक को न भूलिएगा। बिदा दीजिए, सलाम।" कहकर जूनिया चलने लगा।

गुसाईंजी ने अंतिम बार प्रयास कर कहा—"आखिर कहो भी तो सही, तुम्हें वहाँ कष्ट क्या था?"

"कष्ट?" कहकर जूनिया ने एक दीर्घ श्वास छोड़ी।

"हाँ-हाँ, कहते क्यों नहीं?"

जूनिया ने कष्ट की मुद्रा को करुणा में बदलकर कहा—"कुछ भी नहीं, गुसाईंजी, कुछ भी नहीं। जूनिया कष्टों के बीच में उत्पन्न हुआ। पला और बढ़ा भी वहीं। बूढ़ा भी वहीं हुआ, और अब मरकर उसी में मिल भी जाना चाहता है।"

गुसाईंजी बोले—"ये सामने के कुछ दूकानदार तुम्हें छेड़ते हैं। पढ़े-लिखे नहीं हैं, और न मनुष्यता ही इनमें है। इनकी कुछ परवा न करो। एक-आध वक़्त मैंने इन्हें डाँट दिया है, दो-एक मर्तबा और धमका दूँगा, सीधे हो जायँगे।"

जूनिया चुपचाप जाने लगा था।

गुसाईंजी फिर कहने लगे—"तुम्हें तो ऐसी जल्दी मची है, मानो सैकड़ों मील शाम तक तय करने हैं। जब जा ही रहे हो, तो जाओगे ही। कोई तुम्हें बाँधकर तो रख न लेगा।"

जूनिया फिर रुक गया।

गुसाईंजी उसके निकट आ, उसके कोट का बटन पकड़कर धीरे-धीरे कहने लगे—"सुनो, तुम्हारे गाँव के गुसाईं के दोनो लड़कों में वैर है।"

"वैर और मित्रता का जगत् है। मुझे उससे मतलब नहीं, कुछ सरोकार नहीं।"

"वह बड़ा चालाक है, उसकी गहराई का पता नहीं चलता। वह तुम्हें मतलब से ही ले जा रहा है। उस झगड़े के बीच में तुम्हें डाले बिना वह छोड़ेगा नहीं।"

"मैं न पड़ूँगा, साफ़ कह दूँगा।"

"बस, रहने दो। तुम्हें पता भी नहीं चलेगा, तुम कहाँ और किस वक्त खाई में गिर पड़े।"

"मैं आँखों से देखकर और हाथ-पैरों से टटोलकर चलूँगा।"

गुसाईंजी कुछ न कहकर अपनी दूकान के अंदर चलने लगे थे। सामने से जूनिया ने उसी दूकानदार को अपनी ओर बढ़ता पाया। जूनिया ने जल्दी से पैर बढ़ाए, और पथ के मोड़ में छिप गया।

जूनिया और उसका क़ुली प्रायः साथ-साथ गाँव में पहुँचे। अपने बाल-काल से संबद्ध दृश्यों को देखकर जूनिया के मन-प्राण पुलकित हो उठे।

जूनिया के आगमन के समाचार सुनकर गुसाईंजी स्वयं उसके पास चले गए।

जूनिया ने उन्हें आदर-पूर्वक सलाम किया।

गुसाईंजी कहने लगे—"मकान देख लिया? मरम्मत ठीक हुई है न? रहने को यहाँ हो गया। स्कूल के लिये एक कमरा गाँव में ही ठीक कर रक्खा है।"

जूनिया छत की ओर संकेत कर बोला—"बरसात निकट है। इस छत की मरम्मत नहीं हुई है। यह टपकेगी और बड़ा कष्ट देगी।"

गुसाईंजी ने अपनी भूल स्वीकार कर कहा—"हाँ, इसका ध्यान ज़रूर छूट गया। फिर भी क्या परवा है। तुम अपने हाथ

के काम करनेवाले हो। आज मास्टर हो गए, तो क्या? उसमें कुछ लज्जा ता है नहीं, अपने ही हाथ से ठीक कर लोगे।"

जूनिया ने कहा—"हाँ, ख़ुद ही कर लूँगा।"

गुसाईंजी बोले—"कुछ उदास प्रतीत होते हो। मुख मलीन और होंठ सूखे हुए दिखाई दे रहे हैं।"

"हाँ, रात में बड़ी ज़ोर का बुखार आया।"

गुसाईंजी ने चिंता-पूर्वक कहा—"अब कैसे हो?"

"अच्छा हूँ।"

"खाने को?"

"यहीं पका लूँगा।"

"अब इस समय कहाँ तकलीफ़ करते हो? दो रोटी घर ही से भेज दूँगा। भूख मालूम दे रही है न?"

"हाँ, कल रात भी नहीं खाया था।"

"खा-पीकर हमारे गाँव की ओर आ जाना। कमरा दे दिया जायगा, और लड़के भी बुलवा दिए जायँगे।"

"गुसाईंजी, आज इतवार है। इतवार को तो सदा स्कूल बंद ही रक्खूँगा। अब कल से ही सब कुछ आरंभ होगा। आज खाने-पीने के बाद तबियत ने साथ दिया, तो इस मकान की छत ठीक करूँगा। एक आदमी मदद के लिये भेज दीजिएगा।"

"अच्छी बात है, यही जो तुम्हारा सामान लाया है, इसे ही रोक लो। और भी जो कुछ काम हो, यह कर देगा। बीच में इसे खाने की छुट्टी दे देना।" कहकर गुसाईंजी विदा हुए।

नौकर ने जूनिया का सब सामान खोलकर मकान के अंदर रख दिया।

जूनिया बाहर दीवार पर बैठा हुआ दूर के खेतों, जंगलों, पहाड़ों और आकाश को देखता हुआ, अनंत विचार-सागर में डूबता-

उतराता जा रहा था। सुबह के आठ बजे होंगे। उसे धूप बड़ी प्रिय प्रतीत होने लगी। बैठे-बैठे कमज़ोरी मालूम देने लगी, तो वह दीवार पर लेट गया।

कुछ देर बाद जूनिया ने नौकर को खाने के लिये घर जाने की छुट्टी देते हुए कहा—"लौटते समय किसी राज से एक हथौड़ी माँग लाना। मेरे पास सब कुछ था। चौमुखिया के बढ़ई के यहाँ रख गया था। उस समय किसे मालूम था, उनसे फिर मतलब पड़ेगा। बढ़ई बेचारा मर गया, उसकी चीज़ें जिसकी दृष्टि में पड़ी होंगी, उसी ने हथिया ली होंगी।"

नौकर चला गया, और जूनिया उसी दीवार पर करवटें बदलता रहा। कुछ समय बाद गुसाईंजी के यहाँ से उसके लिये भोजन आया। उसने खा-पीकर बदन में कुछ बल का अनुभव किया।

नौकर भी हथौड़ा लेकर आ पहुँचा था। जूनिया ने उसे कुछ चिकनी मिट्टी सानकर गारा बनाने की आज्ञा दी, और स्वयं मकान की छत पर चढ़कर उसके पत्थरों को उखाड़ने लगा।

दिन-भर जूनिया तेज़ धूप में उसी छत पर रहा। उसने छत के पत्थरों को नए सिरे से जमाया। नौकर भी दिन-भर उसके लिये पत्थर और गारा ढोता रहा।

संध्या-समय जूनिया को फिर बड़ी ज़ोर का बुख़ार चढ़ा, और वह मकान के अंदर जाकर सो गया।

इसी समय उसे खोजते-खोजते पोस्टमैन ने आकर पादरी साहब का पत्र दिया। जूनिया ने ज्वर की दशा में ही उस पत्र को पढ़ा। उसकी आँखों से आँसू छलकने लगे। उसने आदर-पूर्वक उस पत्र को अपने तकिए के नीचे रक्खा, तकिए पर सिर रखकर फिर सो गया, और कहने लगा—"कदाचित् अब बड़ी देर हो गई है।"

पाँचवाँ परिच्छेद

"तेरी इच्छा पूर्ण हो !"

रात-भर जूनिया ज्वर से बेचैन रहा। उसकी हालत ख़राब देखकर क़ुली अपने घर नहीं गया, वहीं रहा। रात में उसकी खाँसी भी बहुत बढ़ गई थी।

सुबह ज्वर कम हो जाने के कारण वह उठ बैठा, और शौच आदि से निवृत्त हुआ।

क़ुली ने साश्चर्य कहा—"आप तो उठ बैठे ?"

जूनिया बोला—"नहीं तो क्या करता भाई ! आज से स्कूल खोलना है।"

"तबियत कैसी है ?"

"अच्छी है। बुख़ार तो इस समय है नहीं। छाती में दर्द मालूम देता है।"

"भोजन ?"

"उसके लिये बहुत रुचि तो है नहीं। गुसाईंजी ने, दो-चार दिन, जब तक मेरा स्वास्थ्य ठीक न हो जाय, वहीं खा लेने के लिये कहा है।"

क़ुली ने लकड़ियाँ बटोर, आँगन के एक कोने में चूल्हा बना आग जलाई। एक बाल्टी में पानी भर लाया। जूनिया ने चाय के लिये चूल्हे पर पानी रक्खा, कुछ काली मिर्चें कूटकर उसमें छोड़ दीं। चीनी पास में थी ही, क़ुली गुसाईंजी के यहाँ से कुछ दूध माँग लाया।

चाय पीकर जूनिया, क़ुली के साथ उठते-बैठते, गुसाईंजी के यहाँ पहुँच गया।

गुसाईंजी बोले—"कैसे हो?"

"अच्छा हूँ। आप स्कूल के लिये कौन-सा कमरा देंगे?"

"वही सामनेवाला, जिसमें चटाइयाँ बिछाई गई हैं। लेकिन तुम्हारे चेहरे—"

जूनिया गुसाईंजी के आँगन की दीवार पर बैठ गया, और स्वयं कहने लगा—"हाँ, मेरा चेहरा उतरा हुआ दिखाई दे रहा होगा, मुझे कल रात भी बुख़ार आया, खाँसी भी आई।"

"तो तुमने बड़ी भूल की, जो यहाँ तक चले आए। पैर में जूता भी नहीं।"

"कुछ भूल नहीं की। भूख मालूम देती है, कुछ खाऊँगा, और काम करने योग्य हो जाऊँगा।"

कहने को तो जूनिया यह सब कुछ कह गया, लेकिन उसके पैर काँपने लगे थे, और कहीं सो जाने की इच्छा प्रबलतर होने लगी थी। वह किसी प्रकार मन पर अधिकार किए रहा।

"आपने सब लड़कों के पास कल कहला दिया होगा कि ठीक दस बजे से स्कूल शुरू होगा?"

"हाँ।"

"ठीक किया। मैं वक़्त की पाबंदी को एक धार्मिक पाबंदी समझता हूँ। असल में ठीक समय पर काम करने की आदत हो जाना ही बहुत बड़ी शिक्षा है।"

गुसाईंजी किसी और मनसूबे में लीन थे। सिर हिलाकर बाहरी तौर पर कहने लगे—"हाँ।"

जूनिया दोनो हाथों को दीवार पर टेकते हुए कहने लगा—"कुल कितने लड़के होंगे?"

"आज पाँच-सात लड़के आवेंगे। खा-पीकर मैं आज आस-पास के गाँवों में जाकर तुम्हारे यहाँ स्कूल खोल देने की चर्चा करूँगा। पंद्रह लड़के हो जाना कोई बात ही नहीं। संभव है, और भी अधिक हो जायँ।"

जूनिया घर से चलते समय पादरी साहब की चिट्ठी जेब में डाल लाया था, निकालकर कहने लगा—"पादरी साहब की चिट्ठी आई है, लिखते हैं, फ़ौरन् राजधानी चले आओ।"

गुसाईंजी सँभलकर बैठे, और कहने लगे—"अच्छा !"

"आदमी बड़े नेक हैं।"

"लेकिन उन्हें यह मालूम न होगा, जूनिया ख़ुद स्कूल खोल सकता है। लिख दो, मैं नहीं आ सकता। अपनी जन्म-भूमि में ही शिक्षा का प्रचार करना मेरा पहला कर्तव्य है।"

"उनसे मेरी कोई शत्रुता नहीं। नगर में रहते-रहते जी घबरा गया, चला आया।"

"तो उन्हें क्या उत्तर देना विचारा है ?"

"यही कि मैंने यहाँ स्कूल खोल रक्खा है, उसमें मन लगा हुआ है।"

"साफ़-साफ़ लिख दो कि नहीं आ सकता।"

जूनिया ने मौन धारण किया।

गुसाईंजी कहने लगे—"चौमुखिया का गुसाईं तुम्हारे यहाँ आने पर क्या कहता था। अपने लड़कों को यहाँ भेजेगा या नहीं ?"

"कहते थे, वहाँ गाँव में जाकर क्या करोगे ! यहाँ हर बात का आराम है। लड़कों को नहीं भेजेंगे।"

गुसाईंजी का ध्यान हटकर दूसरी जगह चला गया, कहने लगे—"वह खेत देखते हो, न जिसमें अख़रोट का पेड़ है ?"

"हाँ, सिंचाई, स्थिति, विस्तार और उपज की दृष्टि से आस-पास के तमाम खेतों में श्रेष्ठ है।"

"यह मेरे हिस्से का था।"

जूनिया ने सिर हिलाकर प्रकट किया—"होगा।"

"भाई ने इस पर जबरदस्ती अधिकार कर लिया है, और कहता है कि यह खेत मेरा है।"

"जाने भी दो, तुम्हारे भाई ही ठहरे।"

"जाने कैसे दें जी! अधिकार भी तो कोई चीज़ है।"

"अजी, क्या एक ज़मीन के टुकड़े पर का अधिकार! लाखों-करोड़ों आए और चले गए। इस मिट्टी ने उन सबको अपने में मिला लिया, यह किसी के साथ नहीं गई। अधिकार कीजिए भलाई पर कि मृत्यु के बाद भी काम आवे।"

"जूनिया, तुम्हारा यह थोथा ज्ञान मुझे पसंद नहीं। तुम्हें व्यावहारिक जगत् की ओर दृष्टि डालनी चाहिए। परमेश्वर ने पेट दे रक्खा है, बाल-बच्चे दे रक्खे हैं, और भी अनेक आश्रित आस-पास जमा हैं। भलाई की जा सकती है। बची हुई रोटी दी जा सकती है, लेकिन पेट काटकर नहीं दिया जा सकता जूनिया मास्टर! पृथ्वी पर रहकर हमें पृथ्वी की ही बात करनी चाहिए।"

कुछ देर दोनों चुप रहे।

गुसाईंजी कहने लगे—"जूनिया मास्टर, अगर ज़रूरत पड़ी, तो तुम्हें मेरे पक्ष में साक्षी देनी पड़ेगी।"

साक्षी का नाम सुनकर, जूनिया घबराकर कहने लगा—"कैसी साक्षी!"

"यही, तुम्हें कहना होगा कि यह खेत मेरा है।"

"नहीं गुसाईंजी!" कहता हुआ जूनिया उठ खड़ा हुआ, पर उसे चक्कर आने लगा था, इसी से फिर बैठ गया।

"क्यों, तुम्हें आपत्ति क्या है ?"

"मैं परमेश्वर की आज्ञा के विरुद्ध नहीं जा सकता ।"

"उसकी क्या आज्ञा है ?"

"यही कि तू अपने पड़ोसी के ख़िलाफ़ झूठी गवाही न दे ।"

"मैं तुमसे कब झूठी गवाही देने के लिये कहता हूँ ?"

"मैं बरसों बाहर रहा, नहीं जानता, खेत किसका है ?"

"जुनिया, खेत मेरा ही है । तुम और भी अनेक मनुष्यों से पूछ सकते हो । कह देना, मैं बीच-बीच में गाँव आता-जाता था, इससे मुझे मालूम है, खेत का यथार्थ अधिकारी कौन है ।"

"यह साफ़ झूठ है, गुसाईंजी ! जूनिया मर जायगा, पर झूठी गवाही नहीं देगा ।"

सेवक कई बार भोजन का संदेश ला चुका था ।

जूनिया ने भी कहा—"साढ़े नौ बज चुके हैं, स्कूल का समय हो चुका ।"

गुसाईंजी बातें छोड़कर उठे । जूनिया के भोजन का बाहर ही प्रबंध कर ख़ुद भी खाने के लिये अंदर चले गए ।

जूनिया से कुछ खाया नहीं गया । ग्रास मुँह में रखते ही उबकाई आ जाती । किसी प्रकार थोड़ा-सा खा-पीकर जूनिया ने जो कुछ बचा था, उसे समेटा, और पास बँधी हुई गाय को खिला आया ।

हाथ-मुँह धोकर जूनिया स्कूल के कमरे में जा बैठा ! दस बजने में पंद्रह मिनट बाक़ी थे । अभी कोई विद्यार्थी नहीं आया था । उसे जाड़ा मालूम देने लगा । उसने सोचा, ज़रा देर चटाई पर लेटकर आराम कर लूँ ।

ज्यों ही वह लेटा, त्यों ही उसके दाँत कटकटाने लगे, और उसे ज्वर चढ़ने लगा । ज़रा देर बाद गुसाईंजी अपने दोनो बेटों को लेकर वहाँ आए ।

जूनिया को पड़ा देख चिंतित होकर कहने लगे—"जूनिया मास्टर ! कैसी तबियत है ?"

जूनिया उठ बैठा, कहने लगा—"और विद्यार्थी ?"

"उनकी क्या चिंता है, आदमी भेजकर बुलवा लेंगे, पर अपनी तो कहो, बैठ सकोगे ?" कहकर गुसाईंजी ने जूनिया के सिर पर हाथ रक्खा।

जूनिया—"कुछ देर बैठ सकूँगा।"

गुसाईंजी—"नहीं, तुम्हें बुखार चढ़ने लगा है। चलो, तुम्हें तुम्हारे घर पहुँचा देता हूँ।"

जूनिया लाठी और गुसाईंजी के सहारे चला। उन्होंने एक मज़-दूर भी अपने साथ ले लिया था।

घर पहुँचकर जूनिया बिस्तर पर पड़ा, और ज्वर में अचेत हो गया। गुसाईंजी उस मज़दूर को वहीं छोड़कर अपने घर चले गए।

चार दिन और चार रात जूनिया ज्वर से परितप्त रहा। भूख-प्यास के लिये कहना तो एक ओर, उसके मुँह से कोई शब्द ही नहीं निकला। गुसाईंजी से जहाँ तक हो सका, उन्होंने उसकी ओषधि का प्रबंध किया, लेकिन कुछ फल न हुआ।

पाँचवें दिन पादरी साहब का पत्र आया कि श्रीयुत जॉन, इस पत्र को तार समझकर फ़ौरन् ही राजधानी चले आओ।

संध्या-समय जूनिया को कुछ सचेत पाकर गुसाईंजी ने उसे पादरी साहब का पत्र सुनाया।

जूनिया के मुख पर अद्भुत प्रसन्नता दिखलाई दी। उसने कहा—"हाँ, फ़ौरन् ही राजधानी को चला आता हूँ। वहाँ मेरा प्रभु अपने पिता की दाहनी ओर बैठा है, उसके चारो ओर आलोक-ही-आलोक फैला हुआ है। पवित्र आत्माओं ने उसकी स्तुति के गीत गाए हैं।"

इसके बाद, कुछ देर चुप रहने पर, फिर उसने कहा—"सानी ! सानी ! तेरे कड़े ।"

वह फिर अचेत पड़ गया। गुसाईंजी घबराए। उन्होंने उसी वक्त एक आदमी को रात-ही-रात राजधानी भेजा, और सानी तथा जेम्स को बुलवाया।

छठे दिन प्रभात-समय उसे कुछ चेतना आई, और उसने कहा—"मेरे बटुए में कुछ रुपए हैं। उनसे किसी कोने में एक भूमि का टुकड़ा ख़रीद वहाँ मेरी क़ब्र बना देना। उस क़ब्र के निकट एक देवदारु का वृक्ष लगा देना, और एक पत्थर पर 'जूनिया—एक ग़रीब ईसाई' खुदवाकर उसके ऊपर रख देना।"

उसे फिर कुछ होश न रहा। संध्या को सानी और जेम्स आ पहुँचे। उनके साथ जूनिया के समाचार पाकर पादरी साहब भी चले आए थे। जूनिया की हालत देखकर तीनो शोक से अधीर हो उठे।

रात को फिर जूनिया को कुछ होश हुआ। उसने सानी को देखकर पहचाना, उसका मुख फिर प्रसन्नता से चमक उठा। उसने बहुत अच्छी तरह अपने सिरहाने हाथ डाला। वहाँ से सानी के दोनो कड़े निकाल उसे देते हुए कहा—"सानी, तुम्हारे दोनो कड़े।" इसके बाद उसकी दृष्टि पादरी साहब पर पड़ी। उसने उनका हाथ पकड़कर अपने माथे पर लगाया, और कहा—"मेरे स्वामी ! मेरे प्रभु !"

जूनिया को हिचकी आई, उसने पादरी साहब की गोद में प्राण छोड़ दिए !

सानी सिर पीटकर चिल्ला उठी—"स्वामी ! स्वामी !"

जेम्स अधीर होकर रो उठा—"पिता ! पिता !"

यथोचित संस्कारों के साथ पादरी साहब ने जूनिया की लाश

को दफ़न किया। उसकी अंतिम इच्छा के अनुसार वहाँ एक देवदारु का वृक्ष भी उन्होंने अपने हाथ से आरोपित किया।

सानी और जेम्स के साथ रास्ते-भर उन्हें धीरज देते हुए पादरी साहब राजधानी पहुँच गए।

महीने-भर बाद पादरी साहब ने स्वयं जाकर जूलिया की क़ब्र पर संगमरमर पत्थर रक्खा। उसे उन्होंने लखनऊ से तैयार करवा-कर मँगाया था। उस पत्थर के ऊपर एक संगमरमर का क्रॉस खड़ा था। पत्थर पर खुदे अक्षरों में सीसा भरा गया था। वे इस प्रकार थे—"इस पत्थर के नीचे जूनिया की नश्वर काया दबी है। वह सच्चा ईसाई था, उसके ऊपर परमेश्वर की शांति हो।" इसके बाद जूनिया के जन्म और मृत्यु के सन् अंकित किए गए थे। सबके अंत में अंकित था—"तेरी इच्छा पूर्ण हो!"

जेम्स का मन फिर पढ़ने-लिखने में लग गया। उसने अनेक परीक्षाएँ पास कीं। पादरी साहब ने उसे उसी स्कूल में मास्टर बना दिया। सानी समझती थी, पिता की इच्छाएँ पुत्र में परिपूर्ण हुई हैं।

लेखक की अन्य पुस्तकें

मदारी

[सचित्र उपन्यास]

प्रस्तुत पुस्तक में पहाड़ियों के जीवन की छटा और पर्वतराज हिमालय के प्राकृतिक सौंदर्य का पूरा आभास मिलेगा। इस उपन्यास का नायक एक पहाड़ी किसान का बेटा 'नवाब' और नायिका लोहार-किसान-कन्या कुमारी तितली। किंतु तितली के साथ विवाह करने के लिये नवाब को आठ सौ रुपए चाहिए। नवाब धन की प्राप्ति के लिये मदारी बनता है, फिर दवाफ़रोश होकर 'ताइज़ो'-नामक चाक़ूवाली के चक्कर में फँसकर हवालात की हवा खाता है। घटना-क्रम से ताइज़ो नवाब के पेट में छुरा भोंककर ग़ायब हो जाती है। भाग्य से नवाब बच जाता है, और अंत में अनेक आशा और निराशाओं के बाद वह अपने जीवन के स्वप्न को सच्चा करता है। मूल्य १।।), सजिल्द २)

संध्या-प्रदीप

इस पुस्तक में पंतजी की मौलिक कहानियाँ ऐसी परिमार्जित और सरल भाषा में लिखी गई हैं, जो अत्यंत रोचक हैं। मूल्य १), सजिल्द १।।)

बरमाला

यही प्रथम हिंदी-नाटक है, जिसे रेडियो में ब्राडकास्ट होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इसका अनुवाद गुजराती और तैलगू में भी हो चुका है। चार चित्रों से सुसज्जित। मूल्य ।।=), सजिल्द १=)

राजमुकुट

इसकी विशेषता है इसका मनोवैज्ञानिक विकास। हिंदी-नाटकों में यह पहला अवसर है, जब किसी नाटककार ने रसावेश को स्थायी रखते हुए कथानक की मर्यादा को नष्ट नहीं होने दिया है। मेवाड़ की वीरांगना पन्ना का कथानक। अनेक जगह सफलता-पूर्वक खेला जा चुका है। छठे संस्करण का मूल्य ॥।), सजिल्द १।)

प्रतिमा

[सचित्र उपन्यास]

पंतजी की लेखन-शैली ने हिंदी-संसार में धाक-सी जमा ली है। उन्हीं की शुभ लेखनी का यह एक ज्वलंत उदाहरण, उपन्यास के रूप में, पाठकों के सामने पेश है। पंतजी कुशल कलाकार हैं। आपकी लेखनी ने इस उपन्यास को बहुत सुंदर बनाया है—सभी अंगों से मनोहर, शिक्षा से परिपूर्ण। मूल्य १॥), सजिल्द २)

अंगूर की बेटी

प्रस्तुत पुस्तक रोचक और सामाजिक नाटक है। सफलता-पूर्वक रंगमंच पर अभिनय भी किया जा सकता है। मूल्य ॥[illegible]), सजिल्द १।=)

पता—गंगा-ग्रंथागार, ३६, अमीनाबाद-पार्क, लखनऊ